गांधी का मौनी राज्य

THE SILENT RULE OF GANDHI



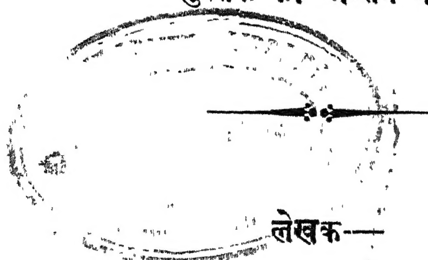
राजनैतिक क्षेत्र में भारी उथल-पुथल

मचा देने वाली

अप्राप्य विषयों की क्रान्तिकारी पुस्तक

["दिल्ली किसी की नहीं" नामक अप्रकाशित

पुस्तक का अन्तिम भाग]



लेखक—

बद्री प्रसाद सिनहा



प्रथम संस्करण] १९४६ ई० [मूल्य ३)

प्रकाशक—
बद्री प्रसाद सिनहा
कीटगंज़, प्रयाग।

पुस्तक मिलने का पता—
त्रिलोकीनाथ एण्ड कम्पनी
कामता प्रसाद कक्कड़ रोड
इलाहाबाद

मुद्रक—
चिन्तामणि हटेला
हिन्दू समाज प्रेस,
कीटगंज, प्रयाग।

दो शब्द

सन् १९२० ई० में जब अंग्रेजी स्कूल जोरों से बायकाट हो रहा था, क्रिश्चियन कालिज प्रयाग के हेडमास्टर हैजेलेट साहब ने प्रार्थना में कहा कि "मुझे गर्व है कि मेरे स्कूल से किसी विद्यार्थी ने अब तक स्कूल छोड़ने की हिम्मत नहीं किया"। दूसरे दिन मैं अपने क्लास के २५ लड़कों को लेकर निकल आया और तिलक विद्यालय में अपने अभि-भावक की मंशा के विरुद्ध नाम लिखवा लिया। साल भर तक चरखा और झण्डा के साथ हड़ा-कुड़ी करता रहा। विद्यालय टूट गया। मैं सरकार द्वारा स्वीकृत किसी स्कूल में भरती न हो सकूं, इसके लिये शायद शिक्षा विभाग की हिदायत थी। अपने स्कूल कायस्थ पाठशाला में जबरदस्ती बिना नाम लिखाये पढ़ने लगा। १० माह के बाद मजबूरन प्रिन्सिपल संजीवाराव के प्रसन्न होने पर नाम लिखा गया। एफ० ए० तक वहीं लगातार तालीम पाई। किन्तु कांग्रेस का कुछ न कुछ काम भी करता रहा। सन् १९२८ ई० में मुझे स्थानीय जिला काँग्रेस ने जिसके प्रेसीडेन्ट डा० काटजू साहब थे, जबरदस्ती मेरे ही ताल्लुकेदार के खिलाफ चुनाव में खड़ाकर दिया। किन्तु मदद रत्ती भर न दिया। बल्कि उल्टे अप्रत्यक्ष रूप से ताल्लुकेदार से काँग्रेस वाले मिल गये। छोटे नेहरू अपरिवर्त्तन वादी कह कर हाथ खींच लिया। नेहरू चौथे ही दिन म्युनिस्पिल बोर्ड प्रयाग की चेयरमैनी के लिये खड़े हुये। एक सरकारी आदमी के मुकाबिले में एक वोट से हार गये। काटजू साहब डि० बोर्ड के चेयरमैनी में सरकारी पिट्ठू राजा से हार गए। प्रयाग की प्रसिद्ध रामलीला बाजा के प्रश्न के कारण बन्द हो गई थी। पं० कपिलदेव मालवीय और स्वर्गीय महामना मालवीय आदि

कतिपय हिन्दुओं ने प्रयत्न किया, सत्याग्रह की धमकी दी, किन्तु निष्फल रहा। मैं सन् १९२९ से रामलीला के काम में आगे आया। सब ने हाथ खींच लिया। सहायता के बजाय विरोध किया, मैं अकेला रह गया। किन्तु धीरे धीरे हर कुवार मास में अपनी डफली बजाता रहा। अन्त में सन् १९३ ई० रामलीला कराने में सफलता हुई। चुनाव के समय का स्थानीय काँग्रेस-मैनों के प्रति दबी हुई घृणा, रामलीला के समय के कटु अनुभव ने मुझे काँग्रेस से घृणा करने के लिये काध्य किया। काँग्रेस की घृणित स्थानीय दल बन्दी ने जो आज तक चला जा रहा है, मुझे काँग्रेस के सक्रिय कार्य से अलग हट जाने के लिए मजबूर किया। किन्तु मैं काँग्रेस का चार आना वाला मेम्बर बराबर अब तक बना रहा। हालाँकि मैं नगर हिन्दू सभा, जिला हिन्दू सभा तथा प्रान्तीय हिन्दू सभा का मंत्री अथवा प्रचार मंत्री का काम भी करता था। हिन्दू सभा से भी घृणा हो गई। सन् १९३९ ई० में प्रयाग में साम्प्रदायिक झगड़ा बढ़ा। कीटगंज स्थित काली माई के मन्दिर का घंटा घड़ियाल का बाजा भी मुसलमानों ने बन्द करा दिया, जनता ने विवश किया, फिर हिन्दू सभा खोल कर आगे बढ़ा। मन्दिर का कार्य्य भी सफल हुआ। उसी समय गाँधी जी और सुभाष बोस का झगड़ा बढ़ा। मैं सुभाष बाबू को ही वास्तविक नेता मानता था। इस झगड़े से मैं गांधी जी का इतना शत्रु हो गया कि बाज वक्त विवाद में उनके विरुद्ध अपशब्द भी कह देता था। बदायूं प्रान्त में नगला शर्की शहर से मिला हुआ हिन्दू ठाकुरों का एक गांव है। कलेक्टर मि० निकोलसन के हठ के कारण हिन्दुओं को गांव छोड़ देना पड़ा। प्रान्तीय हिन्दू सभा के मंत्री के नाते मुझे वहाँ आन्दोलन के लिये जाना पड़ा। आन्दोलन इतना बढ़ा दिया कि संभलना मुश्किल हो गया। संभालने के लिये डा० बी० एस०

मुंजे आये उनके साथ गवरनर के पास डेप्टेशन ले गया। नगला शर्की के लोग अपने अपने घर वापिस आये। किन्तु मेरे ऊपर कलेक्टर इतना जल उठा था कि मुझे १५१ और १ ४ दफा में फांस दिया। साल भर तक स्पीच न देने और वदायूँ प्रवेश न कर ने की सजा मिली। मुझे इस मुकद्में के सिलसिले में प्रयाग से बदायूँ जाना पड़ा था इसी समय नेता जी सुभाष बोष काँग्रेस से अलग होकर आगामीदल की ओर से दौरा करते करते बदायूँ पहुंचे, मैं और वह सेवाआश्रम एक ही कमरे में ठहराये गये। बातचीत हुई। गांधी जी का मैं कभी न सुधरने वाला शत्रु हो गया। दिनरात उनकी बुराई ही करना मेरा एक काम था। मैंने एक के बाद दूसरे सब संस्थाओं को छोड़ दिया। किन्तु गांधी और उनके साथियों को जहाँ भी अवसर पड़ा बिना चार बात सुनाये न माना। केवल इसी नादानी के कारण मैं अपने सैकड़ों दोस्त, सहकारियों के विरोध का शिकार बन गया। सन् १९४० से मैंने सार्वजनिक काम से बिल्कुल ऐसा हाथ खींच लिया, गोया मैं कभी सार्वजनिक जीवन में था ही नहीं, किन्तु पत्रों द्वारा देश की राजनीतिक प्रगति की वाकफियत रखना नहीं छूटा।

मुझे लोग विचित्र आदमी (Mysterious man) समझने लगे। मेरा मत किसी से नहीं मिलता था। लेकिन मुझसे बहस करने की हिम्मत भी बहुत कम लोग करते थे। ऐसा ही ६ साल का समय बीता। न मैं किसी संस्था से घृणावश सम्बन्ध रखता था, न घर का कोई काम ही करता था, न बाल बच्चों का ही ध्यान रखता था। मेरी कुछ अजीब दशा थी। प्रकृति हमारी धार्मिक हो गई। उपासना की ओर झुकाव गहरा हुआ।

छः साल इस तरह बीतने पर अन्त में दो सितम्बर आया। सब खुशी मनाते थे। मैं तटस्थ था और खिल्ली उड़ाता था। तीन सितम्बर को मैं एक दम तबदील हो गया। मेरे सब बिचार

एक एक करके फिल्म की तरह सामने आने लगे। दूसरे दिन मंगलवार मेरे व्रत का दिन था। गङ्गा जी के तट पर बैठा था। पूजा पाठ तो कर न सका, बस गांधी जी का ही ख्याल जबरदस्ती मेरे दिमाग मैं आता रहा। पैदल ही घर आया। घर आते २ मेरे दिमाग में वह सब बिचार उत्पन्न हो गए जो इस किताब में है। इस ६ साल में मेरा स्वभाव चिड़चिड़ा हो गया था। घृणा करते करते मैं स्वयं घृणा का पात्र हो गया था। किन्तु तीन सितम्बर को मैं बिल्कुल शान्त था, जैसे कोई भूत वाधा मेरे सर से टल गई हो।

शाम को टहलने निकला। गाँधी जी की वावत मेरी बातों को सुनकर लोग अवाक रह गये। दोस्तों में एक चर्चा चल पड़ी। साम्प्रदायिक झगड़ा जोर पर था। मेरी बातों को सुन कर लोग मेरा मुंह ताकने लगे। मित्रों ने मजबूर किया कि मैं इन बिचारों को पुस्तक का रूप दूं। मैंने सुनी अनसुनी कर दी। तीन चार रोज तक उन्होंने मुझे मजबूर किया। सोचने लगा कि वाद विवाद, व्याख्यान तो बहुत दिये, कलम तो उठाया नहीं। कैसे होगा। खैर लिखने की ठानी किन्तु आपदा, कठिनाई, असुविधा तथा असमर्थता आगे आगे थीं।

आपदा

मेरे ऊपर फैजदारी के इस वक्त चार मुकदमे चलते थे। एक जरायम पेशा वाले डाकू के लिए भी एक ही समयमें इतने मुक़दमे का मुकाबिला करना असह्य है किन्तु मैं तो फँसा था। बात यह थी कि प्रयाग के सिनेमा यूनियन ने सिनेमा के एक मालिक के अत्याचार, जुल्म और कफन घसोट नीति के विरुद्ध हड़ताल कर दी। पब्लिक जो पहिले ही से नाराज़ थी मौक़ा पाकर तोड़ फोड़ कर दी। बस फिर क्या था, मालिक सिनेमा ने झूठा मुकदमा

चलाने की सोची। रुपया था ही। सिनेमाबाज़ मेजिस्ट्रेट, और पुलिस हाथ में थी। मुकदमा बन गया। एसी दशा देखकर हड़ताल के अगुआ लोगों ने किनाराकशी की। १८ गरीब सिनेमा नौकरों पर जिसमें विद्यार्थी, तथा अधिकांश बाहर के रहने वाले थे फँसाये गये। समझौता हुआ। कर्मचारियों की मांगों को स्वीकार किया गया। तीन बार मालिक ने धोखा दिया। कर्मचारी लोग काम पर गये तो गिरफ्तार करा दिया। बा० पुरुषोत्तम दास टण्डन ने समझौता कराया। दोंनो तरफ़ से दस्तख़त हुआ किन्तु समय पाकर उस समझौते को भी रद्द कर दिया। उसे तो परेशान करना था। विरोध के कारण मुझे इस हड़ताल का अगुआ बताया। क्योंकि मैं यूनियन का मंत्री था। सब के ऊपर एक एक, मेरे ऊपर चार मुकदमा अलग अलग बलवा, तोड़ फोड़, आग लगाने आदि का चलाया। गरीबों की जीवन वृत्ति तथा भविष्य के कर्मचारियों का प्रश्न था मैं आगे आया। २० मई से २० नवम्बर तक बराबर मुकदमे की तारीखें पड़ती थीं। आज २० नवम्बर को तीन मुकदमे अपने पक्ष में खतम हुये, अब एक शेष है। मेरे अतिरिक्त और सत्तरह आदमी जो फँसाए गये हैं मेरे सहायक नहीं बल्कि भार हैं।

कठिनाई

मैं लेखक नहीं! कागज़ नहीं। प्रेस मेरठ कांग्रेस के लिये पुस्तकें छापने में संलग्न। साम्प्रदायिक झगड़ा जोरों पर चल रहा है। २१ मई से १९ मई तक बीच में कुछ दिन छोड़कर बराबर १४४ धारा और करफ्यू आर्डर का भरमार था। वह भी कभी कभी चार चार दिन के लिए चौबीस घंटे तक लगा रहता था। घर से निकलना मुश्किल, जीवन संशकित, चलना फिरना छुरी भुँकाई के मारे बन्द। ऐसे ही समय में एक मेरा छोटा

लड़का बहुत बीमार पड़ गया। घर का अकेला ही देख रेख करने वाला। एक लड़का भी उत्पन्न हुआ। अर्थहीन के लिए पुत्रोत्पत्ति भी प्रसन्नता नहीं आपदा थी।

मित्रों के विवश करने पर, और गांधीबाद के प्रसिद्ध लेखक बा० रामनाथ 'सुमन' के उत्साह दिलाने पर तथा भाई त्रिलोकी नाथ जी, जो कागज़ मर्चेन्ट हैं, उनके प्रेस आदि की सुविधाओं की जिम्मेदारी लेने पर २० सितम्बर को कलम उठाई। गिरते पड़ते आज २० नवम्बर को १२ बजे रात किताब समाप्त किया और बा० चिन्तामणि जी मालिक हिन्दूसमाज प्रेस ने रात दिन परिश्रम करके किताब छापा।

विश्वास दिलाता हूँ कि इस पुस्तक के लिखने की मंशा न धन है, न प्रशंसा है और न यश की कामना है। मैंने तो इसे स्वान्तः सुखाय लिखा। मेरे मित्रों को मुझे अब समझने में अगर सुविधा होगी तो परिश्रम सफल समझूंगा।

समालोचक लोग भाषा, लेखन शैली, प्रेस की गल्तियों पर ध्यान न देकर विचार धारा पर ही ध्यान देंगे तो मेरे साथ न्याय करेंगे। क्योंकि किताब दो महीने में वह भी जब समय मिला, लिखी गई और छापी गई।

—लेखक

विषय सूची

गांधी का मौनी राज्य

पहली सितम्बर का प्रभात

आज हिन्दुस्थान में कौन अभागा व्यक्ति होगा जो कल के प्रभात की प्रतीक्षा न कर रहा हो। उसी कल की प्रतीक्षा में, आज जिस ओर देखिए, जहाँ देखिए, शहर में गाँव में, गली कूचे में, घर घर में, हिन्दू-अहिन्दू, जिमींदार किसान, पण्डित नादान, औरत मर्द, बुड्ढा जवान, बच्चे विद्यार्थी, पण्डा पुजारी, मुल्ला मदारी, महाजन भिखारी, स्वामी असामी, साधु असाधु सबकी जबान पर, और कान में, "कल होंगे राजा राम" की गगन चुम्बी ध्वनि, दिग दिगान्त में गूँज रही है। क्यों?

क्योंकि, जिस जाति ने विश्व की विजयिनी शक्तियों को जन्म दिया, जिसने जल, थल, अन्तरिक्ष और आकाश में अपनी विश्व-विजयिनी सेनाओं द्वारा पृथ्वीतल को दुराग्रही राक्षसों से शून्य कर डाला था। जिसके प्रबल प्रताप ने संसार में राम राज्य स्थापित किया था, और जो गत ९०० बरसों से काल बली के हाथों कुचली जा रही थी, आज वह जागने के लिये करवट बदल रही है। आज उसका प्रभात है। उस जाति के सिर पर से तलवार

उतर गई है। इसमें आज वह यौवन दीख पड़ने लगा है, जो भारतीय सनातन राष्ट्र में शोभा की वस्तु हो सकती है।

कल जो ब्राह्मण अपने ब्राह्मणपने में ऐंठ कर कलावत्तू हो रहे थे। क्षत्रिय जो अपनी ठकुरास के जोम में धरती पर पैर नहीं रखते थे, वैश्यों को अपने चोर बाज़ार से उपार्जित नोट और गिन्नियों ने १० बोतल शराब का नशा चढ़ा रखा था। शूद्र इन तीनों के मार से बदहवास अलग पड़ा था, आज वे सब एक दम निस्तब्ध और स्तब्ध खड़े पश्चिमी बनियों का ध्यान छोड़ अस्थि-चर्मावशिष्ट पूर्वी बनिये का मुँह ताक रहे हैं।

कल जो अंग्रेज जाति एक क्षुद्र एकान्त और सुदूर देश में जन्म लेकर अपनी राजनैतिक मुठमर्दी के बल से समस्त वसुधा के चतुर्थांश को बेधड़क भोग रही थी। जिसने पिछले चार सौ बरसों से समस्त यूरोप और एशिया की नाक में दम कर रखा था। और यूरोप के भारी से भारी अजेय वीर बिस्मार्क, कैसर, स्पेन के जहाजी बेड़े और नेपोलियन से लोहा बजा कर उस पर विजय पाई थी। जिसकी आकांक्षाओं ने वर्तमान विश्व के सर्वश्रेष्ठ महत्वाकांक्षी हिटलर, मुसोलिनी तथा ईश्वर अवतार मिकाडो (जापानियों के मत से) की जगत को थर्रा देने वाली सत्ता को परास्त कर अपनी मूछों को आसमान तक ऊँचा कर लिया था। जिसके केवल १५०० आदमी ४० करोड़ नर नारियों से भरे हुए विशाल भारत को उँगली पर मदारी के बन्दर की भाँति सफलता पूर्वक ताता थेइया करा रहे थे।

जो सारी पृथ्वी के नृपतियों के राजमुकुटों को धड़ाधड़ धारा-शायी होते देखकर कल तक लेश मात्र भी विचलित नहीं हुए थे। और कल तक जिस भारत के करोड़ों नर नारी उसके क्षमा, कृपा, अनुग्रह, अनुकम्पा और दया के प्रार्थी रहा करते थे। उस प्रार्थना में ज़रा भी त्रुटि रह जाने पर कितने ही लोग फांसी के आखेट हो गए थे, कितने ही कालेपानी के कोल्हुओं में बैल की भांति आँख पर छपनी लगाए जीवन यापन कर रहे थे। कितने ही की छातियों में गोलियाँ आर पार हुई थीं। कितने ही के गर्म खून में ठंडे छर्रें कसक रहे थे। वे आज निर्भय आज़ादी की सांस ले रहे हैं। और विश्व का चक्रवर्ती सम्राट और उसके सलाह-कार अपनी राजनैतिक चूक पर विश्वविजयी चर्चिल के साथ हाथ मल मल कर पछता रहे हैं।

यह आज क्या वस्तु है? यह आज एक झोंके के समान है जिसने भारत को अँगड़ाई लेकर गहरी साँस लेने के लिये बाध्य कर दिया। यह आज प्रकाश की एक किरण के समान है, जिसने घटाटोप अन्धकार को चीर दिया, और हमारी आँखों का परदा हटा दिया। यह आज एक आँधी के समान है जिसने सब चीजों को समूल हिला दिया, विशेषतः लोगों के विचारों को। फिर यह आज है क्या वस्तु। यह आज जादू है, सट्टा है, टोना है, मँत्र है तँत्र है अथवा इन्द्रजालिक खेल है, क्या है? यह आज, विगत कल का पुत्र, और आगामी कल का पिता है। यह आज, अंग्रेजों द्वारा बिछाए हुये राजनैतिक शतरँज के विसात

पर एक लंगोटीबन्द गाँधी द्वारा मात खाने का परिणाम स्वरूप है।

राजनैतिक शतरंज

भारतीय स्वतन्त्रता युद्ध के राजनैतिक शतरंज के खेल में एक ओर क्षीणकाय पूर्वी बनिया गाँधी है जो बहुत ही दुबला पतला साधारण पुरुष है। सूखी हड्डियों पर केवल चमड़ी का लेप है, न सिर पर टोपी, न पैर में जूता, जिसकी कमर में केवल मोटिया खद्दर का एक टुकड़ा है। और उसके हाथ में शस्त्र की जगह चार अंगुल की एक पेन्सिल है। जिस पेन्सिल से एक रद्दी लिफाफे के टुकड़े पर चार शब्द लिख देता है, और बिजली की तेजी से उन शब्दों का प्रभाव संसार के कोने २ में किसी न किसी रूप में दिखाई देता है। इस खेल में वह एक तरफ सिर्फ अकेला है। वह अकेला ही चाल सोचता और अकेला ही चाल चलता है। इसके विरुद्ध चाल चलने में यदि लेश मात्र भी गलती हो जाय तो अपने ही घर के लोग तालियाँ बजाकर हड़ाकुड़ी करने को तैयार है। इसमें केवल "सेवा" का गुण प्रधान है।

खेल के दूसरी ओर एक भीमकाय, प्रतापी चक्रवर्ती, पच्छिमी बनियों का सरदार अंग्रेजी सम्राट है, जिसका शासन अभेद्य है। जिसका सहायक सारा संसार है। उसके अधिकारीगण आज्ञाकारी हैं। और जो तीन गुणों—ज्ञान, बल तथा धन से सुसज्जित। हैं जिसने अपने बाहुबल से, अपनी साहसिक भावना,

अपनी कूटनीति और परिस्थितियों के भौगोलिक दबाब तथा ऐतिहासिक बल, जीवन के लिए निरे संघर्ष द्वारा एक साम्राज्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त कर ली है, जिसमें कहा जाता है कि सूर्य्य कभी नहीं डूबता। जिसकी राजनीतिक चालों के फल स्वरूप उसके साम्राज्य में सूर्य्यास्त नहीं होता। जिसकी भृकुटि के इशारे पर विश्व का राजनैतिक सूर्य्य अस्त और उदय होता है।

यह खेल भारतीय रंग मंच पर आज लगभग तीस साल से खेला जा रहा है। अकेले खिलाड़ी के लिए तीस साल की मुद्दत एक बड़ी लम्बी अवधि है। गाँधी कभी हटता, खसकता, कभी थोड़ा आगे बढ़ता, अगल, बगल, ताक झाँक करता कभी हिमालय से बड़ी गलती करता हुआ अपने मुहरों को अक्षुण्य बचाते हुये आज दूसरी सितम्बर को वह दाँव चल गया कि अंग्रेजों का वज़ीर मार लिया, और साथ ही साथ अपने एक जवाहिर नाम के पैदल को उसके वज़ीर के स्थान पर डटा दिया, जो अब पैदल की सीधी चाल को छोड़कर कल से वज़ीर की टेढ़ी चाल चलेगा। गाँधी अभी अंग्रेजों को शह नहीं दे सके हैं। इसका कारण उनकी दाँव पेंच और चाल की त्रुटि नहीं, बल्कि बिसात पर वह मुहरा ही नहीं है, जो शह देने के लिए आवश्यक है। वह अभी देश के बाहर है। उसकी अविकल-प्रतीक्षा है। वह मुहरा है "सुभाष बोस।"

इस दूसरी सितम्बर का महत्व तब स्पष्ट होगा जब पाठकों

को यह मालूम हो कि गाँधीजी के पहिले कितने ही बड़े २ मुखियों ने हिन्दुस्तान को जगाने की कोशिशें कीं, लेकिन वह गाँधी जी के ही जगाने पर क्यों जागा। क्योंकि हमारी अब तक की दासता का कारण केवल "आत्म अज्ञान था।"

दासता का कारण आत्म अज्ञान

आज से नहीं दस बीस दिन से नहीं, दस बीस साल से नहीं, सौ दो सौ साल से नहीं, बल्कि लगभग ५००० वरसों से हिन्दू राष्ट्र उत्तरोत्तर अधःपतन के खड्ड में लुढ़कता जा रहा है। मर्य्यादा पुरुषोत्तम राम द्वारा स्थापित किया हुआ, षोडष कला के अवतार भगवान् कृष्ण द्वारा सुचारु रूप से संचालित, तथा धनुर्धर अजेय अर्जुन द्वारा रक्त से रंजित किया हुआ हिन्दू राष्ट्र आज तक विधर्मियों की गुलामी का शिकार बना हुआ है। ग्रीक, सिथियन, हूण, ग़ज़नो, गोर, तातार, मुगल, पठान, अफगान आदि जिसने चाहा, जिस स्थान पर चाहा, जिस प्रकार चाहा, राम राज्य भोगी प्रजा का रक्तपान किया। इन विदेशियों ने किस स्वतंत्रता से हिन्दू राष्ट्र पर अनाचार किए, यह एक ग़जनी के ही आक्रमणों से पता लगता है। यह तीस बरस तक लगातार भारत को अकेला ही मनमानी रौंदता रहा। केवल ग़जनी ही नहीं, बल्कि तैमूरलंग, औरंगजेब और नादिर शाह आदि कतिपय विदेशियों ने किस आज़ादी से भारतीय

राष्ट्र को गारत किया, आज यह बताने की आवश्यकता नहीं है। प्रतापी प्रताप का चित्तौर आज भी हिन्दुओं के सामने धाँय धाँय दहक रहा है। धर्मयज्ञ की आहुतियाँ, सतीत्व पर बलिदान होने वाली पद्मिनी, जवाहिर, तारा, लक्ष्मी बाई और दुर्गावती आदि देवियाँ आज भी अपने आत्मोत्सर्ग तथा बलिदानों के लिए पूजी जाती हैं। किन्तु यह सब होते हुए भी क्या हिन्दू राष्ट्र का यथेष्ट लाभ हुआ? नहीं, कदापि नहीं।

इसी के विरुद्ध आज जब हम विश्व का इतिहास पढ़ते हैं तो देखते हैं कि एक नेपोलियन ने समस्त यूरोप को विजय किया, अकेले लेनिन ऐसे वीर ने रूस जैसे साम्राज्य को दासता के डोढ़ से निकाल कर आज़ादी के ऊँचे शिखर पर बिठा दिया। अकेले वाशिंगटन ने अमेरिका में स्वतंत्रता की ध्वनि ऊँची कर दी। अकेले गेरीवाल्डी और मेज़िनी ने इटली को स्वतन्त्र कर दिया। और वर्तमान समय में भी डिवेलरा ने आयर्लैंड को, मुसोलिनी ने इटली को, मुस्तफा कमाल पाशा ने टर्की को, अकेले हिटलर ने जर्मनी को सर्वोच्च स्थान दिला दिया। फिर भला कहिए। हमारे रणबांकुरे पृथ्वीराज, हमारे भीष्म व्रतधारी, राना-प्रताप, धर्म पर शहीद होने वाले गुरु-गोविन्द सिंह तथा शिवाजी ऐसे वीर त्यागी होकर भी हिन्दू राष्ट्र को गुलामी से न बचा सके। और तो छोड़ियेआज जब स्वतंत्रता संसार में चारो ओर सस्ती बिक रही है; भारत का हिन्दू राष्ट्र बद से बदतर होता जा रहा है। क्यों? क्योंकि हिन्दू जनता प्याज के गट्ठे की तरह है। प्याज के गट्ठे को

उकेलते छीलते जाइए। केवल छिलका और गोल ढक्कनदार छिलका निकलेगा। लेकिन अन्त में कुछ नहीं मिलता, केवल कुछ गट्ठा और छिलका २ रह जाता है। यही दशा हिन्दू राष्ट्र की है। ऊपर से देखने में यह राष्ट्र प्याज के गट्ठा की भाँति अति चिकना और सुन्दर है। कहते हैं इसके अनुयायी २७ करोड़ हैं, किन्तु इस पर बलिदान होने वाले केवल मुट्ठी भर आदमी हैं। हिन्दू राष्ट्र के नाहर लाला हरदयाल ने एक बार कहा था कि "हिन्दू दिमाग गर्म और नर्म भाव की योजनाओं को बड़ी सुन्दरता तथा विवेचना पूर्वक तैयार कर सकता है, परन्तु हिन्दू हृदय ठण्ढा है और हिन्दू अन्तः करण अकर्मण्य और आलसी है। यही वास्तविक रोग है। बुद्धि बल का अभाव नहीं है, किन्तु जिस बल का हममें अभाव है वह चरित्र बल है।" वह फिर आगे कहते हैं कि "केवल राजनैतिक सिद्धान्तों का अनुसरण ही एक राष्ट्र को समुन्नत शील नहीं बना सकता, क्योंकि राज-नीति राष्ट्र के जीवन का एक अंग है। इस प्रकार के राजनैतिक आन्दोलन जनता को पवित्र, धर्मप्रिय अथवा उदार नहीं बना सका, यह राष्ट्र संकल्प है जो ऐसा कर सका। परन्तु संकल्प, धर्म, बल तथा परम्परा के द्वारा निर्माण होता है"।

इतिहासकारों की निश्चित धारणा है कि महाभारत के युद्ध ने ही हिन्दू राष्ट्र को गारत किया, किन्तु इस धारणा से मैं सहमत नहीं हूँ। हिन्दू राष्ट्र वास्तव में महाभारत के बहुत पहिले से नष्ट हो चुका था इसलिए महाभारत का युद्ध हुआ। और

फिर इसके अतिरिक्त महाभारत के हज़ारों बरस बाद विदेशी राष्ट्रों के आक्रमण भारत पर हुए। क्या तब तक इन छोटे मोटे तुच्छ लुटेरों का सामना करने तथा उनके कर्मों का दण्ड देने के लिए हिन्दुओं में नवीन शक्ति नहीं पैदा हो सकती थी। क्या महाभारत के बाद का हिन्दू राष्ट्र नेपोलियन के बाद के जर्मनी से भो गया गुज़रा था कि वह केवल सौ बरसों की तैयारी से समस्त विश्व के शक्तिशाली नृपतियों से अकेला ही घमा-सान लोहा बजाने में सफलता पूर्वक समर्थ हो सकता है। किन्तु हिन्दू राष्ट्र को अकेले सिकन्दर के सामने मस्तक झुकाना पड़ता है। अज्ञात जापान केवल पचास वरसों में इतना शक्तिशाली बन सकता है कि रूस जैसे विशाल साम्राज्य को विध्वंस करने का साहस कर सकता है। किन्तु सहस्रों वरस नहीं, एक पूरा युग बीत जाने पर भी हिन्दू राष्ट्र विदेशियों का शिकार बना हुआ है। क्यों ?

क्योंकि हिन्दू राष्ट्र का यह रोग पुराना और साङ्घातिक है। यह बरसों की गुलामी तथा पापकर्मों का फल है; हिन्दू राष्ट्र के ब्राह्मण तथा क्षत्रियों के ईर्षा, द्वेष तथा पारस्परिक संघर्ष का परिमाण है। शताब्दियाँ गुज़र गईं पर हिन्दुओं की दासता वैसे ही विकराल रूप धारण किये उसके सामने निर्भीक खड़ी है। हिन्दू राष्ट्र के उद्धार की कोई आयोजना न हो सकी। हो भी कैसे जिन पापों के कारण विदेशी सिकन्दर ने रणबाँकुरे पोरस पर विजय पाई। जिस अदूरदर्शिता, द्वेष तथा ईर्षा के कारण

मुहम्मद गोरी ने महावीर पृथ्वीराज को पराजित किया, या जिन कारणों से हिन्दू राष्ट्र पश्चिमी वणिकों का दास बना, वही कारण इस राष्ट्र में अब भी ज्यों का त्यों मौजूद है। इन्हीं कारणों से आज हिन्दू राष्ट्र नैतिक दृष्टि से नैतिक सत्ताहीन और बनियों का गुलाम है। सामाजिक दृष्टि से समाज हीन तथा वर्ण संकर हैं। आर्थिक दृष्टि में भिखमंगा है। धर्म की दृष्टि में धर्म हीन तथा काफिर है। इतना ही नहीं, हिन्दू अपने रात दिन के जीवन में भी सताया जा रहा हैं। यह यहूदियों की भाँति अपना घर और देश होते हुए भी घर हीन तथा विदेशियों की भाँति दिन काट रहा है। अकेले दुकेले का अन्त, दुकानों की लूट अब भी जारी है। सुकुमार भोले भाले बालकों के उड़ाए जाने के समाचार छपे हुए आप पढ़ते ही है। हमारी माताओं और बहिनों के साथ बलात्कार और उनका सकट मय जीवन की कथा कहाँ तक गिनायी जावें। हम उन अत्याचारों के ताण्डव नृत्य को अपनी आखों होते देखते हैं। पर उफ़ नहीं करते। इसलिऐ कि हम सचमुच कायर हैं। हमारी बीरता को लकवा मार गया है। हमारी रगों का खून सर्द पड़ गया है।

जब कि द्रौपदी के आपमान को भीम नहीं सहन कर सका, बाल अभिमन्यु की अन्याय युक्त निर्मम हत्या को अर्जुन नहीं देख सका तब क्यों हम हिन्दू उन्हीं की सन्तान होकर इस प्रकार चुप्पी साध लेते हैं। संसार हमें बेशर्म. निरुद्यमी और अकर्मण्य कहता है। राह चलते हम पर फबतियाँ कसी जाती हैं। यह सब

होते हुए भी हम मौन हैं। और ऐसी दशा देखकर उठते हुए भारतीय नवयुवकों का भी दिल बैठा जा रहा है।

अपनी अकर्मण्यता छिपाने के लिये लोग कहा करते हैं कि उपर्युक्त अन्यायों का उत्तरदायित्व मुस्लिम जाति के लोगों पर है। परन्तु मैं तो यह कहूँगा कि यह आरोप अपने दोषों को छिपाने के लिए गढ़ा गया है। क्योंकि मुस्लिम जाति का इतिहास चाहे कितना ही रक्तरंजित क्यों न हो मुस्लिम समाज चाहे कितना ही बुरा क्यों न हो, पर हमारे हृदय में उनके लिए सम्मान है। हम तो मुस्लिम जाति को, हिन्दू जाति से अधिक सभ्य. ज्यादा संगठित और हर प्रकार से अधिक अच्छा समझते हैं। अपने मजहब और अपनी जाति के लिए हो सही, परन्तु उनमें हिंदुओं से अधिक त्याग, ज्यादा सुलह, उत्तेजना और बलिदान के ज्वलन्त भाव भरे हैं। कम से कम वे अपने भाइयों को ठुकरा कर विधर्मी नहीं होने देते। वे अपनी बहू बेटियों का मान करना जानते हैं। अपने धर्म को खतरे में जान कर उनके दिलों में मर मिटने के भयानक भाव उमड़ आते हैं। अपनी विधवाओं और स्त्रियों को घर से बाहर निकाल कर दूसरों को सुपुर्द नहीं कर देते। उनके धर्म में शामिल होने वाले पापी से पापी तथा कोढ़ी पुरुष को भी हृदय से लगाने में इनकार नहीं करते। उनकी मस्जिदें हर मुसल्मान के लिए खुली हैं। वे भूखो भले ही मरें लेकिन अपनी सूखी रोटी के टुकड़ों को मिल जुल कर बाँट कर खाना जानते हैं। ग़रीब से ग़रीब मुसलमान यह समझता है

कि उसको प्रत्येक मनुष्योचित अधिकार प्राप्त है। और उनकी मदद के लिए उसके पीछे एक बिशाल शक्ति सर्वदा तैयार रहती है। हर मुसलमान के इन सद् गुणों के कारण उनको प्रशंसा किए बगैर नहीं रह सकता। इसके अतिरिक्त अगर हिन्दुओं पर किए गए अत्याचारों का जवाबदेह मुसलमानों को ठहराया जावे, तो हिन्दू भी इन गुणों को अपने राष्ट्र में क्यों नहीं पैदा करते, जिन गुणों के कारण ७ करोड़, ३० करोड़ पर आतङ्क युक्त प्रभाव रखते हैं। मुसल्मानों के ये गुण अगर हिन्दुओं में आजाँय तो ७ करोड़ आसानी से, ३० को ३७ करोड़ बना सकते हैं। दृष्टान्त के लिए पंजाब की सिक्ख जाति को देखिए।

पंजाब में मुसलमानों की आबादी सिक्खों से लगभग चौगुनी है। फिर भी हमें विरला ही कोई ऐसा उदाहरण सुनने में आता है कि वहाँ मुसलमानों ने सिक्खों को लूटा तथा उनकी बहू बेटियों पर बलात्कार किया हो। पंजाब के मुसलमान भारत के अन्य प्रान्तों के मुसलमानों से अधिक कट्टर और बलशाली होते ह। इस दशा में भी शायद ही उस प्रान्त में बदमाश से बदमाश मुसलमान किसी सिक्ख महिला को ओर अपमान भरी दृष्टि से देखे। वहाँ किसी सिक्ख महिला का अपमान करना प्राणों की बाजी लगाना है। सच्ची बात तो यह है कि सिक्खों में मुसलमानों से भी अधिक गुण हैं। वे उनसे अधिक कट्टर हैं तथा उनमें इनसे अधिक भ्रातृभाव है। देखिए न शहीदगंज का मसला सिक्खों ने कैसे हल किया। है हिन्दू जाति में इस प्रकार की

शक्ति कि वे भी शहीदगंज ऐसे मसले को इस आसानी से हल कर लेते। धन्य है सिक्ख जाति जिसने अपने को हिन्दू कह कर संसार पर हिन्दुत्व की छाप लगा दी है।

गुलामी की मनोवृत्तियों ने हमारी पाप वृत्तियों को प्रबल कर दिया है। द्वेष और फूटके दूषित विकोरों ने हमारी आँखो पर परदा डाल दिया है। लाखों निस्सहाय बेवाओं के करुण क्रन्दन से आकाश काँप उठा, किन्तु उस मर्म स्पर्शी रुदन को हम न सुन सके। हिन्दू जाति की हज़ारों ललनाएँ अत्याचारों से पिसकर गुलबदन बेगम, ताज बीबियाँ हो गईं। पर हमने देख देख कर आँखें बन्द करलीं। हज़ारों मन्दिर मिट्टी में मिला दिये गये। फारस यारकन्द गजनी और कन्धार के बाज़ारों में हमारी लाखों बहुएँ दासियों के रूप में बिक गईं किन्तु हमारी मूँछों का ताव उसी प्रकार बना रहा। हाँ कभी कभी इन पापों के प्रायश्चित्त के निमित्त हमारे भस्माव-शेष जातीव जीवन से कई बार भस्मी भूत करने वाली चिगारियाँ निकली। ये दाहक चिंगारियां प्रताप, शिवाजी, छत्रशाल, राजसिंह और गुरु गोविन्द सिंह, बन्दा बैरागी आत्माओं के रूप में उत्पन्न हुई थी। इन महा तपस्वियों ने हमें उठाने के लिए अखण्ड तप की साधना की है। जिसके फल स्वरूप हम कुछ देर के लिए जागे किन्तु थोड़े समय के बाद पूर्ववत सो गये।

ऐसा क्यों? हिन्दू राष्ट्र का अधःपतन क्यों? इसका उत्तर स्पष्ट है। यह अपने वास्तविक आत्म स्वरूप को भूल गया है। वह जिस सार्वभौमिक अमर राष्ट्र की सन्तान है, उसके आदर्श को

भूल गया। उसने सार्वभौमिकता तथा "वसुधैव कुटुम्बम" के विस्तृत क्षेत्र को छोड़कर संसार के विभिन्न राष्ट्रों की भाँति राष्ट्रीयता के—जिसमें अहंकार तथा स्वार्थ की गंध है—संकीर्ण बन्धनों से अपने आपको जकड़ लिया है। हिन्दुओं ने जबसे अपने को सार्वभौमिकता के शाहराह से अलग कर राष्ट्र बनने में गौरव समझा तभी से उनका विश्व के अन्य राष्ट्रों की भांति राष्ट्रीयता के उतार चढ़ाव उन्नति अवनति के अनिवार्य्य परिणामों को भुगतना पड़ा। इसका दूसरा कारण यह है कि बुद्ध के बाद जितने नेताओं ने हिन्दुओंको उठाना चाहा अथवा उनमें सुधार करना चाहा उनका भारते बहुत छोटा था। थोड़े से लोगों का गिरोह ही उनका हिन्दोस्तान था, वे सुधार तो करना चाहते थे, किन्तु सुधार का रास्ता स्वयं नहीं जानते थे, वे जगाना चाहते थे जरूर लेकिन जगाना नहीं जानते थे। ऐसी बोली बोलकर वे जगाते थे जो उनका छोटा सा हिस्दुस्तान ही सुनता और समझता था। असली हिन्दोस्तान उनकी पुकार सुनकर कभी कभी उठता भी था तो यह समझ कर कि ये लोग हल्ला मचा कर कोई खेल कर रहे हैं या जो कुछ करते वह अपने अथवा जाति और गिरोह के लिए कर रहे हैं। खिंच कर फिर सो जाता था। वह यह समझता ही न था कि ये लोग मेरे भाई बन्धु हैं। मुझे जगा रहे हैं, और जागना जरूरी है, नहीं तो मिट जाने का अन्देशा है। अब राष्ट्रों के उत्थान तथा पतन के स्वाभाविक नियमों पर विचार करूँगा।

———

उत्थान-पतन के प्राकृतिक नियम

सृष्टि के आदि काल से लेकर अब तक जननी बसुन्धरा की कोख में न जाने कितने राष्ट्रों ने जन्म लिया। उनमें कुछ तो यह भी न जान पाये कि इस संसार में हमारा क्या अधिकार है और चल बसे। कुछ अंगुलियों पर गिनी जाने वाली शताब्दियों तक जीवित रहे। परन्तु आगे चल कर जब उनका अस्थिपंजर निर्बल सिद्ध हुआ तो उन्हों ने भी सदा के लिये विश्राम लिया। कुछ अपने साथियों के साथ साथ चले परन्तु जब राष्ट्रीय शक्तियों की घुड़ दौड़ हुई; परीक्षा के लिये रंगभूमि में जब वे खरी कसौटी पर कसे जाने के लिये लाए गये तो अन्त में बराबरी न कर सके। हार कर बैठ रहे। और कुछ जन्म लेकर फले फूले और आज भी वे अपनी जिन्दगी का सबूत रखते हैं।

जन्मोद्देश्य

विश्व के प्रत्येक राष्ट्र के जन्म लेने का कोई न कोई उद्देश्य विशेष हुआ करता है। आश्वारोही को जो काम लगाम देती है, ठीक वही काम राष्ट्रों को उनके उद्देश्य दिया करते हैं। जिस प्रकार अश्वारोही की यात्रा बिना लगाम के अनियंत्रित होती है, ठीक उसी प्रकार राष्ट्र बिना उद्देश्य के अनियन्त्रित रहते हैं। जिन राष्ट्रों ने जीवित रहने के लिए अपना उद्देश्य जीवन निर्वाह रक्खा उनमें से आज सौ में कहीं एक आध जीवित हैं। कारण, जो केवल अपने लिए जीवित हैं वे न केवल अपने लिए मृतवत

हैं वरन् समस्त विश्व के लिये भी उनका होना न होना बराबर है। जिन्होंने यह समझा कि विश्व की भोग सामग्री एक जाति के लिए और खास कर हमारे लिये रचित है सचमुच वे इस संसार में चार दिन रह पाये, परन्तु जिन्होंने मानवी जाति को जगद्-नियन्ता परमात्मा का स्वरूप माना संसार के समस्त जीवों से विश्व बन्धुत्व का नाता रक्खा, उन पर ईर्षा द्वेष के मूर्तियों ने यदि दाँत पीसे, कपटाचारियों ने यदि भृकुटियाँ टेढ़ी की तो भी उसका बाल बाँका नहीं हुआ फिर भी वे चमके, चमके दो चार दिन के लिए नहीं; बल्कि सदियों के लिए। इसके विरुद्ध जिन्होंने स्वार्थ सिद्धि की ऐन्द्रजालिक सृष्टि करके झोपड़ियों से घृणा की। सूखी पत्तियों और छोटी छोटी लकड़ियों के टहनियों से छाई हुई झोपड़ियों, इसी तरह टूटी पियाल बिछी हुई टूटी खाटों की ओर सहानुभूति की दृष्टि डालना हेय समझा। प्रेम और भाई चारे के पवित्र व्यवहारों को अपनी शान के खिलाफ़ समझा, अभिमान किया। आगे चल कर ऐसा अशुभ समय आया कि वे विश्व की आनन्द वाटिका से रास्ता नापने पर विवश हुए।

किसी राष्ट्र के उत्थान तथा पतन का कारण उसकी अकर्मण्यता अथवा त्रुटि नहीं, वरन् भगवती प्रकृति की लीला है। प्रकृति जिस व्यक्ति या राष्ट्र विशेष से जो कार्य्य सम्पादित कराना चाहती है उसी के अनुपात से उस व्यक्ति या राष्ट्र में चेतना आती है। और जब उसका कार्य्य समाप्त हो जाता है तो उसमें दुर्गुण प्रवेश कर जाते हैं और पतन के गढ़े में गिर जाता

है। जैसे प्राण भिन्न भिन्न कार्य्यों के लिए शरीर में भिन्न भिन्न प्रकार के इन्द्रिय, उपेन्द्रिय अवयव उप-अवयव पैदा करके उनके द्वारा भिन्न भिन्न रूप में स्वयं कार्य्य करता है। उसी प्रकार जब तक जाति के उक्त अवयव अपने अपने कार्य्य में कटिबद्ध रहते हैं तब तक उनका अनामय बना रहता है, प्रतिकूल कारणों से उसमें विघ्न उपस्थित नहीं होता, किन्तु स्वार्थवशात् जब राष्ट्र के वे अंग अपने अपने कार्य्य से मुख मोड़ने लगते हैं तो उनकी वही दशा होती है जो इन्द्रियों के अपना काम छोड़ देने से शरीर की होती है। विराट के तेज से ही वर्ण और उपवर्ण अपने कार्य्य में तत्पर रहते हैं। उनके तिरोधान होनेपर उनमें स्वार्थ आजाता है। परिणाम यह होता है कि राष्ट्र का प्रत्येक वर्ण अपने निर्दिष्ट कर्त्तव्यों का त्यागना और अन्य वर्णों की विभूति को लेना चाहता है।

प्रत्येक जाति भगवती प्रकृति के किसी न किसी कार्य्य-विशेष के लिये उत्पन्न होती है। जब वह कार्य्य हो चुकता है और प्रकृति को उसकी जरूरत नहीं होती, तब उसका अन्तर्धान अथवा लोप होता है। जब किसी जाति का कार्य्य एक बार हो चुकता है और भविष्य में अनेक बार फिर उसकी आवश्यकता होने वाली होती है तो उस राष्ट्र का अन्तर्धान होता है और जब किसी राष्ट्र का कार्य्य हो चुकता है और भविष्य में उसकी आवश्यकता नहीं रहती तो वह विराट राष्ट्र में अन्तर्लीन हो जाती है। जो समय पाकर उसी का एक अँश हो जाता है।

उसकी स्वतंत्र सत्ता मिट जाती है। उसमें शुद्ध वंश वाले नहीं रह सकते, बल्कि उसमें संकर जातियां उत्पन्न होने लगती हैं। जैसे संसार में अनेक औषधियाँ ऐसी होती हैं जिनकी आवश्यकता प्रकृति को बीच बीच में होती है, किन्तु निरन्तर नहीं। जिस बीच में प्रकृति को उनकी आवश्यकता होती है उस बीच प्राण उनमें जाग्रत रहता है, जिससे वे हरी भरी रहती हैं, और जब प्रकृति को उनकी आवश्यकता नहीं होती तो प्राण उनमें अन्तर्लीन हो जाता है। जिससे वे नीरस और नंगी हो जाती हैं।

इसी प्रकार अनेक जातियाँ ऐसी होती हैं जिनका बार बार उत्थान और पतन होता रहता है। प्रकृति जब उनसे कार्य्य सम्पादन कराना चाहती है तो उनमें चेतना और विराट प्रगट हो जाते हैं जिनके कारण वे जातियाँ बड़ी प्रताप शालिनी हो जाती हैं। सर्वत्र उनकी मान पताका फहराने लगती है। और जब वे काम, जिनके लिए वे जातियाँ उत्पन्न हुई थीं, हो चुकते हैं तो फिर उस बीच प्रकृति को उनकी आवश्यकता नहीं रहती। अतः उस बीच उन जातियों की चेतना अन्तर्लीन होने लगती है। जिससे उन जातियों में नेताओं का होना बन्द हो जाता है। और जो उत्पन्न हो बैठते हैं वे अल्पायु होते हैं, अथवा अनुकूल निमित्तों के न मिलने के कारण वे सदा असफल रहते हैं। वीर, मनस्वी और कुलीन लोग पीछे पड़ जाते हैं, छद्मचारी और नीच लोग आगे हो जाते हैं, जिससे जाति निस्तेज और छिन्न भिन्न हो जाती है।

किन्तु ऐसी जातियाँ बहुत कम होती हैं जिनकी आवश्यकता प्रकृति को बार बार होती रहती है। अधिकतर ऐसी ही जातियाँ होती हैं, जिनकी आवश्यकता प्रकृति को एक बार होती ही है। जब वह काम, जिसके लिए ऐसी जातियाँ पैदा होती हैं, हो चुकता है तो उनमें अत्यन्त कामुक दौर्बल्य आ जाता है जिसके कारण उन में अन्य जातियों का अन्य संकर जातियों से संसर्ग होने से एक बिल्कुल नई संकर जाति उत्पन्न हो जाती है। इस तरह अनेक बार होने से कालान्तर में उन आदि जातियों के चित्, गुण और पिण्ड का सम्पूर्णतः अभाव होकर भिन्न चित्, भिन्न गुण और भिन्न पिण्ड वाली एक बिल्कुल नई जाति का जन्म हो जाता है। भगवती महामाया के साम्राज्य में निरन्तर उथल पुथल होता रहता है। कोई दो क्षण ऐसे नहीं होते जो एक समान हों। सदा नई सृष्टि, नई बात, नई चीजों की उत्पत्ति और प्राचीनों का लोप होता रहता है, किन्तु यह बात स्मरणीय है कि प्रकृति सदैव बुरे को नष्ट तथा अच्छे को सहायता करती रहती है। प्रकृति के उद्देश्य के विरुद्ध जाना ही पाप और विरोध करने वाला राक्षस; और इसके विरुद्ध उसके उद्देश्य पूर्ति में सहायक होना ही पुण्य और उसके सहायक देवता कहलाते हैं।

विराट सनातन राष्ट्र

अब यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि वर्त्तमान हिन्दू राष्ट्र, राष्ट्र नहीं है, वरन् एक जाति है। संसार में झेंप मिटाने और विश्व की वर्त्तमान शक्तियों के पंक्ति में गिने जाने के लिए, अपने नाम के सामने, पिदरम सुल्तान बूद (हमारे बाप बादशाह थे) के बल पर राष्ट्र का शब्द जोड़ लेता है। भारत का वास्तविक राष्ट्र "विराट सनातन राष्ट्र" है। वर्तमान हिन्दू जाति, इसी राष्ट्र का एक विच्छिन्न तथा तेज हीन शव है। और अब उसका एक स्मारक स्वरूप रह गया है।

इतिहास साक्षी है कि विश्व में कितने ही देश उठे और बैठ गये, कितनी ही जातियाँ बनी और बिगड़ गईं। कितने राज्य जमें और उखड़ गये। आज उनका नाम व निशान भी नहीं है। पत्थरों के खम्भों, मीनारों और दीवारों के अतिरिक्त उनके कोई चिह्न नहीं दिखाई पड़ते। चीन की बड़ी दीवार बड़े बड़े बादशाहों की क़ब्रों पर चौकीदारी का काम कर रही है। मिश्र की प्राचीन सभ्यता तथा वैभव कहाँ है मीनार मिश्र—मिश्र की प्राचीन सभ्यता का पता देती हुई अब तक मिश्र के राजा महा राजाओं के मसाले भरे मुर्दा शरीर को दबाये खड़ी है। रोम और यूनान की प्राचीन सभ्यता कराल काल के मुख में विलीन हो गई किन्तु पाँच हज़ार बरस से जर्जर भारत पर अनेक विपत्तियाँ आईं; उसने बड़े बड़े उतार चढ़ाव देखे। उसे ५००० बरसों से बड़ी

बड़ी कठिनाइयों तथा आपदाओं का सामना करना पड़ा, किन्तु अभी तक प्रबल आँधी के झकोरे खाने पर बूढ़ा सनातन राष्ट्र जिन्दा है। और भली भाँति जिन्दा है। अगर अपना विश्वव्यापी शासन नहीं तो न्यूनाधिक अपनी विशेषताओं को ज्यों का त्यों बनाये हुए है। इस प्रश्न का उत्तर ही सनतान राष्ट्र की अमरता का अकाट्य प्रमाण है।

सनातन राष्ट्र एक अमर राष्ट्र है, जिसका सर्वथा नाश किसी काल में भी नहीं होता। इसका गिराव इतनी ही हद तक होता है जितना कि दो सितम्बर सन् १९४६ के पूर्व था। इसके तुरन्त बाद ही इसका प्रकाश स्वयं शनैः शनैः नियमित रूप से प्रगट होने लगता है। जिसका श्री गणेश अब प्रत्यक्ष रूप में होने लगा है।

सनातन राष्ट्र संगठन

सनातन राष्ट्र के आदर्श और गठन के फल स्वरूप ही भारत की पवित्र भूमि में जगदाधर परमात्मा की लीला, अपरम्पार; असम्भव और असंख घटनाओं का समावेश और सफलता देखकर विश्व के समस्त मानव जाति का मन मुग्ध रहा है जिसकी भूमि की उपजाऊ शक्ति, जिसके निस्तब्ध नीरव, गिरि गह्वर, जिसके हरे भरे मैदान, तथा जिसके प्राण प्रद, सलिल पूर्ण नद नदी सदा बाहार दार बन कर जाति के नयन और हृदय को शीतल करती रही हैं। इस सुख सौन्दर्य्य पूर्ण, चिर शोभामयी भूमि की प्रशंसा का कारण यह

था कि यह इस राष्ट्र का गठन, और आदर्श पूर्णिमा के चन्द्र की भाँति १६ कलाओं से पूर्ण है। इसकी पूर्णता में कोई कसर नहीं है। जैसे मन्द्रमा सोलह कला, से युक्त होकर प्रकाशित है, वैसे ही सनातन राष्ट्र भी सोलह कलाओं से परिपूर्ण चन्द्रमा की तरह है। जिस प्रकार पूर्ण चन्द्र की सोलह कलाएँ हैं उसी प्रकार यह राष्ट्र भी सोलह कलाओं से युक्त है जिसके परिणाम स्वरूप यह अमर है। और अन्य राष्ट्रों की भाँति उत्थान पतन के नियमों से रहित है। यह तो चन्द्रमा की भांति नियमबद्ध—एक कला, दो कला नित्य घटता बढ़ता रहता है। घटते घटते अमावस्या और बढ़ते बढ़ते पूर्णिमा के चन्द्र का रूप धारण कर लेता है। किन्तु इसके अस्तित्व का नाश नहीं होता। इस संसार में सार्वभौमिकता का प्रचार कर अमृत वर्षा करता हैं। इस राष्ट्र की ये सोलह कलायें ४ गुणों में विभक्त की जा सकती है। और प्रत्येक कक्ष में ४ कलाओं का समान रूप से समावेश रहता है।। इस राष्ट्र का पहिला गुण 'ज्ञान' दूसरा 'बल', तीसरा 'धन' और चौथा 'सेवा' है।

ज्ञान, बल, धन और सेवा गुणों से संगठित सनातन राष्ट्र ईश्वरीय शरीर रचना की हुबहू नकल है। शरीर में अन्तःकरण है। अन्तःकरण बुद्धि, अहंकार, मन और चित्त चार चीजों से बना है। अन्तःकरण में ही अमर आत्मा स्थित है। सनातन राष्ट्र के गठन के लिये अन्तःकरण की बुद्धि से ज्ञान, अहंकार से बल, चंचल मन से चंचल धन, तथा चित् से सेवा गुण का

नक़ल किया है। विश्व एक विराट शरीर है। उसमें ज्ञान, बल, धन और सेवा से संगठित सनातन राष्ट्र उस विराट शरीर का अन्तःकरण है। जिसमें विश्व की आत्मा विराजमान है जो अमर और अविनाशी है। और इसीलिये इस राष्ट्र की प्रत्येक अधिकारी प्रजा चारों पदार्थों—ज्ञान से धर्म, बल से काम, धन से अर्थ और सेवा से मोक्ष प्राप्ति, और भोग का अधिकारिणी होती है। जो समस्त मानवीय जाति का अन्तिम लक्ष्य है। संसार में आदिकाल से प्रलय तक यही चार गुण बारी बारी से क्रमानुसार सार्वभौमिक धर्म, सार्वभौमिक राज्य, सार्वभौमिक वाणिज्य तथा सार्वभौमिक सेवा की नीति संस्थापित करते चले आये हैं।

ज्ञान अथवा कानून राज्य

सृष्टि के मानव विकास के आदिम काल में भारत में ज्ञान राज्य था। इस युग को इतिहासज्ञ लोग अराजक राज्य कहते हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार डा० काशी प्रसाद जायसवाल अपने हिन्दू राज्य-तंत्र पुस्तक (Indian Polity.) में लिखते हैं "अराजक राज्य या बिना शासक वाली शासन प्रणाली—आदर्श वादियों की शासन प्रणाली थी। इस शासन प्रणाली का आदर्श यह था कि केवल कानून या धर्मशास्त्र को ही शासक मानना चाहिये। कोई व्यक्ति शासक नहीं होना चाहिये। इसमें शासन का आधार नागरिकों का पारस्परिक निश्चय या सामाजिक बन्धन माना जाता था। यह प्रजातंत्र प्रणाली की चरम सीमा थी। और बहुत अंशों में इसका आदर्श टालस्टाय के आदर्श के साथ

बहुत कुछ मिलता जुलता है"। महाभारत में कहा गया है कि इस व्यवस्था से जब काम नहीं चला और सब लोग कानून की अवज्ञा करने लगे। तब इस प्रकार का कानून बनाने वालों को अपनी भूल मालूम हुई। जब केवल कानून से शासन न हो सका तब इस प्रकार की शासन प्रणाली ,, रहने वाले नागरिकों ने 'एक राज' अथवा राजकोय शासन प्रणाली का' आश्रय लिया।

महाभारत के शान्ति पर्व अध्याय ५९ में लिखा है कि प्रचलित युग के आरंभ में न तो कोई राज्य था, और न कोई राजा था; और न कोई व्यक्तिशासन कार्य्य के लिये नियुक्त किया जाता था, केवल कानून या धर्मशास्त्र का ही शासन होता था। परन्तु पारस्परिक विश्वास के अभाव के कारण इस प्रकार का कानून या धर्म का शासन अधिक दिनों तक न चल सका। इसीलिए राजा द्वारा शासन की प्रथा प्रचलित हुई।

इस अराजक, ज्ञान अथवा कानून शासन प्रणाली के संस्थापक, संचालक और अनुशासक ऋषि कहलाते हैं। इस शासन विधान को वर्त्तमान समय के प्रचलित शब्दों में साम्यवाद युग कहा जा सकता है। ऋषियों का प्रधान कार्य्य वैज्ञानिक आविष्कार तथा उनका प्रयोग करना था। और इस आविष्कार के उपयोगिता को विश्व विकासार्थ, यथोचित प्रचार करना था। उनका शासन सम्पूर्णतः और सर्वाङ्ग ज्ञान गुण पर अवलम्बित था। उनके शासन सम्बन्धी कानूनों की परिभाषा इस प्रकार थीं। "जब कोई पुरुष सत्य बात कहता है तो लोग कहते हैं कि

वह वही कहता है जो कानून कहता है। इस परिभाषा के अनुसार सत्य और कानून दोनों एक हैं।" प्राकृतिक नियमों की वास्तविक नकल ही इनके नियम निर्माण की पृष्ठिभूमि थी। इनका कुल कानून दो शब्दों—पाप और पुण्य में विभक्त था। करना चाहिये पुण्य, न करना चाहिये पाप था। वर्तमान समय के आश्चर्य जनक आधुनिक ज्ञान विज्ञान कला और आविष्कार जो लोगों की आँखों को चौंधियाए हुये हैं। वे सब कमोबेश मूलतः इन्हीं ऋषियों के तप बल का फल स्वरूप है। सार्वभौमिकता-यथा सार्वभौमिक राज्य, धर्म, समाज ही इनके शासन नियमों का आदर्श था।

कालान्तर में इन ऋषियों में इन आदर्शों को वास्तविक रूप देने की प्रबल इच्छा हुई। इसमें उन्हें सात्विक बल की आवश्यकता प्रतीत हुई।,जिसके फलस्वरूप पुत्र, धन और यशकी कामना हुई। उन्होंने नियोग, तथा वीर्य-दान के बहाने अपना पतन किया। उनके पुत्र हुये इस प्रकार उनके परिवार की वृद्धि हुई जो आगे चलकर मुनि कहलाए। समुदाय बनने के कारण उन्होंने ऐश्वर्य और मान की आवश्यकता अनुभव किया। इनके पतन का प्रमाण उपनिषदों अथवा पुराणों में पाये जाते हैं, उनमें से उदाहरणार्थ दो श्लोक उदधृत किये जाते हैं।

जातिर्ब्राह्मण इहि चेत्तर्हि अन्य जातौ
समुद्भवा बहवो महर्षयः।
संति ऋष्य शृङ्गों मृग्यां जातः

कौशिकः कुशास्तम्वात, गौतमाः शशपृष्ठे

वशिष्ठो वेश्यायां, विश्वामित्र क्षत्रियाम्

अगस्त्यः कलशाज्जातो ।

बाल्मीकि बाल्मीक्यां, व्यास कैवर्त कन्यायां

पाराशरश्चांडालि गर्भोत्पन्नः ।

मांडव्यो मांडुकि गर्भोत्पन्नः, मातंगो मातंगी पुत्रः

अचलो हस्तिनि गर्भोत्पन्नः ।

भारद्वाज शूद्री गर्भोत्पन्नः, नारदो दासीपुत्रः

इति श्रयते पुराणे तेषां जाति विनापि ।

सम्यग ज्ञान विशेषाद्ब्रह्म नत्यंतं स्वीक्रियते

तस्माज्जात्या ब्राह्मणो न भवत्यवेति ।

अर्थात :—शृंगी ऋषि हरिणी के पेट से पैदा हुये थे। कौशिक ऋषि दर्भ के गुच्छे में पैदा हुये थे। गौतम ऋषि शशक के पेट से, बाल्मीकि मुनि बाल्मीकि (मिट्टी के ढेर से) व्यास जी भील की कन्या, पाराशर भंगिन से, बशिष्ठ जी वेश्या (रंडी)। से, विश्वामित्र क्षत्रिया से, अगस्त्य मुनि फूल से, माण्डव्य ऋषि मांडुकी से, मातंग ऋषि मातंगी से, अचल मुनि हथिनी से। नारद मुनि दासी से, भारद्वाज मुनि शूद्री से पैदा हुये।

"हस्तिन्या मचलो जाता; उलूक्यां केश पिङ्गलाः

अगस्त्येऽगस्ति पुष्पाच्च, कौशिकाः कुशि सम्भवः

कपिलः कपिलाज्जाता,शल्गुल्माच्च गौतमः

द्रोणाचार्य्यास्त कलशाः तित्तिरी स्तित्तिरी सुतः

रेणुकाऽजनयद्रामा, मृष्य-शृंग मुनि मृगी
कैवर्तिन्यजनद् व्यासं, कौशिके चैव शूद्रिका:
विश्वामित्र च चाण्डाली, वशिष्ठं चैव उर्वशी:
न तेषां ब्राह्मणी माता, लोकाचाराच्च ब्राह्मण:

अर्थात :—अचल मुनि हथिनी के पेट से, अगस्त अगस्त के फूल से, कौशिक ऋषि कुशा घास से, कपिल मुनि बंदरी से, गौनम मुनि शाल गुल्म नामक बल्लि से, द्रोणाचार्य जी कलशा से, तित्तर ऋषि तित्तरी से, परशुराम रेणुका नाम धूल से, शृंगी ऋषि हिरनी से, व्यास जी कोलिन से, विश्वामित्र चाण्डाली से, वशिष्ट जी उर्वसी से।

ऋषियों के इस प्रकार पैदा हुये पुत्र ऋषि की जगह मुनि कहलाये। मुनियों में विवाह प्रथा बढ़ गई, अब छिपाकर पुत्र नहीं पैदा किये जाते थे। मुनियों के पुत्र ब्राह्मण कहलाये। इन्हीं ब्राह्मणों ने धर्मराज्य स्थापित किया। राज्य और शासन से अहंकार और पैतृक अर्जित भोग सामग्री अपने अधिकार में पाते हुये, व्यक्ति-गत स्वार्थ परायणता की घुन इनमें लग गया। राज्य विस्तार, शासन-विस्तार, मान मर्यादा विस्तार की अभिलाषाओं ने ब्राह्मण वंश में परशुराम और रावण ऐसे दुराग्रही और हिंसात्मक प्रवृत्ति के लोग पैदा किए। इन्होंने ब्राह्मण जाति को संसार में सर्वोच्च स्थान दिलाने तथा उसे स्थायी रखने के लिये, उस समय के क्षत्रियों की, जो ब्राह्मणों के लिहाज और प्रभाव में थे। और जो उनके इन आकांक्षाओं की पूर्ति में बाधक सिद्ध हो

सकते थे। एक नहीं, कई बार लगातार बध किया और उनके राज्य और सम्पत्ति का अपहरण करके ब्राह्मणों के भोग के लिये दे दिया। श्रीरामचन्द्र के अवतरण—समय के पूर्व तक ब्राह्मणों की यही दशा थी। राम ने इन दोनों बलों तथा ब्राह्मणत्व से पथ-भ्रष्ट, क्षत्री कुल घालक व्यक्तियों को नीचा दिखाया। परशुराम की उच्छृङ्खलता चूँकि एक से अधिक, जातिगत, अथवा एक समूह विशेष के लिये थी। इसलिये उन्हें राम ने आध्यात्मिक मात दिया और दण्डस्वरूप बस्ती से निर्वासित कर दिया।

इसके विरुद्ध रावण जो निरंकुश क्षत्री होगया था, उसको, उसके आदमियों तथा कुटुम्ब को समूल नष्ट किया। इसके पश्चात् राम ने ज्ञान का बल संयुक्त प्रजातंत्रात्मिक राज्य स्थापित किया। डा० काशी प्रसाद जायसवाल अपने हिन्दू-तंत्र नामक पुस्तक में लिखते हैं कि "वेदों से पता चलता है कि बिल्कुल आरम्भिक काल में भी राष्ट्रीय जीवन के सब कार्य्य सार्वजनिक समूहों और संस्थाओं के द्वारा हुआ करते थे। इसी प्रकार की सबसे बड़ी संस्था हमारे वैदिक काल के पूर्वजों की 'समिति' थी। समिति का अर्थ है। सबका एक जगह मिलना या एकत्र होना। यह समिति जन-साधारण अथवा विशः की राष्ट्रीय सभा थी। क्योंकि हमको पता चलता है कि सब लोगों का समूह अथवा समिति ही राजा को पहली बार भी और फिर से भी चुनाव करती थी। यह माना जाता था कि समिति में सभी लोग उपस्थित हैं।"

ज्ञान-बज्र राज्य

महाभारत शान्ति पर्व के ६७ वेंअध्याय में लिखा है। "अराजक राज्य (ज्ञान राज्य) के निवासी जब राज-द्रोही और उपद्रवी होने लगे तो उन्होंने उपद्रवों और अपराधों को रोकने के लिए एक समूह या सभा में कुछ विशिष्ट निश्चय स्वीकृति किये और क़ानून बनाये। आपस में एक दूसरे का विश्वास उत्पन्न करने के लिए सब जातियों ने मिलकर कुछ बंधन निर्धारित करके उनके अनुसार जीवन निर्वाह करना निश्चित किया। परन्तु जब वे लोग इस प्रणाली के कार्य्य से सन्तुष्ट नहीं हुए। तब उन्होंने जाकर ब्रह्मा से शिकायत की। इस पर ब्रह्मा ने उनसे कहा कि तुम लोग अपना एक प्रधान या शासक नियुक्त करो। और इस प्रकार एक राजा निर्वाचित हुआ।"

इससे स्पष्ट है कि उन बन्धनों की रक्षा के लिए, जिसको ज्ञान राज्य के अन्तिम समय में निर्धारित किया गया, बल की आवश्यकता हुई। इसी आवश्यकता के अनुसार अब शासन की बागडोर क्षत्रियों के हाथ में आयी। क्षत्रिय खान्दान के इक्ष्वाकु वंश में रघुवंश राम पैदा हुए उन्होंने अपने तप तथा अजेय बल से कानून की पूर्ण रक्षा की। यह पहिले ही व्यक्ति हैं जिन्होंने संसार को कानून दिया इसीलिए इन्हें मर्य्यादा पुरुषोत्तम (First law giver.)कहते हैं। इन्होंने आदर्श प्रजातंत्रात्मक राज्य तात्कालिक विकसित भूमण्डल पर स्थापित किया।

इसमें बल का गुण प्रधान था, और ज्ञान अथवा धर्म गुण मंत्री था। इन दोनों गुणों के संयोग तथा सहयोग से, राम द्वारा स्थापित क्षत्री राज्य, इतना आदर्शशील सिद्ध हुआ कि संसार आज भी 'राम राज्य कब होगा' कह कर तरसता है।

मनमुटाव

इस राम राज्य का युग राम के समय से महाभारत काल तक समझा जाता है। इसके बाद शक्ति की दृष्टिसे मंत्री (ब्राह्मण) तथा राजा (क्षत्री) में नाम मात्र और परिस्थति का अन्तर होता था। उस समय अपने २ क्षेत्र में दोनों गुण समान शक्तिशाली थे। ब्राह्मणों ने पूर्व-वत अपने शासक दशा पुनः प्राप्त करने का प्रयास किया। परिणाम स्वरूप दोनों गुणों का संघर्ष हुआ। तात्कालिक राजनीति, और धर्मनीति, और कानून के अध्यक्ष ब्राह्मण लोगों ने 'घर फोड़वा नीति से शासन करो' (divideand rule) की कूटिनीति का आश्रय लिया। इस नीति के अनुसार क्षत्रियों में फूट डालने और कुछ को अपने पक्ष में करने का प्रचार शनैः शनैः किन्तु स्थिर गति से करते रहे। इस नीति का स्पष्ट और सफलता पूर्वक प्रयोग करने का अवसर उन्हें महाभारत समय में कौरव-पाण्डव के राजकीय संघर्ष के समय मिला। जिसके फलस्वरूप महाभारत का विश्व-व्यापी युद्ध हुआ। यह युद्ध-जैसा कि आजकल प्रचलित है, कौरव और पाण्डवों का पारस्परिक युद्ध नहीं था, बल्कि यह युद्ध-तात्कालिक

ब्राह्मणों और क्षत्रियों का एक दूसरे पर गालिब आने का खुल्लम खुल्ला विद्रोह था। उस समय के गण्यमान्य, प्रभावशाली, कलाकार युद्ध-शस्त्रप्रवीण, सलाहकार सब ब्राह्मण या तो निर्विवाद सिद्ध अन्यायी दुर्योधन के साथ थे अथवा तठस्थ थे। इसके बिरुद्ध चुने हुए क्षत्री, जिनकी संख्या बहुत कम थी, पाण्डव पक्ष में थे।

दोनों जातियाँ अपने अपने निर्धारित उद्देश्य पूर्ति के लिये, एक दूसरे पर गालिब आने के लिये एक दूसरे के गुणों को— यथा ब्राह्मणों ने क्षत्रित्व का, और क्षत्रियों ने ब्राह्मणत्व का गुण अपनाने लगीं। द्रोणाचार्य्य आदि प्रभृति ब्राह्मण नेताओं ने युद्ध सम्बन्धी कला कौशल में प्रवीणता प्राप्त की। और इसके विरुद्ध धर्मराज, भीष्मपितामह, ज्ञानी विदुर और ब्रह्मज्ञानी कृष्ण आदि क्षत्रियों ने ज्ञान का अनुसरण किया। महाभारत युद्ध इन दोनों जातियों के शक्तियों के बीच परीक्षा स्वरूप था। निष्पक्ष कृष्ण ने भी जो क्षत्रिय बंशी थे, और जो रण-नियम के अनुसार दुर्योधन पक्ष के लिये बचनवद्ध हो चुके थे, बचन-विरुद्ध क्षत्रिय पक्ष के नेता पाण्डवों की ओर से निशस्त्र सहायता की। निशस्त्र इसलिये कि सशस्त्र बल से नहीं, बल्कि निःशस्त्र ज्ञान से। अधर्मी दुर्योधन पक्ष ज्ञान तथा बल से भरपूर सुसज्जित था। धर्मी पाण्डव पक्ष, धर्म तथा बल से भरपूर सुसज्जित था, किन्तु ज्ञान का अभाव था, जो निशस्त्र होता है। केवल इसी अभाव की पूर्ति के लिए ही ज्ञानी कृष्ण ने अर्जुन का क्षात्र पक्ष लिया। युद्ध

में ज्ञान पक्ष अर्थात् ब्राह्मणों की हार हुई। इसके बाद तत्काल भारत में ज्ञान हीन धर्म-बल राज्य स्थापित हुआ। अर्थात् क्षत्रियों का राज्य तो अवश्य हुआ किन्तु ब्राह्मणों का हार्दिक सहयोग प्राप्त न हो सका। महायुद्ध के बाद पराजित कौरव वंशी क्षत्रियों अरब, एशिया माइनर, फारस और मिश्र आदि सुदूर देशों में जा बसे। और उनके पक्ष के ब्राह्मण और आगे जर्मन, इंगलेंड, ग्रीस और रोम आदि देशों में, और प्रायः उन अन्य सभ्य देशों में जहाँ जहाँ बाद में कैथालिक धर्म का प्रचार हुआ जा बसे।

ज्ञान-बल संघर्ष

भारत के अवशिष्ट ब्राह्मणों ने क्षत्रियों पर ग़ालिब आने के लिये, अपने शुद्ध ब्राह्मणत्व के अतिरिक्त क्षात्र गुण को भी ग्रहण करना आवश्यक समझा। इसलिये ब्राह्मणों ने अहिंसा छोड़ हिंसा का मार्ग अपनाया। उस समय क्षत्रियों से परित्यक्त ब्राह्मण लोगों का एक मात्र जीवन मार्ग यज्ञ कराना ही था। उन्होंने अपने तथा अपने यजमानों के यज्ञों में हिंसा का प्रचार किया। अश्वमेध पशुमेध, नरमेध और गोमेध, यज्ञादि जिसमें क्रमशः घोड़े, पशु, नर और गोबध किये जाते थे। ब्राह्मणों द्वारा हिंसा प्रचार के ज्वलन्त प्रमाण हैं। इसी तरह क्षत्रियों ने ब्राह्मणों के ब्राह्मणत्व को परास्त करने के लिए, क्षात्र धर्म के अतिरिक्त ब्राह्मणत्व और अहिंसा नीति अपनाई। क्षत्रियों द्वारा उपनिषद् आदि जो वेदान्त के मूल होते हैं, कतिपय शास्त्रों की रचना, तप बल उत्पन्न करना उस समय के क्षत्रियों के उदाहरण हैं।

क्षत्रिय प्रबल

क्षत्रिय कुल दिवाकर भगवान बुद्ध में ब्राह्मणत्व और क्षत्रित्व समान अंश में था। इसलिये इनके धार्मिक आ·दोलन में तात्कालिक क्षत्रियों ने अपने उद्देश्य पूर्ति का अच्छा अवसर समझा। क्षत्रियों का बौद्ध धर्म ही उस समय का सार्वभौमिक धर्म हो गया। इस धर्म के ज़रिए क्षत्रियों ने सार्वभौमिक राज्य और समाज स्थापित किया। ब्राह्मणों की जड़ बुनियाद मिटाने के लिए बौद्ध धर्म ने एक प्रकार के नए ब्राह्मण पैदा किए जो भिक्षु संघ के सदस्य थे। ये भिक्षु लोग उस समय ब्राह्मणों की जगह समाज का सब कर्म करने लगे। बौद्ध धर्म और बौद्ध राजाओं ने ब्राह्मणों के भेष, भूषा, आचार-विचार आदर्श और परम्परा सब बदल दिया इसका प्रमाण इस प्रकार है।

भगवान बुद्ध ने बौद्धधर्म का प्रचार तथा भिक्षु संघ स्थापित करके ब्राह्मणों को ज्ञान विभाग में भी क्षत्रियों के आश्रित कर दिया और क्षत्रियों को, सार्वभौमिक राज्य संस्थापन का मार्ग खोल दिया। वे स्वयं भी दोनों गुणों—ज्ञान तथा बल से संयुक्त थे और अपने को क्षत्रिय अनुभव करने में सङ्कोच नहीं करते थे। वास्तव में बौद्ध धर्म तात्कालिक क्षात्र धर्म ही था,

अंवष्ठ सुत्त, २०, र्‌होस डेविडस कृत Dilaogue (१-११४,१६) में लिखा है कि "जब २ अपने सङ्घ के सङ्गठन में कुछ विशिष्ट अवस्थाएँ उत्पन्न होती थीं, तब तब बुद्ध भगवान कार्य्य निर्वाह

के उन्हीं नियमों आदि का अवलम्बन करते थे जो पहिले से चले आते थे। स्वयं उनका जन्म एक प्रजातंत्री राज्य में हुआ था, और वहीं के रहने वाले थे। इसके अतिरिक्त उनका जीवन भी प्रजातंत्री समाजों में ही व्यतीत हुआ था। वे धार्मिक ढंग से एक बड़ा राज्य बल्कि साम्राज्य (धर्मचक्र) स्थापित करना चाहते थे। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने सङ्गठन स्थापित किया था, वह वर्गीय ही था। उनके कार्य्य की सीमा जो इस प्रकार संकुचित हो गई थी, उसका कारण उनके जीवन का सस्कार था (अर्थात् शुद्ध क्षत्रिय वंश के थे)। उनका जन्म एक ऐसे प्रजातंत्र में हुआ था, जिसमें अपने समकालीन राज्यों की अपेक्षा राजनीतिक तथा सार्वजनिक भावों की भी विशेष प्रबलता थी। और इसीलिए उनमें एक शान्त, त्यागी के योग्य उत्साह और आकांक्षायें नहीं थीं। बल्कि एक प्रजातंत्री राजा तथा विजेता के उपयुक्त गुण और आकाक्षायें आदि थीं"।

व्यक्तिगत विषयों में भी बुद्ध भगवान वही सनातन संकुचित भाव प्रगट किया करते थे। वे संसार त्यागी हो जाने पर भी अपने इक्ष्वाकु वंशी होने का अभिमान किया करते थे। ब्राह्मण कृष्णायन से, जिसने उन्हें शाक्य कह कर अपमानित किया था, उन्होंने कहा था कि वह (कृष्णायन) इक्ष्वाकु की एक दासी का वंशधर था। उन्होंने कहा था "यदि तुम मेरे इस कथन का स्पष्ट उत्तर नहीं दोगे तो इसी जगह तुम्हारे सिर के टुकड़े २ उड़ा दिए जायेंगे।"

भगवान बुद्ध के विषय में इस कथन की पुष्टि और प्रतिपादन डा० काशीप्रसाद जायसवाल लिखित हिन्दू राज्य-तंत्र से और अधिक होता है। वे लिखते हैं कि "साधारण हिन्दू संन्यासियों के विपरीत वे अपने संघ के लिए सम्पत्ति पर अधिकार करते थे। अधिवेशन करते थे। प्रस्ताव स्वीकृत करते थे। और अपराधियों को दण्ड देते थे। वे अपने सभी आध्यात्मिक कृत्यों में प्रजातंत्री शाक्य थे। उनकी सारी व्यवस्था में संगठित आध्यात्मिक प्रचार या विजय प्राप्ति का भाव भरा हुआ था। अपने आध्यात्मिक उद्देश्यों में सफलता प्राप्त करने के लिये उन्हें अपने धर्म-संघ को स्थायी करना था। अपने धर्म के प्रजातंत्र को स्थायी बनाना था। और इसीलिए उन्हें राजनैतिक प्रजातंत्रों की शासन सम्बंधी कार्य्य प्रणालियों तथा संगठन को ग्रहण करना पड़ता था।"

ब्राह्मण प्रबल

राज्य द्वारा वहिष्कृत ब्राह्मण जाति ने अपने जीवन निर्वाह के लिए, भिन्न भिन्न मत-मतान्तर प्रचार करके अपना अनुयायी बढ़ाते थे। पुराण, देवता, मंत्र, तत्र, टोना, कथा और व्रत का प्रचार जनता में किया करते थे। जिसका प्रबल रूप वर्त्तमान समय में भी प्रत्यक्ष ही है। किन्तु इनके इन सब कार्य्यों के तह में क्षत्रिय नाश की भावना बराबर बनी रही और उपयुक्त समय की प्रतीक्षा थी। बौद्धधर्म के गिराव के समय ऐसा अवसर प्राप्त हो

गया। बौद्धधर्म का नाश करने के लिये जगद्गुरु शंकराचार्य्य के नेतृत्व में ब्राह्मणों ने शैव मत का आन्दोलन आरम्भ किया। इसमें सफल भी हुये। बौद्धधर्म की जगह हिन्दूधर्म स्थापित किया गया। बौद्ध राष्ट्र की जगह हिन्दू राष्ट्र बना, भिक्षुओं के संङ्घों को छीनकर, उनकी जगह शैव धर्म के प्रचार के केन्द्र स्वरूप, चार पीठ भारत के चारों कोणों में स्थापित किये गये। भिक्षु लोग, हिन्दू धर्म प्रचारक सन्यासी बन गये। क्षात्रधर्म नाश करने के बाद ब्राह्मणों ने उनके क्षत्रित्व का भी नाश करने के लिए उनसे अधिक उग्र लड़ने वाले, कोल, भील, शक, सिथियन, हूण आदि देशी विदेशी जातियों को संगठित और यज्ञ द्वारा शुद्ध करके अग्निकुल राजपूत उत्पन्न किया। इसीको प्रमाणित करने के लिए एक कथा भी तुरन्त तैयार कर ली गई कि अग्निकुल राजपूत वशिष्ट द्वारा आबू पर्वत पर, किये गये यज्ञ से उत्पन्न हुये थे। इनके चार वंश—प्रतिहार सोलंकी परमार और चौहान इतिहास प्रसिद्ध हैं। इन चारों ने बौद्ध द्वारा स्थापित सार्वभौमिक साम्राज्य को समूचा अपने अधिकार में रखने का प्रबल प्रयास किया। अन्त में असफल हुये।

परिणाम यह हुआ कि साम्राज्य सदा के लिये सैकड़ों, टुकड़ियों, छोटी २ रियासतों में छिन्न भिन्न हो गया। सार्वभौमिक बौद्धधम सैकड़ों धर्म, सम्प्रदाय, मत मतान्तरों में टुकड़े टुकड़े हो गया। बूँदी, कोटा, कच्छी, देवड़ा, सोनागर, माँडू, उज्जैन, चन्द्र भागा चन्द्रावती उमर कोट, वक्खर पाटन आदि रियासतें अग्नि-

कुल राजपूतों की निशानी हैं। विक्रमादित्य, राजा भोज, चन्द्रगुप्त शालिवाहन आदि कतिपय इतिहास-प्रसिद्ध व्यक्ति अग्निकुल राजपूत के जगमगाते नक्षत्र हैं।

अपना सर्वनाश सामने देखकर तात्कालिक बौद्ध-संस्कृति के क्षत्रियों ने, जिनकी संख्या शैव मतावलम्बी ठाकुर राजाओं की अपेक्षा बहुत कम थी, एक बार फिर अन्तिम ऐंड़ लगाई, अर्थात् बौद्ध धर्म (क्षात्र धर्म) को किसी न किसी रूप में पुनः जीवन प्रदान के लिए नये ब्राह्मणों को सगठित किया। जिन्हें सवालाखो ब्राह्मण कहते हैं जैसा कि ब्राह्मणों ने अग्निकुल राजपूतों के रूप में क्षत्रिय, सङ्गठित किया था। सवालाखी ब्राह्मणों की उत्पत्ति के विषय में ब्राह्मणों द्वारा लिखी हुई ब्राह्मण निर्णय में इस प्रकार लिखा है, जा० भे० वि० सारनामक पुस्तक के पृष्ठ ८८ में ऐसा लिखा है। "माधोगढ़ में राम नामक राजा था उसने एक यज्ञ करना आरम्भ किया, तहाँ यज्ञार्थ, भोजनादि कार्य्य के लिए सवालाख ब्राह्मणों की आवश्यकता हुई, तब सवालाख ब्राह्मण न मिलने के कारण जो अनेक जाति के लोग यज्ञ दर्शनार्थ आए थे। उन्हें जनेऊ पहना कर ब्राह्मणों के साथ भोजन करा दिया जिससे इनका नाम सवालाखी पड़ा। ये कनौजियों की एक शाखा है।

इन सवालाखियों के अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति के गोत्र प्रवर, शाखा; शिखा और सूत्रादि अथवा वंशावली याद रखने वाले

राय, बड़वे, भाट, कापड़ी, चारण तथा शुक्र आदि ब्राह्मण, पुरोहित, पुजारी सब ऐन केन प्रकारेण क्षत्रियों के बनाए हुए ब्राह्मण हैं।

वास्तविक बात यह है कि ब्राह्मणों और क्षत्रियों में विद्वेष की अग्नि भड़क कर उग्र रूप धारण कर लिया था। असली ब्राह्मण, क्षत्रियों से खान पान का सम्बन्ध रखना नहीं चाहते थे इसलिये उनकी जगह क्षात्र धर्म के लिये, जो अपने आश्रित रहें—अग्निकुल राजपूत पैदा किये। इसी तरह क्षत्रियों ने भी असली ब्राह्मणों का बायकाट करके ब्राह्मण धर्म के लिये सवालाखी आदि ब्राह्मण बनाए, जो इन्हीं की रोटियों पर पलते रहे। और इन्हीं के गाथा गाते आज तक चले आए। फलतः प्राचीन ब्राह्मणों और संगठित किए हुए ब्राह्मणों में पारस्परिक कलह उत्पन्न हो गया। इसी प्रकार से प्राचीन क्षत्रियों तथा शैवमतावलम्बी नवीन अग्निकुल राजपूत में विद्वेष बना रहा।

क्षत्रियों का धार्मिक अंग सदा के लिए लुंज करने के लिए ब्राह्मण लोगों ने एक बहुत ही सरल उपाय से काम लिया। इन्होंने बौद्ध को विष्णु का दसवाँ अवतार मान कर बुद्ध गया के मन्दिर पर कब्जा कर लिया। और बौद्ध के मूल सिद्धान्तों को कुछ उलट फेर कर, शेष ज्यों का त्यों रखकर बौद्ध धर्म का नाम ही बदल कर वैष्णव धर्म कर दिया। रहा बाँस न बाजी बाँसुरी वाली कहावत पूर्णतः चरितार्थ हो गई। ब्राह्मणों का शैवधर्म, क्षत्रियों का वैष्णव धर्म आज भी, जब कि ऐसे धर्म का कोई महत्व ही

नहीं, भारत के कोने २ में अलग लड़ता हुआ दिखाई पड़ रहा है। किन्तु फिर भी हिन्दू जाति के धर्म की डोरी इन्हीं दोनों के हाथ में है, जिन्हें पूजन पाठ कराने, गुरु दीक्षा देने, कान फूंकने, तथा कथा भागवत बाँच कर एक मात्र जीविका करने का परिज्ञान है। देश स्थित क्या है, देश काल क्या है इनके प्रस्तुत धर्म प्रणाली का परिणाम देश पर क्या है। उन्हें न कुछ अनुभव है न ज्ञान।

निष्कर्ष, ज्ञान तथा बल के अनुयायी ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों के एक लम्बी अवधि तक के पारस्परिक उलट फेंर, दाँव पेंच, उतार चढ़ाव के संघर्ष ने, ज्ञान द्वारा स्थापित सार्वभौमिक धर्म, तथा बल द्वारा स्थापित सार्वभौमिक राज्य लगभग हज़ारों टुकड़ों में छिन्न भिन्न होगया। और ब्राह्मण की जगह बाभन और क्षत्रिय की जगह ठाकुर और सिंह रह गए। अभ दोनों जातियों का अन्तिम निपटारा नहीं हो पाया था कि इन दोनों की लड़ाई के बीच ही इस प्राणहीन धर्म तथा बल राज्य को जो भावी विश्व विकास तथा मानव विकास के लिए हानिकारक अथवा रोधक सिद्ध हो रहा था, नाश करने के लिए प्रकृति ने भारत से सुदूर प्रदेश अरब के मरुभूमि में एक मुस्लिम राष्ट्र को जन्म दिया। और उनको धर्म तथा बल के संयुक्त गुणों से सुसम्पन्न किया; जो यहाँ के ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों का अलग २ गुण था। मुस्लिम राष्ट्र यहाँ सनातन राष्ट्र के पूरक के रूप में आया।

धर्म-बल राज्य

धर्म तथा बल गुण से सम्पन्न मुस्लिम राष्ट्र जो वस्तुतः कौरव वंश के थे, भारत में पधारे। और अपने धर्म तथा बल की श्रेष्ठता का प्रमाण देते हुए भारत के छिन्न भिन्न राज्य तथा दूषित धर्म का नाश किया। मुसल्मानों ने ब्राह्मणों के विलास रूपी राज-प्रसाद मन्दिरों को लूटा और एकेश्वरबाद का पाठ पढ़ाया और राजपूतों के बल का मान मर्दन किया, उनकी रियासतों को छीन कर भारत का राजनैतिक एकीकरण किया। किन्तु कालान्तर में सनातन नियम के अनुसार इनमें स्वार्थ और अभिमान आया। फिर इनका भी नाश हुआ। आज यह भी औरों की भाँति तीसरे का दास बना हुआ है। भारत के धूनी के राख से दो बची हुई दाहक चिंगारियाँ गुरु गोविन्द सिंह (धर्म बल) तथा शिवाजी (धर्म-बल) के रूप में निकलीं और मुस्लिम राष्ट्र को सदा के लिये राज्य पद से हटाकर विश्राम लेने के लिए बाध्य किया।

मुस्लिम राज्य ने वैश्यत्व का नाश किया। भारत का धर्म बल तो नाश हो ही चुका था अब वैश्यत्व का भी नाश हुआ। यही मुस्लिम राज्य का परिणाम हुआ। इस समय ज्ञान से प्रलाप, धर्म से अधर्म, बल से परपीड़न, अन्याय; धन से विलासिता तथा मद का अवगुण प्रगट होकर ताण्डव नृत्य कर रहा था। उस समय भारत में कोई केन्द्रीय राज्य नहीं था। जिसके कारण देश की दशा अति शोचनीय हो रही

थी। देश में अराजकता का साम्राज्य था, सामाजिक उच्छृँङ्खलता फैलने से चारों ओर अगणित नवाब और राजा प्रगट हो रहे थे। लूट मार डकैती की कोई हद नहीं थी। अर्थात यह काल भारत के इतिहास का अन्धकाल कहा जा सकता है। कृषक और व्यवसायी, शिल्पजीवी, दुखी थे उनपर जघन्य अन्याय होता था। खेती का कोई प्रबन्ध नहीं था, न नहरें थीं, जिसके अभाववश समस्त देश की उपजाऊ शक्ति उत्तरोत्तर कम होती जा रही थी, और बहुत स्थानों पर प्रजा भूखों मरने लगी थी। देश की आर्थिक दशा नष्ट हो गई थी। निरुद्यमी, निकम्मे, छद्माचारियों की संख्या बढ़ गई थी। सारे देश में ऐसा कोई शक्तिशाली व्यक्ति या समूह नहीं था जो शान्ति संस्थापित करता, यथोचित शासन प्रबन्ध करता। सिक्ख, जाट, मरहठे चारों ओर उपद्रव कर रहे थे। ठगी डकैती का चारों ओर धूम मचा हुआ था। मरहठे चारों तरफ लूट मार मचाने लगे।

शासन नीति के अनुसार यह युग 'विलास युग' कहा जा सकता है। भारत के राजा नवाब अमीर कर्मचारी विलासिता के रंग में सराबोर थे। छोटे बड़े, दीन धनी, राजा, प्रजा सभी विलासिता के रंग में डूबे हुऐ थे। कोई नृत्य गान की मजलिस सजाता था, तो कोई अफीम की पीनक ही में मज़े लेता था। जीवन के प्रत्येक अंग में आमोद प्रमोद का प्राधान्य था। शासन विभाग में, सामाजिक व्यवस्था में, कला कौशल में, साहित्यिक क्षेत्र में, गद्य में, पद्य में, उद्योग धन्धों में, आहार

विहार में, खान पान में, रहन सहन में, सर्वत्र विलासिता प्रत्यक्ष विराज रही थी।

राज्य-कर्मचारो रिश्वतखोरी में, विषय बासना में, शायर और कविगण प्रेम और विरह के वर्णन में, कारीगर कलाबत्तू और चिकन बनाने में, व्यवसायी सुरमा, इत्र उबटन के रोजगार में निमग्न थे, सभी की नेत्रों में विलासता का मद छाया हुआ था। संसार किधर जा रहा है, राष्ट्र का भविष्य क्या होगा। इसकी किसी को खबर नहीं, बटेर लड़ रहे हैं, तीतरों की लड़ाई के लिये पाली बदी जा रही है। कहीं यार लोग चौसर बिछाये बैठे हैं। यह भारत की दशा थी। भारत में ब्राह्मणत्व, क्षत्रियत्व और वैश्यत्व का नाश हो गया था। केवल शूद्रत्व शेष था अर्थात भारत केवल दासता के काबिल था। ऐसा ही समय था जब कि पश्चिमी व्यापारियों ने यहाँ पर व्यापार आरंभ किया और शनैः शनैः यहाँ के शासक हो गये। भारत का वैश्यत्व चूँकि नष्ट प्राय हो चुका था इसलिये प्राकृतिक नियम के अनुसार यहाँ पर वैश्य राज्य आरम्भ हुआ और अचानक हुआ।

धन राज्य

ज्ञान, बल, धन गुणों के अभाव के कारण, इन गुणों से परिपूर्ण भावी राज्य संस्थापन के लिये, सबसे पहिले इस राष्ट्र सनातन में वैश्यत्व का सुधार ही आवश्यक था। इसलिये कम्पनी राज्य जो वस्तुतः वैश्य राज्य था चुप्पे २ स्थापित हुआ। इस राज्य

के संस्थापन के विषय में इंग्लैण्ड के विख्यात इतिहासकार डा० सर जान सिली लिखते हैं कि "भारतवर्ष हम लोगों को अन्धा धुन्धी में मिल गया। अंग्रेजी जाति बिना किसी कारण बिना किसी विचार और इरादा के, कोई इतना बड़ा कार्य नहीं किया, जितना कि भारतीय साम्राज्य की विजय। भारतवर्ष में हम लोगों के आगमन का उद्देश्य कुछ और था किन्तु करना पड़ा कुछ और। हम लोग भारत में व्यापार करने आये थे, किन्तु इसमें अफसल रहे। भारत में हम लोगों को आये १०० साल हो गया था किन्तु तब तक किसी देशी रियासत से लड़ने का स्वप्न भी नहीं देखा था। फिर इसके बाद कहीं हम लोगों को लड़ना पड़ा तो केवल अपने व्यापार की रक्षा के लिये। इसके ५० साल बाद तक हम लोगों के दिमाग़ में राज्य लेने का ध्यान भी नहीं आया। उन्नीसवीं सदी में हम लोगों ने देशी रियासतों पर अपना प्रभुत्व जमाया। लार्ड डलहौज़ी के गवर्नर जनरल होने के पहिले तक हम लोग अपने को वर्त्तमान स्थिति का प्रभु नहीं समझते थे। भारत में जब से हम लोग आये तब से सदैव हम लोगों की यह दशा रही कि देखते हम दूसरी तरफ हैं, किन्तु चले जाते थे दूसरी तरफ़। चाहते कुछ और थे, किन्तु मिल जाता था कुछ और।"

इस कथन से यह स्पष्ट है कि पश्चिमी वणिकों को भारत बिना प्रयास मिला। इसमें प्रकृति का वही सनातम नियम काम कर रहा था। भारत का तात्कालिक व्यापार और धन इनके हाथ में आ

गया। धन से मद का होना अवश्यम्भावी है। इनको भी इसी का शिकार होना पड़ा। और उस मद में जो इन्हों ने किया और जो वैश्य राज्य के नाश का कारण हुआ। उसका वर्णन पंजाब केसरी लाला लाजपत राय ने इस प्रकार किया है।

"हिन्दू और मुसलमान, राष्ट्र और राज्य, जाट और राजपूत मरहठे और क्षत्रिय, रुहेले और बुन्देले, बुन्देले और पठान निर्विवाद परस्पर खूब लड़ाये गये। सुलह की गई और बिना किसी कारण तोड़ दी गई। पक्ष ग्रहण की गई और छोड़ दिये गये। और बिना ईमानदारी या सत्य का विचार किये ही बदल दिये जाते थे। राजसिंहासन खरीदे जाते और सबसे बड़ी बोली बोलने वाले के हाथ बेच दिये जाते, सैनिक सहायता खरीदी जाती और वाणिज्य वस्तु की भांति बेच दी जाती। सेवक धो ा देकर अपने स्वामियों को अपने सैनिक झण्डों के, बिना यह बिचारे कि इसका दण्ड क्या होगा परित्याग करने के लिये उत्तेजित किये जाते। राजपूतों को परस्पर लड़ाने और कष्ट में डालने के लिये बहाने और अवसर ढूँढ़े जाते थे। इन दिनों राष्ट्रीय, व्यवहारिक, धार्मिक और नैतिक सभी प्रकार के प्रणालियों और नियमों का उल्लंघन किया जाता था। नाबालिगों और विधवाओं का कुछ ख्याल न किया जाता था। युवक और वृद्ध दोनों समान समझे जाते थे बस लूटना, डाका मारना और एक साम्राज्य स्थापित करना ही एक मात्र ध्येय था। उनका प्रत्येक कार्य्य केवल इसीलिए होता था।"

ज्ञान-बल-धन राज्य

भगवान राम द्वारा स्थापित ज्ञान-बल राज्य महाभारत के समय तक था। और विश्व के दो चौथाई पर फैला हुआ था। इसके बाद उसका पतन हुआ। सैकड़ों उलट फेर, परिवर्त्तन, सम्वर्द्धन के बाद आज वर्त्तमान अंग्रेजी राज्य संसार के सामने है, जो विश्व के तीन चौथाई भाग पर प्रभाव रखता है। और राम राज्य से अधिक विस्तृत, अधिक संगठित तथा अधिक प्रभावशाली है। क्योंकि अंग्रेजी राष्ट्र तीन गुण ज्ञान, बल तथा धन से संगठित है।

वर्त्तमान ब्रिटिश साम्राज्य संसार के इतिहास में एक अभूतपूर्व तथा आश्चर्यजनक घटना है। प्राचीन काल में इस विश्व में बड़े २ साम्राज्य थे, किन्तु ब्रिटिश साम्राज्य अपने ढग का अनोखा है। एक छोटे से द्वीप समूह ने एक ऐसा वृहद साम्राज्य स्थापित कर दिया है, जिस पर सूर्य भगवान कभी अस्त ही नहीं होते। जिसमें ४० करोड़ मनुष्य रहते हैं और जिसका क्षेत्रफल अफ्रीका महाद्वीप के बराबर है। ब्रिटिश साम्राज्य विश्व का सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वप्रधान साम्राज्य है। इसका क्षेत्रफल एक करोड़ ग्यारह लाख वर्ग मील से अधिक है। इसकी आबादी संसार के चौथाई आबादी से अधिक है। इस साम्राज्य के प्राणस्वरूप ब्रिटिश टापू है। और इसके प्रधान भाग कनाडा, न्यूफाउण्डलैंड, साउथ अफ्रीका, भारतवर्ष आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड हैं। इन प्रधान

भागों के अतिरिक्त कितने ही द्वीप, जैसे लङ्का, इंडीज़ आदि, कितने ही रक्षित राज्य, जैसे मिश्र, जँजीबार आदि. कितने ही अधिकृत देश, जैसे सूडान, मिसोपोटामिया आदि, इस साम्राज्य के मातहत हैं। इस साम्राज्य में अनेक भाषायें बोली जाती हैं, और इसमें अनेक सभ्य, अर्द्धसभ्य, तथा असभ्य जातियाँ निवास करती हैं, जिनमें अनेक धर्म तथा मत मतान्तरों का प्रचार है। वास्तविक बात तो यह है कि वर्त्तमान अँग्रेजी राज्य के नक़शे को देखकर यह अनुमान करना असंभव हो जाता है कि किसी ज़माने में (अर्थात १५०० वर्ष पूर्व) वर्त्तमान अँग्रेज़ों के पूर्वजों का ब्रिटेन में प्रायः पता तक न था।

भगवती प्रकृति की लीला तथा जगत नियन्ता विश्वम्भर की माया अपरम्पार है, वह किस क्षण में किसको बढ़ा दे, किसको घटा दे अर्थात क्या कर डाले यह किसी को ज्ञात नहीं। जो इंग-लैंड सदा निराहार मग्न रहता था, भूखों मरता था, दैनिक भोजन का निश्चित ठिकाना नहीं था, जिसके निवासी भोजन अर्जन के लिए देश परदेश मसाला बेचते थे आज भगवती अन्नपूर्णा उनके द्वार पर युगल कर जोड़े विनीत भाव से खड़ी हैं। जिस इंगलैंड में सूर्य भगवान के दर्शन प्रायः दुर्लभ होते हैं, वहाँ के निवासी संसार में आज वह साम्राज्य स्थापित कर रक्खा है, जिसपर सूर्य भगवान को अस्त होने की हिम्मत नहीं पड़ती। जो इंगलैंड भारत की सम्पत्ति का अनुमान नहीं कर सकता था, आज भारत की विशाल सम्पत्ति उनके पैरों पर निछावर हो रही है। जो इंगलैंड

जीवन यात्रा की मीमांसा में सदैव माथा पचाया करता था आज, सुख, समृद्धि, वैभव, गौरव उसका गुलाम बना हुआ है। ऐश्वर्य उसके यहाँ झाड़ू दिया करती है। जिस इंगलैंड से संसार अनभिज्ञ था. आज उसके आतंक से सारा विश्व कम्पायमान हो रहा है, उसके कीर्ति सौरभ से चारों दिशायें देदीप्यमान हो रही हैं। जिस इंगलैंड के बड़े २ नृपतियों को वे सुख प्राप्त नहीं थे जिनको भारत का मज़दूर भोगा करता था, आज उसी इंगलैंड का एक मज़दूर उन सुखों का भोग कर रहा है जो भारत के राजा नवाबों को दुर्लभ हैं। जो इंगलिस्तान वाणिज्य व्यवसाय के लिए दर दर मारा मारा फिरता था, आज देश देशान्तरों के नरपतियों महिपालों के मुकुट मणियों से उसके चरणारबिन्द चमक रहे हैं। जिस इंगलैंड को दिल्लीश्वर के दर्शनों की अभिलाषा रहा करती थी, वही इगलैंड आज जगत मुकुट भारत के सिंहासन, जिस पर महाराज भोज बैठने से भयभीत होते थे, सार्वभौमिक चक्रवर्ती राजा की नांई विराजमान है। क्यों ? क्योंकि अँग्रेजी राष्ट्र में ज्ञान (ब्राह्मत्व) बल (क्षत्रित्व), धन (वैश्यत्व) सनातन राष्ट्र के तीनों गुणों का एक अपूर्व सयोग है। गत विश्वब्यापी धुरी राष्ट्रों के महायुद्ध के परिणाम पर नज़र डालिए तो यह कथन और भी अधिक स्पष्ट हो जाता है। उस वक्त संसार में कोई भी ऐसा ब्यक्ति, ज्ञानी, अज्ञानी, मित्र, शत्रु, ज्योतिषी और भविष्य वक्ता नहीं था, जो अग्रेजों के समूल नष्ट होने में तनिक भी सन्देह करता रहा हो। आज गये, कल गये, यह गये, वह गये यही इनका

भविष्य था। इन्होंने हिटलर, मुसोलिनी, और ईश्वर औतार मिकाडो के संयुक्त लोहा के चतुर्मुखी मोरचा को धैर्य्य पूर्वक, मुकाबिला किया, अपने ज्ञान (धर्म और नीति) द्वारा रूस को जर्मन का खूँख्वार शत्रु बना दिया, कुबेर तुल्य अमरीका का सारा धन बल, जन अपने पक्ष में करा लिया। बल का प्रदर्शन ऐसा किया कि युद्ध अनिवार्य हो जाने पर हज़ार विपत्तियां सही, सैकड़ों उतार चढ़ाव देखे, किन्तु भयानक तूफान के विरुद्ध छाती खोल कर ऐसे अड़े कि युद्धस्थल से शत्रु पर विजय करके ही लौटे। विश्व विजय का महत्वकांक्षी अजेय हिटलर मुँह दिखाने लायक न रह गया, मुँह छिपाकर लापता हो गया। और उसके विश्वास पात्र, गोयरिंग, गोयबिल और रिबनट्राप, हेस आज उसी ८ करोड़ नरसिंह जर्मनियों के सामने फाँसी के तख्ते के शिकार हो गये। मुसोलिनी की लाश चील कौओं का ग्रास बनी। विष्णु के अवतार जापान का मिकाडो इनका पुजारी हो गया।

पाठकगण अब यह बात भली भाँति समझ गये होंगे कि अँग्रेजी राष्ट्र ज्ञान, बल तथा धन गुण से भरपूर है। बल और धन का प्रमाण तो गत महायुद्ध ही से लग जाता है। अब ज्ञान का सर्वाङ्ग प्रमाणित होना आवश्यक है। ज्ञान के दो स्पष्ट अङ्ग होते हैं विज्ञान और धर्म। विज्ञान के अंग ज्ञान, आविष्कार, कला कौशल, शिक्षा तथा राजनीति में यह भली भाँति पारगत हैं। ज्ञान का दूसरा अंग धर्म है, जिसका विकृति

रूप मानव जाति फलत: किसी भी राष्ट्र का दुर्धर्ष भयानक शत्रु है। यह लाखों खूँख्वार पशुओं से ज्यादा रक्त-पिपासु और करोड़ों घृणित ठग से ज्यादा ठग है। दूषित धर्म के आड़ में हत्या, अपराध, व्यभिचार, पाप पाखण्ड, अनाचार, झूठ, ठगी, धूतर्ता छल और बेवकूफ़ी की खूब बन आती है और यही धर्म दूषित होकर अन्त में राष्ट्र के नाश का कारण होता है। किन्तु अंगरेज़ों ने ज्ञान के इस अंग, धर्म को इस सुचारु रूप से संगठित किया है कि इनके राष्ट्र के नाश का अन्य कोई भी कारण हो सकता है किन्तु धर्म नहीं। धर्म का मसला इन्होंने इस प्रकार हल किया है जैसा आज तक कोई भी राष्ट्र नैतिक दृष्टि से नहीं कर पाया।

अंग्रेजी धर्म वैदिक है

अंग्रेजों का धर्म ईसाई धर्म है, जिसके प्रवर्तक प्रभु ईसा मसीह हैं। डा० प्रिन्सपै ने लिखा है कि पश्चिमी एशिया के बौद्ध लोगों ने जब ईसाई मत ग्रहण कर लिया तो उन्होंने ईसाई धर्म में वे विधि क्रिया, रीति रस्म मिला दीं, जो कि भारतवर्ष में कितनी ही शताब्दियों तक प्रचलित रही थीं। ईसाई धर्म ने महान संस्थाओं का संस्थापन, गिरजों में पूजा करना, धर्म सम्बन्धी झगड़ों को तै करने के लिये सभाएं एकत्रित करना, प्राचीन समय की अवशिष्ट पवित्र वस्तुओं की पूजा करना और उनके सहारे अद्भुत कर्म (करामातें) करना ये सब बातें भारत के सनातन धर्म से सीखी हैं।

१५ नवम्बर १९१४ ई० के पार्लियामेण्ट आफ रिलीजन्स

(विश्व-धर्म महासभा) अमेरिका में पं० केशवदेव शास्त्री ने व्याख्यान देते हुये प्रभु ईसा मसीह के विषय में ऐसा कहा था जिसका कोई विरोध नहीं हुआ "हिमिस नामक मठ में निकोलस नोटोविच को ईसा मसीह की जो जोवनी मिली है वह यदि एक सच्ची ऐतिहासिक पुस्तक सिद्ध हो जावे तो हमें स्वीकार करना पड़ेगा कि ईसा मसीह ने १४ साल तक भारतवर्ष में निवास किया। जगन्नाथ, राजगृह और बनारस में वह ६ बरस तक रहे। ईसा मसीह ने जो नैतिक शिक्षायें दी हैं वे वैदिक शिक्षाओं से भिन्न नहीं हैं"। इस कथन से यह सिद्ध होता है कि ईसा मसोह वैदिक शिक्षा से दीक्षित थे उन्होंने जो धर्म प्रचार किया वह वैदिक था।

धार्मिक संगठन के पूर्व अंग्रेजों की धार्मिक व्यवस्था क्या थी इसे देख लेना अति आवश्यक है। प्राचीन काल में यूरोपीय देश जैसे ब्रिटिश टापू, जर्मनी, फ्रान्स, इटली आदि रोम निवासी सर्वमान्य पादरी को ईसाई धर्म का मुखिया मानते थे। वह पोप कहलाता था। और उसकी आज्ञा में अन्यान्य देश के पादरी वर्ग थे। कतिपय पोपों ने राजाओं पर भी अपना प्रभुत्व जमा लिया था। इस प्रकार पोप ही रोमन कैथालिक चर्च का हर्त्ता, कर्त्ता तथा विधाता था। मध्यकाल में चर्च की तूती बोलती थी, जिससे पादरी वर्ग बड़ा धनी हो गया। इसके फलस्वरूप पोप से लेकर प्रायः सभी छोटे बड़े पादरो विलासप्रिय हो गये थे। उच्च पदस्थ पादरियों में इतने दुर्व्यसन फैले कि वे धर्म कार्य करने की उपेक्षा करने लगे। किसी न किसी प्रकार से धन सञ्चय ही

उनके जीवन का लक्ष्य हो गया। धर्म के नाम पर अनेक अत्याचार होते थे। ग़रीब जनता बेतरह लूटी जाती थी उसे ठगने के अनेक युक्तियाँ थीं, जिनमें एक 'इन्डलजेन्स' भी था। इसका उद्देश्य था कि पोप को किसी भी जीवित अथवा मृत पुरुषों के पापों के क्षमा करने का अधिकार है। और धन लेकर पोप के अनुचर इन्डलजन्स नामक पापनाशक क्षमापत्र बेचने लगे। सोलहवीं शताब्दी में धर्मान्धता का बाजार खूब गर्म था। इस काल को 'अन्धयुग' कहते हैं। प्रत्येक सम्प्रदाय अन्य सम्प्रदाय का द्वेषी था। और बिपक्षियों को क्रूर यंत्रणा देकर अपने सम्प्रदाय का प्रचार का प्रयत्न करता था। राजा जिस मत विशेष का होता था उससे राज्य में उसी मत की तूती बोलती थी। दूसरे सम्प्रदाय बाले जिन्दा ही जला दिये जाते थे। धर्म के नाम पर युद्ध होते थे, और खून की नदियाँ बहती थीं। ऐसे युग को नष्ट करके अँग्रेज जाति ने नवीन धर्म का संगठन किया जिसका नाम प्रोटेस्टेंट है। जैसे भारत में 'आर्य समाज' है धर्म किस प्रकार संगठित किया देखिए।

प्राचीन काल में यूनान देश ही यूरोप की सभ्यता, विद्या, कला कौशल तथा शास्त्र विज्ञान का केन्द्र था। यूरोप का वही एक मात्र बिद्यापीठ था। यूनान से शास्त्र, कला, तथा सभ्यता-संस्कृति का प्रचार रोम में हुआ। तत्पश्चात रोम से सारे यूरोप में विद्या की ज्योति फैलने लगी। गैलीलियो कोपर्निकिस तथा अन्य वैज्ञानिकों के आविष्कार द्वारा यूरोप में अन्धविश्वास तथा अज्ञानता का अन्धकार दूर होने लगा।

शिक्षितों के विचारों में घोर परिवर्त्तन होने लगा और स्वतंत्र विचारों की वृद्धि होने लगी' इसी समय एक घटना और घटी, जिससे स्वतंत्र विचार तथा शास्त्र का प्रचार और भी बढ़ा। सन् १४५३ ई०में कुस्तुनतुनिया तथा यूनान पर तुर्कों का अधिकार हो गया। अतएव यूनान के पंडित अपना अपना पोथी पत्रा लेकर इटली भागे और फ्लोरेन्स, मोलन, वेनिस आदि रियासतों में बस गये। यहाँ इन्होंने यूनानी शास्त्रीं का अध्ययनअध्यापन कर ऐसी जागृति उत्पन्न की कि इंगलैंड, फ्रान्स, जर्मनी से विद्यार्थियों के झुंड के झुंड इटली की यात्रा करने लगे। इस प्रकार यूनानी शास्त्र, विज्ञान का प्रचार हुआ और यूरोप ने नया कलेवर धारण किया। और प्राचीन रूढ़ियों तथा भ्रान्तियों को तिलांजलि देकर स्वतंत्र विचारों को ग्रहण कर उन्नति के मार्ग में अग्रसर हुआ। जिसका फल उसकी वर्त्तमान सर्व मान्यता तथा संसार प्रभुता है।

इस सुधार लहर (रिनेसां) का ज़ोर इंगलैंड में सोहलवीं शताब्दी में हुआ। इस काल में आक्सफोर्ड का विश्व विद्यालय साहित्य तथा विज्ञान का केन्द्र होकर सर्व प्रसिद्ध हो गया। जान कालैंट, टाम्समूर तथा इरेस्मस ने विद्या का प्रचार कर देश की सेवा की। इन महामान्य विद्वानों ने आक्सफोर्ड में रिनेसां की ज्योति जगमगा दी। बस क्या था अंग्रेज़ों का धार्मिक संगठन हो गया जो 'प्रोटेस्टेन्ट धर्म' कहलाता है।

बलः—

इसके पश्चात इस जाति ने जातीयता तथा स्वदेश भक्ति का सगठन किया और स्वेच्छाचारी बादशाहों को हटाकर प्रजातंत्र राज्य स्थापित किया । इतना सुगठित, अभेद्य तथा व्यापक प्रजातत्र राज्य आज तक संसार में स्थापित ही नहीं हुआ । इसको पार्लियामेंटरी गवर्नमेंट कहते हैं । देशों ने इसकी नकल की किन्तु इसके रहस्य को न पा सके । साधारणतः प्रत्येक देश के शासन में तीन प्रधान भाग होते हैं। (१) राजा, (२) अमीर, और (३) जन साधारण। प्रत्येक देश में शासन सम्बन्धी बातों में इन तीनों में कोई न कोई अंश अवश्य असन्तुष्ट रहता है। किन्तु इंगलैंड में तीनों समान रूप से संतुष्ट है। शासन में तीनों का समान अधिकार है और सब से अधिक मज़े की बात तो यह है कि प्रत्येक विभाग यह समझता है कि उसका अधिकार दूसरे की अपेक्षा अधिक हैं। यह शासन विधान यों है। (१) कामन्स सभा (२) लार्ड सभा (३) सम्राट । कोई भी प्रस्ताव हो सब से पहिले वह कामन्स सभा में रखा जाता है, वहाँ से पास होने के बाद लार्ड सभा में आता है, वहाँ स्वीकृत हो जाने पर, अन्त में राजा के पास स्वीकृति तथा हस्ताक्षर के लिए जाता है। इस प्रकार तीनों अधिकार समान हैं। और प्रत्येक एक दूसरे से अधिक अधिकारी बताता है। किन्तु वास्तव में एक दूसरे के अधीन रहते हैं। जन साधारण सभा का सब से अधिक विश्वास पात्र ही साम्राज्य का प्रधान मन्त्री होता

है। और वही साम्राज्य भर का सर्वे सर्वा होता है। इस प्रकार राजा का प्रधान मन्त्री जन साधारण में से ही होता है। अंग्रेजों के शासन के इस प्रकार का गठन ही उनके राष्ट्र का बल है। और क्षत्रियत्व है। अँग्रेजों ने अपने इस प्रकार के अनुशासित क्षत्रित्व के बल पर अपने समय के विश्वविजयी राष्ट्रों और व्यक्तियों को परास्त किया, उदाहरण के लिये, स्पेनिश जहाजी बेड़ा, नेपोलियन, विस्मार्क, कैसर, हिटलर, मुसोलिनी और जापान का ईश्वर औतार मिकाडो आज भी पेश किया जा सकता है।

असन्तोष का कारण

सेवा गुण की कमी

अंग्रेजी राष्ट्र—ज्ञान, बल तथा धन गुणों से पूर्णतः सम्पन्न है. जैसा कि वर्त्तमान संसार के किसी राष्ट्र में नहीं है। किन्तु संसार में इनके विरुद्ध तब भी एक बड़ा भयानक असन्तोष फैला हुआ है। इसका एक मात्र कारण है इनमें सेवा गुण की कमी। सेवा गुण में चार स्पष्ट भाग होते हैं। इस राष्ट्र के शासन में ये चारों भाग दूषित तथा अपूर्ण हैं। (१) अवैतनिक (२) वैतनिक, (३) दैनिक वैतनिक (४) तथा प्रजा की सामूहिक सेवा।

अवैतनिक सेवा

अवैतनिक सेवा में वे शामिल हैं, जो जाहिरा अपने परिश्रम के लिये बिना कुछ लिये ही कार्य्य करने के लिये अपनी स्वेच्छा से

प्रतिज्ञाबद्ध होते हैं। ब्रिटिश राज्य में इस प्रकार के अवैतनिक सेवकों के बहुत से विभाग हैं जिन्हें स्टेट उनके इस प्रकार के सेवाओंके लिये राय, रायबहादुर, सर आदि की उपाधियों से तथा आनरेरी मैजिस्ट्रेटी आदि अधिकारों से विभूषित करती है। किन्तु ये सब इस अवैतनिक पद से कुछ न कुछ अपना स्वार्थ साधते और येन केन प्रकारेण रिश्वत लेकर अपने परिश्रम और ज्ञान तथा कला का मूल्य चुका लेते हैं। जिससे राष्ट्र तथा शासन में शनैः शनैः अप्रतिम रूप से वाह्याडम्बर का अवगुण समावेशित होता जा रहा है।

इस अवैतनिक सेवा में, सनातन राष्ट्र के नियम अनुकूल वर्त्तमान वकील, वैरिस्टर, डाक्टर, पुस्तक-लेखक और राष्ट्र सेवक भी गिने जाते हैं। ये लोग मुफ्त सेवा के बदले में जनता से अपने परिश्रम का ही मूल्य नहीं बल्कि अपने ज्ञान तथा तात्कालिक परिस्थिति का भी मूल्य भरपूर चुका लेते हैं, आज तो ये लोग राष्ट्र शोषक की उपाधि से विभूषित किये जा रहें हैं।

वैतनिक सेवा

वैतनिक सेवा में राज्य कर्मचारी हैं। इन्हें स्टेट से मुँह माँगी तनख्वाह तथा सुविधायें मिलती हैं किन्तु ये अपनी तनख्वाह से कहीं अधिक रुपया प्रजा को सता कर रिश्वत के रूप में लेते हैं। राज कर्मचारियों में भी दो भाग हैं—देशी और अंग्रेजी। अँग्रेजी कर्मचारी अधिकांश रिशवत खोर नहीं हैं। यह भारतीय

कर्मचारी हैं जो रिश्वत खाते हैं। और यह रिशवत खोरी की आदत उन्हें मुसलमानी शासन से मिली है। जो अब तक नहीं छुटी, और लुक छिप अपनी इस आदत को किसी न किसी प्रकार जारी रक्खे हैं। और अँग्रेजी राजकर्मचारियों को डाली दे दे कर रिश्वत खोर बनाने की चेष्टा करते रहते हैं। जहाँ विशुद्ध अंग्रेजी कर्मचारी हैं वहाँ वे अपने कार्य्य का सेवा तो नहीं, किन्तु ड्यूटी और कर्त्तव्य समझ कर आज भी करते रहते हैं। प्रा० चतुरसन शास्त्री कहते हैं कि "रिश्वत के लिये सरकारी नौकर इतने प्रसिद्ध हो गये हैं कि रिश्वत देना उनसे काम लेने वालों का एक जरूरी खर्च हो गया है। वे लोग रिश्वत को अपना हक समझ कर माँगते हैं। पुलिस और साधारण अरदली से लेकर जज तक रिश्वत खोर हैं।"

इसी के विरुद्ध इसी अंग्रेजी शासन के मातहती में भारत से अलग दूसरे देशों के कर्मचारी सेवक हैं, स्वामी रामतीर्थ परम हंस ने अपने एक व्याख्यान में कहा था, "इंगलैंड की पुलिस अजहद शाइस्ता और रिआया की खिद्मत गार है। प्रजा रक्षक है, प्रजा भक्षक नहीं।" इस वाक्य की पुष्टि मि० जी० डी० अग्निहोत्री (पेरिस) अपनी आँखों देखी इस प्रकार करते हैं जो अप्रेल १९३३ के विश्वमित्र में प्रकाशित हो चुका है।

"भारत में पुलिस का नाम सुनते ही लोगों में भय फैल जाता है। ब्रिटेन में भी पुलिस है वहाँ का कानेस्टेबुल आदर्श मनुष्य समझा जाता है। बावजूद इसके कि वह भी समय पर सभा भंग करता है और गाढ़े अवसरों पर

गोलियां चलाता है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि लन्दन में पुलिस को देखकर प्रसन्नता होती है। लन्दन का पुलिस वाला पथ-प्रदर्शक है। उसे लन्दन का सारा नक़्शा याद है। यहाँ प्रायः दस हज़ार से अधिक गलियाँ है। वह आपको छोटी से छोटी गली का पता बता देगा। वहाँ का रास्ता आपको समझा देगा। यदि आप ट्राम, लारी, बस, भूगर्भ गाड़ी से वहाँ जाना चाहें तो उनके नम्बर और कितने स्टेशन के बाद आपको उतरना पड़ेगा, वह सब बता देगा। भले ही उसे अपनी डाइरेक्टरी देखनी पड़े। पन्द्रह मिनट आपको समझाने में लगाने पड़े अथवा आपको गाड़ी पर सवार कराकर कण्डक्टर से कहना पड़े, कि इन्हें अमुक स्टेशन पर उतार कर अमुक गली का रास्ता बता देना। किन्तु यह कदापि अपना शिष्ट व्यवहार न छोड़ेगा। सदा नम्र, सदा विनीत। यह कान्सटेबुल सज्जनता की विशाल मूर्ति की भाँति आपके बगल में है"।

"उसके बाद पुलिस की कई प्रकार की सेवाएं देखी। सड़क में यदि इस पार से उस पार जाने से ख़तरा है तो बच्चों तथा बूढ़ों को पुलिस वाला हाथ पकड़ कर दूसरे फुटपाथ (सड़क के बगल वाले पगडंडी) पर छोड़ आता है। किसी को रास्ता बताता है, तो किसी को बस, ट्राम या मोटर पर सवार करा ड्राइवर को आज्ञा देता है, कि उन्हें अमुक स्थान पर उतार देना। आप कान्सटेबुल का चाहे जितना समय लीजिए पर वह कभी क्रुद्ध न होगा और न शिष्टाचार छोड़ेगा। असल बात यह है कि लन्दन का पुलिस वाला शिष्टाचार में उतना ही उन्नत है जितना

विलायत का प्रधान मंत्री रामजे मेकडानेल्ड अथवा कोई भी कुलीन लार्ड।"

पाठकगण इन दो प्रकार के कर्मचारियों के व्यवहार का अन्तर स्पष्ट ही देख लिया। किन्तु अंग्रेजी कर्मचारी सर्वथा निर्दोष नहीं है। उन्हें भी काले गोरे का भेद करना खूब आता है जो उन्हें सार्वभौमिक सेवा के गुण से वंचित कर देता है। अँग्रेजी कर्मचारी, हिन्दुस्तानी कर्मचारी अथवा हिन्दुस्तानियों को घृणा तथा अवहेलना की दृष्टि से देखता है। उनमें स्वतंत्रता पूर्वक मिलता जुलता नहीं, जो शासकवर्ग कर्मचारियों को सर्वथा अनुचित है।

दैनिक वैतनिक

इस कक्ष में भारत के कृषक मज़दूर और ९ करोड़ अछूत, हरिजन, दलित, अन्त्यज आदि जातियाँ शामिल है। इनकी दयनीय दशा अवर्णनीय है। हिन्दोस्तान के भी अच्छे दिन थे जब इसका शिल्प-सामान रोम, चीन जापान, मिश्र, ईरान, अरब और इंग्लैण्ड में जाया करता था। उस समय उस देश में दुभिक्ष और दरिद्रता नहीं थी। यह देश लक्ष्मी से परिपूर्ण था। किन्तु भारत ने समय पहचान कर काम नहीं किया। आत्म रक्षा में ढीला होने से मुसलमानी राज्य में ही इसके व्यापार को धक्का लगा, और अंग्रेजों के पधारते ही, इनकी सत्ता का सूत्रपात्र होते ही, भारत के व्यापार में भयंकर उथल पुथल हुआ। विदेशी शासन, कूटनीतिज्ञों की पालिसी, और अभागे भारत की अन्धकारमय

मूर्खता से इस देश के व्यापार की जड़ पर कुठाराघात होता गया। कला कौशल और उद्योग धन्धों के साथ साथ लक्ष्मी भी खिसक कर विदेश चली गई। ब्रिटेन ने भारतीय व्यापार का अपहरण किया। इस देश को कला-कौशल तथा सम्पत्ति-हीन कर डाला। होश आने पर भी अभी हम अँगड़ाईयाँ ले रहे हैं। मजबूर हैं। करवट लेने के लिये प्राण कहाँ है।

वास्तविक बात तो यह है कि हिन्दोस्तान का सम्पूर्ण व्यापार विदेशियों के हाथ में है। भारत के व्यापार का कुल लाभ विदेश जाता है। रेल, तार, ट्रामवे, सोना, चाँदी आदि की खानें, मिट्टी के तेल के कारखाने, कोयला सन, ऊन, नील, चाय, कहवा, कागज़ आदि कतिपय सभी कारखानों के मालिक अँग्रेज हैं। भारतवासी या तो एजेन्ट हैं या दलाल। आटा पीसना, रुई दबाना हमारे कुलियों का काम है। और उससे लाभान्वित होना अँग्रेजों का। सच बात तो यह है कि अब भारत में न व्यापार है न कृषि, सब के सब कुली और मजदूर होगये हैं।

भारत के तीन चौथाई निवासी, गांवों में रहते हैं यहाँ के गाँवों की संख्या लगभग ८ लाख है और कसबों तथा नगरों की सँख्या कुल २३ लाख है। भारत के ताल्लुकेदार या ज़िमीन्दारों का नाम तो कृषकों की संख्या में आ नहीं सकता। ये लोग कृषक और सरकार के बीच के जाबिर कमीशन एजेन्ट हैं। इनका नाम तो केवल काश्तकारों को लात, जूता घूँसा लगाकर लगान वसूल करना है, बस। उजड़े हुये काश्तकारों को उजाड़ देना ही इनके कर्त्तव्य की इति श्री है।

बेचारे काश्तकारों के पसीने की कमाई पर भारत सरकार और इसके एजेन्ट मज़े उड़ाते हैं और ये अनाथ सब पैदा करके दूसरों के हवाले करके आप ज़िन्दगी के दिन गिनते रहते हैं। इनकी दुर्दशा का संक्षिप्त वृतान्त लिखते हुए कलेजा फटा जाता है। ।

मज़दूरों की यह हालत है, कि ताल या बांध से दोग्ला चला कर खेत सींचने वाले को १॥ से २॥ सेर तक; कुंए पर मोट चलाने वाले को १॥ से २, निराने वाले को १॥ से २ सेर और खपड़ा छाने वाले को ८ पैसे से १२ पैसे तक मिलता है। औरत और लड़कों को मर्दों की आधी मजदूरी मिलती है।

दिन भर का काम करने वाले मर्द की खूराक २४ घण्टे में १ सेर, स्त्री ३ पाव और लड़के की २ पाव रखी गई है। दुखिया देहाती मज़दूर, ३ लड़के और एक स्त्री मिलकर ५ प्राणियों का उसका परिवार है। वह पुरवट हाँकता है, उसकी स्त्री मोट उलटती है। और बड़ा काम करने लायक लड़का, खेतों में कियारी काट कर पानी पहुँचाता है। सब मिलकर ४ सेर अन्न रोज़ कमाते हैं। ३ सेर खाते हैं। १ सेर नमक तेल तम्बाकू और गोद के बच्चे के लिए दूध मोल लेते हैं। बाकी एक सेर बचाते हैं। देहातों में हमेशा काम नहीं मिलता फसल फसल पर मिलता है। वे ८ महीना काम करते हैं। चार महीने बैठे रहते हैं। सालभर खाने के लिए १०८० सेर अन्न चाहिये और ये कमा सकते है सिर्फ ९६० सेर अर्थात १२० सेर की कमी पड़ती है। ४० दिन के खाने का का सामान घटता है। इसको पूर्ति यों

होती है कि ८० दिन वे आधा पेट खाकर बसर करते हैं।

बोझा ढोने वाले कुली सिर्फ ४ आने रोज़ कमाते हैं। ठेला खींचने वाले की आमदनीकी भी यही औसत है। लोहार, सोनार, बढ़ई, दर्जी, हजाम किसी की आमदनी की औसत ४ आने रोज़ से ज्यादा नहीं पड़ती बाज़ बड़े शहरों में शायद इससे कुछ ही ज्यादा औसत पड़ती हो। पर उसके साथ ही वहाँ रहने का भी खर्च ज्यादा है।

चार रुपया महीना और खाना पाकर खिदमतगार खुशी से काम करते हैं। ५) महीना में ५ फुट ६ इंच लम्बा जवान २४ घण्टे हाज़िर रहेगा। देहाती चौकीदार की तनख्वाह ३) महीना है। सिवा हिन्दोस्तान के और किसी भी देश में बेगार का दस्तूर नहीं है। अर्थात आप जितने आदमी चाहिए पकड़ लीजिए, उनसे काम कराइये और मज़दूरी का एक पैसा न दीजिऐ। पुलिस वाले, तहसील वाले, दौरे पर जाने वाले अमले और ज़मीन्दार हमेशा बेगार काम लेते हैं।

पुरुषों की तो यह कैफियत है। अब स्त्रियों की दशा देखिये। कहारिन गहरे कुँऐ से पानी खींच कर घर घर पहुँचाने के लिए (एक हण्डा रोज) एक आना महीना पाती है। ३० हण्डा पानी की मज़दूरी एक आना हुई। कोई औरत ३० हण्डे रोज से ज्यादा नहीं खींच सकती। तब एक आना रोज़ हिसाब पड़ा। इसी एक आने में ३० पुड़िया फूलों की कीमत शामिल है। आटा पीसने वाले को एक पैसे में २ सेर गेहूँ पीसना होता है। कण्डी और लकड़ी बेचने वाली ५-६ मील से लकड़ियाँ ढोकर

लाती हैं तब ४, ५ पैसे ये मुश्किल से पाते हैं। तरकारी वाली को यदि किसी दिन चार पैसे बच जायँ तो बहुत है। भँगिन निहायत गन्दा काम करती है, और आँधी पानी में नित्य आती हैं। फिर भी इस गन्दी और कड़ी परिश्रम के लिये, फी आदमी दो पैसे महीना पाती है।

मि० बोवायज कमिश्नर साहेब सीतापुर ने एक गाँव के २० खानदानों की जाँच करके प्रमाणित किया है कि एक युवा पुरुष के खाने का खर्च १४॥) और लड़के का ७=) हैं। संयुक्त प्रान्त के सेन्ट्रल जेल में खिलाने का खर्च १८-)॥। है। डिविजनल जेल में २४।=) १० पाई। और डिस्ट्रिक जेल में १५॥)॥, इसी से वे लिखते हैं कि हमारे कैदियों का स्वास्थ जेल खाना छोड़ने के वक्त ज्यादा अच्छा रहता है बनिस्बत उसके कि जब वे जेल में दाखिल होते हैं। और ठीक भी यही है। इसलिये हिन्दुस्तानी गुन्डे जेल को ससुराल कहा करते हैं।

हमारी शिल्प-कला और लगभग सारे उद्योग धन्धे विदेशियों के हाथ में हैं। कुल उद्योग, कुल व्यापार, प्रायः विदेशियों के रुपये से होता है। और इसलिये नफे का बहुत बड़ा भाग विदेश चला जाता है। राज्य के कुल बड़े बड़े पदों पर विदेशी कर्मचारी नियुक्त हैं, उनके वेतन का बहुत बड़ा हिस्सा और बचत का कुछ रुपया विदेश जाता है। और काश्तकारों का पेट नहीं भरता। वे भूखे ही सो रहते हैं। गाँव के गाँव खाली पेट सो रहते हैं। जब गाँव ही अन्न से खाली है तो पेट क्यों न खाली रहे? सोने और चांदी के गहने गायब हो गये। अब उनके एक

मात्र धन, पीतल आदि के बर्तन भी गिरवी रखे जा रहे हैं।

जब देश में सेवा के अनुयाई (शूद्रों) की ऐसी भयानक दशा है, ऐसी शोचनीय अवस्था है, तब यदि पवित्र भारत में व्यभिचार, जुर्म और नशेबाज़ी बढ़ती जाती है तो इसमें आश्चर्य की बात क्या है ? जब अन्न मँहगा है और मज़दूरी की दर इतनी नीची है कि दिन भर काम करने पर भी भर पेट अन्न नहीं मिलता, बीमार होने पर कोई पूछने वाला नहीं मिलता दवा देने वाला नहीं रहता। तो उसका फल क्या होगा ? जुर्म बढेंगे। जैसे खाली बोरा सीधा नहीं खड़ा रह सकता। वैसे ही खाली पेट वाला सदाचारी नहीं रह सकता। मनुष्य से नित्य की भूख का क्लेश नहीं सहा जाता। मौका पाने पर उससे सौ तरह की बुराइयाँ करा लेती हैं।

स्टेट सेवा

वह राज्य जो स्थायी रूप से टिका रहना चाहता है उसको किसी न किसी प्रकार प्रजा की सामूहिक सेवा करना आवश्यक है। अँग्रेज, प्रजा के एक नौकर की भाँति हैं प्रजा भर हीक, मुँह मांगा, टेढ़े अथवा सीधे टैक्स अथवा लगान देती है, इसके बदले में वे उनका प्रबन्ध कर देते हैं। इस तरह के राज्य में प्रजा कभी भी राजभक्त नहीं हो सकती। इसके लिए राज्य को चाहिये कि अपने राज्य में पांच वस्तु नमक, लकड़ी, शिक्षा, औषधि और न्याय मुफ़्त कर दे, इस पर न कोई कर हो और न इन वस्तुओं के प्राप्त करने के लिए कुछ खर्च करना पड़े तो

फिर राज्य-कर्मचारी, वास्तविक रूप में प्रजा के सेवक हो जावें, अवैतनिक कर्मचारी रिश्वत न लें, मजदूर किसान ईमानदारी से खुश और प्रसन्न रहे। और इसके अतिरिक्त सौ फीसदी प्रजा-भक्त हो जाय, और राज्य, राम राज्य हो जावे। जिसमें

न कहीं विधवाओं का रोना सुनाई पड़े, न सांपों का भय हो, और न रोग भय हो। राज्य पापियों से शून्य हो जावे, न कोई अनर्थ में पड़े और न अपने से छोटों की मृत्यु संस्कार करे, सभी प्रसन्न परोपकारी और धर्मात्मा हों। वृक्ष बनस्पति, लता गुल्म आदि नियमित रूप से फूलें फलें, वृष्टि-समय पर हो, सब अपने २ कर्मों में सन्तुष्ट, कर्त्तव्य परायण रहें। न कोई झूठ बोले। ऐसा ही राज्य प्राचीन भारत में रहा और आगे भी होने की संभावना है। प्राचीन भारत में ऐसे राज्यों के उदाहरण अब तक मिलते हैं।

"जब केकय देश के राजा, अश्वपति के यहाँ यज्ञ के सम्बन्ध में सत्ययज्ञ, इन्द्रद्युम्न, शालजन, कुण्डिल और उद्दालिक आदि ऋषि आए तो महाराज अश्व पति ने उनकी यथोचित पूजा की और फिर अपने यहां ठहरने के लिये प्रार्थना करते हुए उनसे कहा।

नमेस्तेनो जनपदे: न कदर्पो न मद्यपः

नानाहिताग्निनी विद्वान्न स्वैरी स्वैरिणी कुतः

अर्थातः— भगवन् मेरे राज्य में न चोर हैं, न कायर है, न शराबी है, न कोई ऐसा है जो नित्य अग्निहोत्र न करता हो, न कोई मूर्ख है, न व्याभिचारी, न व्याभिचारिणी, फिर



लेखक

हैं आप क्यों नहीं मेरे राज्य में बास करते।

उपरोक्त राज्य इस प्रकार था, इसमें अथवा इसके राजा में कोई जादू का बल नहीं था। बल्कि नमक, लकड़ी, न्याय, शिक्षा और औषधि सारी प्रजा को मुफ्त प्रयोग करने की आज्ञा दे दी थी। इसलिये ऐसा था। आज भी ऐसा करके प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।

अंग्रेज़ों को अन्तिम चेतावनी

विश्व में आज अंग्रेज राष्ट्र ने अपने ज्ञान के कारण अपना सिर सब से ऊँचा कर रखा है, बल के कारण वह सहस्रा-बाहु हो रहा है, धन के कारण उसका पेट बड़ा और गहरा हो रहा है। आज तक किसी राजा में यह तीनों गुण एकत्र नहीं पाये गये। किन्तु सेवा गुण की कमी के कारण लंगड़ा है। अगर इन्होंने सेवा गुण को अपना लिया और अवैतनिक तथा वैतनिक का कार्य्य भारतीय राष्ट्र के तपे तपाये जन प्रिय-सेवकों को देदें। मजदूर किसानों और अछूतों दलितों को सुविधा देकर सुखी करदें, और इन और अन्य प्रजा वर्ग के लिये नमक, लकड़ी न्याय, औषधि तथा शिक्षा मुफ्त करदे, तो बिना किसी कपट अथवा चापलूसी के कहा जा सकता है कि यह राम राज्य हो जाय, और ये भारत में टिकाऊ हो जावें। किन्तु इस गुण को न अपनाने पर भारत से तशरीफ़ ले जाने के लिए मजबूर होंगे, जिसके परिणाम स्वरूप सारे संसार में इनका फैला हुआ राज्य इंगलैंड में सिमिट जायगा। यह ध्रुव बात है। क्योंकि भारत के

लिए यही सनातन नियम है जो सदा से सब राजाओं के लिये लागू होता आया है।

अब देखना यह है कि अंग्रेज जाति इस सेवा गुण को अपनायेगी अथवा नहीं ! आज लगभग पचास बरसों से इस बात की चेतावनी भारतीयों की ओर से दी जा रही है किन्तु ये अपने हठ पर कायम हैं । इसीलिए प्रमाणित होता है कि भविष्य में ये इस गुण को नहीं अपनायेंगे । फल स्वरूप कोई ऐसी शक्ति अथवा व्यक्ति का होना आवश्यक है जो इनसे सनातन नियम का पालन कराये।

ऐसा पुरुष संसार में मौजूद है वह हैं विष्णु अवतार गांधी।

विष्णु अवतार गांधी

यह एक ऐसा तीखा वाक्यांश है जिसको सुनकर कितने धर्मों के ठीकेदारों, राजकीय अधिकारियों, दुराग्रहियों तथा हठधर्मियों के मस्तिष्क घूम जाँयेगे। किन्तु वास्तविक बात वास्तविक ही होता है। वर्त्तमान विश्व की परिस्थिति जो आज किसी पुरुष या राष्ट्र से सुधारी नहीं जा सकती, युगान्तरकारी पुरुष अथवा अवतार की आवश्यकता तीक्ष्णता से अनुभव कर रहा है। अवतार की आवश्यकता, लक्षण, भविष्य-वाणियों, तथा राक्षस दमन, पतितों को पावन करना, राम राज्य संथापन की नींव डालना इन सबका अध्ययन किया जावे तो अपने आप ही सिद्ध हो जाता हैं कि गाँधी कौन है ? अवतार सिद्ध अथवा

प्रमाणित नहीं किया जाता बल्कि अनुभव किया जाता है। और साथ साथ लाभ उठाया जाता है।

मनुष्य जाति का इतिहास संसार को घटनाओं और काल चक्रों की एक ऐसी लड़ी है जो टूटना नहीं जानतीं। वर्त्तमान और भूत काल की घटनाओं में कार्य्य और कारण का अनिवार्य सम्बन्ध होता है। और भविष्य में होने वाले घटना को इन्हीं दोनों का परिणाम कहना अनुचित न होगा। ऐसी दशा में आगे 'क्था होगा' के सम्बन्ध में भवियष्वाणी करने में किसी निहित शक्ति तथा दैवी सहायता की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि गत घटनाओं का निरीक्षण करने और उनके अन्तिम प्रभावों की जाँच और तुलना करने से आगामी घटनाओं की भी कुछ न कुछ खबर अवश्य मिलती है। इसमें सन्देह नहीं कि वर्त्तमान और भूत काल की घटनाओं की परीक्षा तथा तुलना से की गई भविष्य-द्वाणी का असत्य निकलना नामुमकिन नहीं किन्तु इनके साथ ही साथ यह देखते हुये कि वे गत घटनाओं के एक निश्चित फल हैं। हम इनको असत्य भी नहीं कह सकते।

समय समय पर राजोद्धार, देशोद्धार तथा प्रजा के कल्याणार्थ अनुभवी तथा दूरदर्शी महान पुरुष ऐसी बातें ढूँढ निकालते हैं। जिनके करने या न करने पर देश, जाति या राष्ट्र तथा विश्व का भविष्य निर्भर होता है। देशबन्धु चितरंजन दास के मरने पर भारत के नेतृत्व का भार उठाने के लिये गण्य मान्य नेताओं द्वारा प्रार्थना करने पर स्वतंत्रता के पुजारी, योगिराज अरविन्द घोष ने बाबू मोतीलाल घोष से कहा था कि—

"उस दिन जिस समय लोक मान्य तिलक का देहान्त हुआ, उसी समय गाँधी का उदय हुआ। इस घटना का हमने अस्पष्ट दर्शन किया, हमें यह भी मालूम हुआ कि यह समय गाँधी के काम करने का है। यह युग या समय हमारा नहीं है गांधी जी जो कुछ करने के लिये आये हैं वह करेंगे इस समय कोई भी मनुष्य उनके सामने खड़ा नहीं हो सकता। यदि गाँधी अपने काम में असफल भी होंगे, तब भी वह अपना कुछ अंश अवश्य दे जाये गे। और वह देश की भवितव्यता का यथेष्ठ सहायक होगा।"

योगिराज घोष ने ही सब से पहिले गाँधी जी को पूर्ण रूप से पहिचाना, इनके शब्दों में दैवी-शक्ति द्वारा प्रेरित शब्दों की सूचना मिलती है। इनकी इस पक्षपात तथा स्वार्थ रहित शब्दों से ज्ञात होता है कि गाँधी जी अवतार हैं जो समय २ पर भू भार हरण के लिये अवतरित होते हैं। इस बात की यथार्थता तब तक प्रभावयुक्त नहीं हो सकता, जब तक कि संसार के लिये अवतार की आवश्यकता न सिद्ध हो जाये। भविष्य में कोई ऐसी विश्व व्यापी प्रचण्ड आँधी आने वाली होती है, कि जिसके झोंके से मानव जाति के विकास श्रृंखला के टूटने का डर होता है, अथवा उस उद्यान के विकसित फूलों के टूट टूट कर गिरने की संभावना होती है। और सार्वभौमिक राष्ट्र छिन्न भिन्न होकर जातियों, उपजतियों, में बँट कर छिन्न भिन्न हो जाता है, सार्वभौमिक धर्म, हजारों मत मतान्तरों में टुकड़े टुकड़े हो जाता है, सार्वभौमिक राज्य, स्वार्थियों और अभिमानियों के कारण राज्यों, रियासतों

और छोटे छोटे जिमिन्दारियों में बँट जाता है। सार्वभौमिक भ्रातृ भाव उतने हिस्सों में जितने पिण्ड और मुण्ड होते हैं विभाजित हो जाता है। तो इन सबको फिर से एकत्र कर भविष्य में विश्व विकास तथा मानव विकास नियमित रूप से चलता रहे, इस पथ के, वाधक राक्षसों का दमन करने के लिये अवतार होता है। यही सनातन नियम है। संसार में अवतार होने का कारण उपस्थित हो गया है विश्व की वर्त्तमान राजनैतिक तथा धार्मिक परिस्थिति बताती है

विश्व की परिस्थिति

सनातन राष्ट्र द्वारा संस्थापित राम राज्य में ही संसार के प्राणी मात्र को अधिक से अधिक मानवीय सुख प्राप्त था, किन्तु वह शनैः शनैः किस प्रकार नष्ट हुआ यह पहिले ही बताया जा चुका है। जिस मानव जाति को नरकगामी बनाने वाली आसुरी भाव को पद दलित करके सनातन राष्ट्र ने राम राज्य स्थापित किया था, वही आसुरी भाव आज विश्व के ब्राह्मणों तथा ज्ञानी के स्वार्थ परायणता, तथा विश्व के क्षत्रियों के ज्ञान तथा धर्म हीन होने के कारण प्रचण्ड रूप धारण किये है। पूर्वीय राष्ट्र अकर्मण्य तथा कर्म हीन हो गया है।

इसका राम राज्य आज रावण राज्य में परिवर्त्तित होगया है। यदि वह समय स्वर्ण था तो यह मिट्टी अगर वह स्वर्ग तो यह नरक, यदि वह आकाश तो यह पाताल है। यदि वह सुख तो यह दुख पूर्ण जंजाल है। उस समय कहीं भी विधवाओं का

रुदन सुनाई नहीं देता था, किन्तु आज भारत में करोड़ों विधवायें अपनी दुखभरी आहें लेकर खून के आँसू बहा रही हैं। उन दिनों शेर और बकरी एक घाट पानी पीते थे, किन्तु आज यहाँ मनुष्य से मनुष्य मिलकर रहना नहीं चाहते। रात दिन धर्म के नाम पर भाई भाई के खून की नदियाँ बहाई जा रही हैं। उन दिनों नर-नारी व्यभिचारों को पाप समझते थे किन्तु आज करोड़ों वेश्यायें हमारे व्यभिचार का प्रत्यक्ष विज्ञापन दे रही हैं। देश में रोग शोक, भय, दुर्भिक्ष, दरिद्रता, लड़ाई झगड़ा आदि का ताण्डव नृत्य हो रहा है। लोग अल्पायु होते जा रहे हैं। बालकों की मृत्यु संख्या उत्तरोत्तर बढ़तो जा रही है, मूर्ख बढ़ रहे हैं। स्वार्थ परता की मात्रा अत्यधिक हो गई है। ईर्षा द्वेष, लोभ, कलह, फूट आदि सर्वनाशी कामों में मानव जाति तल्लीन है।

इसी तरह पाश्चात्य राष्ट्र जिनकी भित्ति आधिभौतिक सिद्धियों पर आधारित है, ईश्वर विरुद्ध तथा व्यवहारिक संसार में नास्तिक होगये हैं। जिसका परिणाम यह हो रहा है कि आज संसार में जीवन संग्राम ने प्रचण्ड रूप धारण कर रक्खा है। और यह ईश्वर हीन पाश्चात्य सभ्यता संक्रामक रोग की भाँति प्रसारित होरहा है। जातियों और राष्ट्रों में अविश्वास है। आपस में संघर्ष, स्वामी और मज़दूर, अमीर और ग़रीब में भीषण युद्ध चल रहा है। धन और प्रभुता की तृष्णा एक भयानक जन्तु की भाँति सम्पूर्ण सभ्य संसार को निगलती जा रही है। उद्धार की जो युक्तियाँ सोची जाती हैं वे फलीभूत नहीं होती। प्रत्येक

राष्ट्र सशस्त्र दूसरे की गर्दन दबा बैठने की घात में लगा हुआ है। निर्बल जातियाँ उसके पैरों के नीचे पड़ी अन्तिम साँसें ले रही हैं। मनुष्य एक मशीन बन कर रह गया है। जीवन में कृत्रिमता बढ़ती जाती है। सम्पदा के पीछे विश्व पागल हो रहा है। उसकी प्राप्ति में किसी प्रकार का बन्धन नहीं, बलवान राष्ट्र निर्बल राष्ट्रों का बलवान व्यक्ति निर्बल व्यक्तियों का गला दबा रहे हैं। महाभारत युद्ध की व्यापक ध्वनि तीसरी बार सुनाई दे रही है। कहीं शान्ति नहीं, कहीं सुख नहीं, ईश्वर हीन उद्योग में शान्ति कहाँ। हम नहीं समझते किसी युग में स्वार्थ तथा द्वेष का इतना प्राबल्य था। विचार शील लोग कह रहे हैं कि यह प्रलय का मार्ग है। संसार की ऐसी अवस्था में सतयुग आगमन का विचार करना असम्भव सा प्रतीत होता है। किन्तु वर्त्तमान दूरदर्शी ऋषियों का कथन है कि भविष्य उज्ज्वल है।

उज्ज्वल भवितव्यता

अरविन्द घोष की भविष्य वाणी

योगिराज अरविन्द का कथन है "भविष्य में भारत को जिस विपुल विराट कर्म का भार अपने ऊपर लेकर खड़ा होना होगा, उसी की सूचना स्वरूप सारे संसार में एक विचित्र प्रकाश का होना आरम्भ हो गया है। आगामी तीस चालीस बरस के भीतर संसार में एक विचित्र परिवर्त्तन होगा, सारी बातों में ही उलट पुलट हो जायगा। उसके बाद जो नवीन जगत तैयार

होगा, उसमें भारत की सभ्यता ही संसार की सभ्यता होगी (अर्थात राम राज्य की सभ्यता) भावी भारत का काम केवल भारत के लिये नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण संसार के लिए है। अतएव अब भारत को उन्हीं पूर्ण योगी मनुष्य की तैयारी करने में लग जाना चाहिए, जो इतने गुरुतर भार का संभाल करने में समर्थ होंगे।"

योगिराज फिर कहते हैं "हमारी साधना किसी जाति विशेष के लिये नहीं होगी, जितनी जातियाँ हैं, उन सब की मुक्ति और शुभ कामना ही हमारी चिन्ता का मुख्य उद्देश्य होगा। समष्टि-साधना करने के लिए बैठने पर हमें यूरोप निवासियों की भाँति आडम्बर शील यांत्रिक राज्य Mechanical State बनाने के लिए प्रयत्न नहीं करना है। हर एक मनुष्य के जीवन को सार्थकता से परिपूर्ण करना ही इस योग का उद्देश्य है। जिस दिन मनुष्य की योग की सहायता से यह बात मालूम हो जायगी कि स्थान और काल के व्यवधान से मनुष्य की कोई स्वतंत्र जाति धर्म या स्वार्थ नहीं है, उसी दिन एक नए ऐक्य के ऊपर नवीन राज्य स्थापित हो जायगा, और वही देवराज्य होगा। एक बात और होगी वह यह कि, इस समय कितने ही लोग जो विपुल समाज-शासन के लिए अपनी २ बुद्धि के अनुसार गवर्नमेंट की स्थापना करने की चेष्टा कर रहे हैं वे उस समय अपनी यह चेष्टा अनावश्यक समझ कर परित्याग कर देंगे, या यों समझिए कि उनकी चेष्टा अपने आप ही छूट जायगी।"

हमारे यहाँ ब्रह्मवैवर्त तथा भविष्य पुराण में भी ऐसा लेख

आया है जिससे सिद्ध होता है कि अब से ४५ बरस बाद ८० बरस के लिए सतयुग लगेगा और इस काल में लोग राम राज्य की भाँति सुख भोग करेंगे।

वैज्ञानिकों की भविष्य वाणियाँ

विश्व के भविष्य के सम्बन्ध में वैज्ञानिक विद्वानों की राय है "वैज्ञानिक अविष्कारों की वृद्धि इतनी होगी, कि बिजली की रौशनी हर घर और झोपड़े में होगा, रेडियों का यंत्र हर आदमी के पास होगा। हवाई जहाज़ों की उन्नति और अधिक होगी। एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रायः हवाई जहाज़ों से आया जाया करेंगे। उड़ते हुए शहर बनेंगे। रोग कम होंगे, मनुष्य की आयु भी अधिक लम्बी होगी, इससे संसार की आबादी वढ़ जायगी। सारा विश्व एक बड़ा नगर ज्ञात होने लगेगा। रेलगाड़ियाँ ज़मीन के नीचे २ चलेंगी। पृथ्वी पर बड़े २ कारखाने खुलेंगे, लोग रात दिन काम करेंगे, नकली धूप बनाई जायगी। जो अनाज छः महीने में पक कर तैयार होता है वह विज्ञान के ज़ोर से केवल ६ दिन में पक कर तैयार हो जायगा। पेड़ पालव पूरे २ मनुष्य के कब्ज़े में आजायेंगे। मनुष्य चाहेगा तो गेहूँ के पेड़ को बढ़ा कर नीम के पेड़ के समान कर लेंगे इत्यादि २ अलौकिक बातें। वैज्ञानिकों के इस उपरोक्त भविष्य-द्वाणी का निष्कर्ष यह है कि संसार का भावी वातावरण सम्पूर्णतः शान्त रहेगा।। पूर्ण शान्ति संसार में कब होती है जब रामराज्य अथवा इससे मिलती जुलती राज्य प्रणाली हो और राजा और प्रजा में पूर्ण विश्वास हो।

विश्व व्यापी भविष्य वाणी

यह भविष्यद्वाणी विलायत के सर्वोत्तम तथा संसार व्यापी प्रसिद्ध ज्योतिषी और सामुद्रिक शास्त्र के आचार्य 'शेरो साहब' की वर्ल्ड प्रडिक्शन नामक पुस्तक के आधार पर लिखी जा रही है। शेरो साहब के विषय में इतना ही कहना काफ़ी होगा कि वे संसार के एक आश्चर्य जनक व्यक्ति हैं। दुनिया के सैकड़ों बड़े २ बादशाह और लब्धप्रतिष्ठ लोग शेरो साहब को अपना हाथ दिखा चुके हैं। उन्होंने शाहंशाह एडवर्ड की मौत, दक्षिण अफ्रीका की लड़ाई महाराणी विक्टोरिया की मृत्यु, और जर्मन युद्ध के ठीक समय बरसों पहिले बतला दी थी। जर्मन युद्ध के विषय में उन्होंने कई वर्ष पूर्व बतला दिया था कि वह सन् १९१४ ई० की गर्मियों में होगा और क़रीब चार साल तक चलेगा, और उसमें जर्मनी के पक्ष की हार होगी। उनकी सब से आश्चर्य जनक भविष्यवाणी लार्ड किचनर के सम्बन्ध में है, जिनको उन्होंने सन् १८८७ ई० में बतला दिया था कि उनको सन् १९१४ में किसी बड़े युद्ध की ज़िम्मेदारी उठानी होगी, और उनकी मौत उसी युद्ध में युद्ध क्षेत्र में होने के बजाय समुद्र में डूबने से ६६ साल की उम्र में होगी।

शेरो साहब लिखते हैं "आगामी वर्षों में कम्युनिज्म (साम्यवाद) का प्रभाव ससार में अग्नि के समान फैल जायगा। दुनियाँ में बड़े विचित्र सिद्धान्तों का प्रचार होगा और लोग उनको मान लेंगे। अमीर लोग खुशी से अपने धन सम्पत्ति को

त्याग देंगे, अमीर गरीब बन जाँयगे। बादशाह लोग मजदूरों के साथ बैठकर रोटी खायेंगे, और मजदूर बादशाहों पर हुक्म चलावेंगे। बड़े बड़े अमीरों के पुत्र पुत्रियाँ साम्यवादी बन जांयगे और अपने बाप दादों की जमीन जायदाद को गरीबों में बाँट देंगे। ईसाई धर्म भी बिल्कुल बदल जायगा और उसमें अद्भुत सिद्धान्त शामिल कर दिये जायेंगे।" शेरा साहब फिर लिखते हैं "संसार की सबसे बड़ी लड़ाई जो होने वाली है, पैलेस्टाइन के लिये होगी।" पैलस्टाइन का मुल्क एशिया और यूरोप के बीच में टर्की के पास है। जर्मनी युद्ध के पहिले यह देश टर्की वालों के कब्जे में था और इसमें अरबी लोग रहते हैं, किन्तु टर्की के हार जाने पर इस देश का प्रबन्ध इंग्लैण्ड के सुपुर्द कर दिया और निश्चय हुआ कि इसमें यहूदियों को बसाया जाय, और कुछ समय बाद इसकी हुकूमत भी उन्हीं के सुपुर्द कर दिया जाय। इस निश्चय के अनुसार अब तक लगभग दो लाख यहूदी वहाँ जाकर आबाद हो चुके हैं। किन्तु उनमें और वहाँ के पुराने बाशिन्दों (अरब वालों) में सदा झगड़ा होता रहता है। यह देश प्राचीन समय में यहूदियों का ही था और यहीं से उनका मजहब शुरू हुआ था। यह पैलेस्टाइन का देश खेती की दृष्टि से बड़ा ही लाभदायक है और वहाँ की जमीन में मिट्टी का तेल और सोडा पोटाश आदि चीजें भी अरबों खरबों रुपये की मौजूद है। उनके लालच से टर्की और कई देशों की उस पर आंख लगी रहती है। शेरा साहब का कथन है कि "कुछ ही समय में टर्की रूस की मदद से इस देश को अँग्रेजों

से छीनने को चेष्टा करेगा और यही बात लड़ाई की जड़ बन जायगी। इंगलैंड के आधीनस्थ जितने मुसल्मानी देश हैं उनके निवासी अंग्रेज़ों के विरुद्ध बलवा करेंगे। इंगलैंड हिन्दोस्तान को स्वतंत्र कर देगा, किन्तु यहाँ चारों तरफ़ धार्मिक युद्ध होने लगेंगे और कहीं पर मुसल्मानों का और कहीं २ हिन्दुओं का राज्य स्थापित हो जायगा। इंगलैंड से समस्त उपनिवेश अपनी मातृभूमि (इंगलैंड) की मदद के लिये फिर से बड़ी २ सेनाएँ भेजेंगे, इस समय इटली और जर्मनी फ्रान्स से युद्ध कर रहे होंगे। जर्मनी और अंग्रेज़ों में दोस्ती हो जायगी और पैलेस्टाइन और मिश्र में लाखों की तादाद में सेना भेजेंगे"।

"रूस वाले चीनी तातार और अन्य मुसल्मानों की बड़ी भारी सेना तैयार करके अंग्रेज़ों का मुक़ाबिला करेंगे अमरीका इस समय मैक्सिको और जापान से लड़ रहा होगा और वह यूरोप वालों के झगड़े में बहुत समय बाद भाग ले सकेगा। इस युद्ध में इगलैंड का बहुत नुकसान होगा, और रूस के हवाई जहाज़ों की गोलाबारी से लन्दन का बहुत सा हिस्सा और अन्य बड़े २ शहर नष्ट हो जायंगे। आयरलैंड में गृह युद्ध होने लगेगा और उसके हवाई जहाज़ भी इंगलैंड के शहरों पर गोलाबारी करके बहुत नुकसान पहुंचायेंगे"।

शेरो साहब फिर लिखते हैं कि "यह लड़ाई ऐसी भयंकर होगी कि इसके फल से संसार का बड़ा नाश होगा। एक समय ऐसा जान पड़ेगा कि रूस वालों की विजय होगी। पर उसी समय परमेश्वर उनके नाश के लिये भयंकर भूचाल, तूफ़ान, बाढ़

और बीमारियाँ भेजेगा जिनसे वे निर्बल और भयभीत हो जांएगे और अन्त में अंग्रेज़ों और यहूदियों को ही सफलता होगी। इस लड़ाई और उथल पुथल के बाद संसार की दशा बदल जायगी और संसार में समानता और सच्चाई के सिद्धान्त का प्रचार होने लगेगा। इग्लैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी आदि यूरोप के देश भारत, चीन, मिश्र आदि देशों को लूटना खसोटना बन्द कर देंगे और सब मिलकर संसार की उन्नति और सुख की बृद्धि की कोशिश करने लगेंगे।

एक भविष्यदर्शी का कथन है कि उस आपत्तिकाल में महात्मा गांधी अंग्रेजों के पुराने व्यवहार को भूल कर उनकी सहायता करेंगे, और उसके फल से इग्लैण्ड भारत का सच्चा मित्र बन जायगा और हृदय से इस देश की उन्नति और कल्याण की चेष्टा करेगा।

प्रभु ईसा मसीह की भविष्य वाणी

लूका के इंजील पर्व २१ में इस प्रकार है "वे दिन आएँगे जिनमें यह सब जो तुम देखते हो उनमें से पत्थर पर पत्थर भी यहां न छूटेगा जो ढाया न जायगा।" उन्होंने (शिष्यों) पूछा है गुरु (ईसा मसीह) यह सब कब होगा, और ये बाते जब पूरी होने पर होंगी तो उस समय का क्या चिन्ह होगा? उसने कहा "जाति पर जाति और राज्य पर राज्य चढ़ाई करेगा। बड़े बड़े भुईंडोल होंगे और जगह जगह अकाल और मरियां पड़ेगी और आकाश से भयंकर बाते और बड़े बड़े चिन्ह प्रगट होंगे। जब तुम यरुशलम को सेनाओं से घिरा हुआ देखो तो

जानो कि उसका उजड़ जाना निकट है। तब जो यहूदियों में हों वह पहाड़ों पर भाग जांय, और जो यरुशलम के भीतर हों, वे बाहर निकल जांय और जो गांवों में हों, वे उसमें न जावें। क्योंकि पलटा लेने के ऐसे दिन होंगे जिनमें लिखी हुई सब बातें पूरी हो जांयगी उन दिनों में जो गर्भवती और दूध पिलाती होंगी, उनके लिये हाय हाय, क्योंकि देश में बड़ा क्लेश और इन लोगों पर क्रोध होगा। वे तलवार के घाट उतारे जांयगे और सब देशों के लोगों में बन्धुएँ होकर पहुँचाये जांयगे और जब तक अन्य जातियों का समय पूरा न हो जायगा तब तक यरुशलम अन्य जातियों से रौंदा जायगा। सूरज चाँद और तारा में चिन्ह दिखाई देंगे और पृथ्वी पर देश के लोगों को संकट होगा। और समुद्र और लहरों के गरजने से घबराहट होगी। और डर के मारे संसार पर आने वाली बातों की बाट देखने से लोगों के जी में जी न रहेगा, क्योंकि आकाश की शक्तियाँ हिलाई जाँयगी। तब वे मनुष्य पुत्र को समर्थ और बड़ी महिमा के साथ बादल पर आते देखेंगे। जब ये बातें होने लगें तो सीधे होकर अपने सिर उठाना क्योंकि तुम्हारा शुभ दिन निकट होगा"।

प्रभु ईसा मसीह की यह भविष्यवाणी भावी पैलेस्टाइन (जैसा शेरो साहब ने लिखा है) युद्ध के लिये है, जिसमें संसार की सब महान शक्तियाँ अद्भुत बिजली तथा गैस शक्ति से युद्ध करेंगे।

उपरोक्त भविष्यवाणियों से सिद्ध होता है कि पैलेस्टाइन

युद्ध तो अवश्य होगा किन्तु उसके बाद संसार किसी दूसरे का अवलम्ब न करेगा, राजा प्रजा में विश्वास होगा, जिसके फल स्वरूप संसार में शान्ति फैलेगी।

यूरोप में बड़े २ साधनों को खोज हो रही है, बड़े २ आविष्कार हो रहे हैं, लेकिन यह सब नाशकारी हैं। कभी यह सुनाई पड़ता है कि अमरीका ने ऐसा पनडुब्बा जहाज़ बनाया है जो बड़े २ जंगी जहाज़ों को काग़ज़ के नाव की भाँति कतर सकता है। कभी सुनाई पड़ता है कि रूस एक ऐसा गैस तैयार करने में लगा है कि यदि उसे किसी शहर के ऊपर छोड़ दे तो शहर के शहर नष्ट हो जाँय। साराँश यह कि आविष्कार करने वाले देश सदैव इसी फ़िराक में रहते हैं कि उनकी ताक़त (मनुष्यों के प्राण हरने की ताक़त) किसी तरह भी दूसरे राष्ट्र से कम न होने पावे। ऐसी परिस्थिति में ज़रूरत है इस बात की कि कोई व्यक्ति एक ऐसा रास्ता दिखा दे जिसमें संसार से युद्ध का, लड़ाई का अन्त हो जाय। एक ऐसे यंत्र की आवश्यकता है कि दुनिया की सारी तोपों और गोलों को व्यर्थ सिद्ध कर दे, और बिना युद्ध और मनुष्यों के प्राण हरण के बिना ही सब लड़ाई झगड़ा तै हो जाया करें। निस्सन्देह यह कार्य बड़ा टेढ़ा है किन्तु महात्मा गांधी ने उस यथेष्ट पथ का प्रदर्शन कर दिया है, वह है अहिंसा तथा सत्याग्रह। महात्मा गांधी का कथन है कि आदमी आदमी को घृणा से, लड़ाई से, धोखे से नहीं, बल्कि प्रेम से, विश्वास से, सच्चाई से जीत सकता है। उनका सत्याग्रह वर्तमान

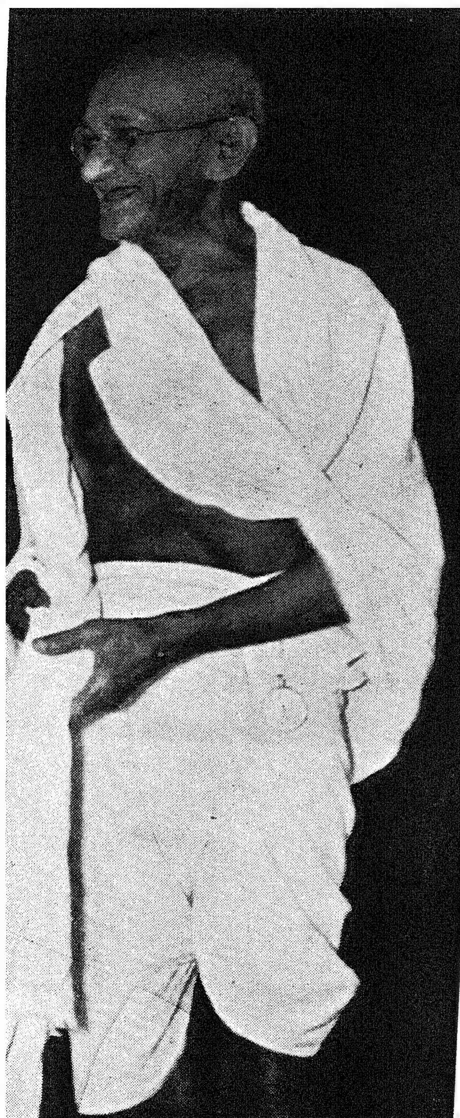
सभ्यता के सर्वोत्तम आविष्कारों में स्थान पा सकता है। प्रेम का हठ किस प्रकार काम कर सकता है यह उन्होंने दिखा दिया है। सारे संसार का ध्यान इस सत्याग्रह की ओर है और यूरोप के बहुत से विद्वानों ने इसकी शक्ति को स्वीकार कर लिया है। इस लिये यह निश्चय है कि मनुष्यों के प्राण हरने वाले आविष्कारों अथवा मनोवृत्तियों का शीघ्र ही अन्त होगा और संसार में शान्ति का प्रचार होगा।

गांधी अवतार है

अवतार का कारण

हमारे शास्त्रों से यह बात भलो भाँति प्रतिपादित है कि संसार में जब धर्म की हानि, तथा आर्य सङ्घ का व्यतिक्रम होने लगता है और जब मानव प्रयत्न से उसके सुधरने की कोई सम्भावना नहीं रह जाती, तब अवतार होता है। अब यह देखना है कि वह अभीष्ट धर्म कौनसा है जिसके लिये अवतार होता है, वह धर्म वेद धर्म है। संसार के अन्य धर्म इसी वेद धर्म के पूर्णाङ्क धर्म हैं जो वेद धर्म के ह्रास पर उत्पन्न हो गये थे, और वेद धर्म की हानि होने पर इसकी पूर्ति के लिये मानव चेष्टा के परिणाम हैं। यह बात पिछले अध्यायों में भली भाँति दर्शायी जा चुकी है ? वेद धर्म क्या है इसको बता देना यहाँ आवश्यक है।

मौनी राज्य के संस्थापक



वेद धर्मः—

भारतीय ऋषियों की शिक्षा, जिसका आधार साङ्गोपांग चार वेद (ऋक, यजु, साम और अथर्व) हैं। इस प्रकार है।

ईश्वर, जीव और प्रकृति (जगत का कारण) तीनों नित्य हैं (ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त १४६ मंत्र २०)। इनमें से ईश्वर अपने आधीन जीव और प्रकृति के द्वारा जगत रचता है। नियत अवधि तक जगत विकास और ह्रास के नियमों से नियमित होकर स्थिर रहता, तत्पश्चात् प्रलय को प्राप्त हो जाता है। प्रलयावस्था समाप्त होने पर पुनः जगत् की रचना होती और उपर्युक्त भाँति निश्चित अवधि के बाद पुनः प्रलय को प्राप्त होता है। इस प्रकार जगत् की उत्पत्ति और प्रलय का क्रम भी दिन रात के सदृश नित्य है और अनादि काल से इसी प्रकार चला आ रहा है और इसी प्रकार भविष्य में अनन्तकाल तक भी चला जाता रहेगा। (ऋग्वेद मं० १० सू० १०९ मं० ३) जीवात्मा कर्म करने में स्वतंत्र; किन्तु फल भोगने में परतंत्र है। कर्म कर्त्ता जीव है और फलदाता ईश्वर है। जीवात्मा सकाम कर्म करते हुये आवागमन् के चक्र में रहता है। निष्काम कर्म द्वारा आवागमन के चक्र से छूट कर नियत अवधि के लिये मोक्ष को प्राप्त होता है। अवधि समाप्त होने पर पुनः संसार में आता और अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न होकर फिर यथा कर्म और यथा ज्ञान भिन्न २ योनियों को प्राप्त होता है।

योनियाँ स्थिर हैं। विकास द्वारा एक योनि से दूसरी योनि उत्पन्न नहीं होती किन्तु पृथक २ योनियों के अन्तर्गत विकास

और ह्रास सिद्धान्त लागू होते हैं। इस प्रकार ईश्वर और जीव दोनों अप्राकृतिक जगत के कारण और कार्य दोनों से पृथक है, और स्वतंत्र सत्ता रखते हैं। ईश्वर जगत का निमित्त और प्रकृति जगत का उपादान कारण है। जीव को जब तक प्राकृतिक शरीर नहीं दिया जाता उस समय तक किसी प्रकार का कोई कर्म नहीं कर सकता।

शरीर तीन हैं (१) कारण शरीर (२) सूक्ष्म शरीर (३) और स्थूल शरीर। इनमें से स्थूल शरीर पांच स्थूल भूतों से बनता है और वह यही हाथ पांव वाला दृश्य शरीर है। सूक्ष्म शरीर १७ द्रव्यों का समुदाय है वे १७ द्रव्य ये हैं :—५ प्राण+ ५ ज्ञानेन्द्रिय+५ सूक्ष्म भूत (तन्मात्रा)+मन+और बुद्धि। तीसरा कारण शरीर प्रकृति रूप होने से सूक्ष्म शरीर से भी सूक्ष्म होता है। जीवात्मा शरीर के मध्य गुहाश्य (हृदयाकाश) में रहता है और परिच्छिन्न (एक देशी) होते हुए भी समस्त शरीर पर अधिकार रखता है। मृत्यु होने पर केवल स्थूल शरीर नष्ट होता, सूक्ष्म और कारण दोनों शरीर जीव से साथ, स्थूल शरीर से निकल जाते हैं। और जीवात्मा के साथ बराबर उस समय तक बने रहते हैं। जब तक वह मोक्ष नहीं प्राप्त होता। इसी प्रकार तीन अवस्थाएँ जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति के विषय में लिखा हुआ है।

मृत्यु क्या है

सम्बन्ध विच्छेद से शान्ति प्राप्त होने के नियम को लक्ष्य में रखते हुये प्राण द्वारा जो स्थूल शरीर के साथ जीवात्मा का

(सूक्ष्म शरीर द्वारा) सम्बन्ध है, उसके विच्छेद से दुख प्राप्त होगा यह कल्पना भी नहीं की जा सकती। सूक्ष्म शरीरों का प्राण द्वारा स्थूल शरीर से जो सम्बन्ध है उसी को ज़ीवन और इसी सम्बन्ध के विच्छेद का नाम मृत्यु है। फिर यह सम्बन्ध विच्छेद भयावना नहीं हो सकता। इसलिये मृत्यु से डरना अनुचित और व्यर्थ है। मृत्यु मनुष्य को शान्ति देकर पुनः काम करने के योग्य बना देती है। जिस प्रकार दिन के बाद रात्रि प्राणियों का, और सृष्टि के बाद प्रलय, परमाणुओं को आराम देने के लिये आती है। उसी प्रकार मृत्यु भी जीवन संग्राम की थकावट दूर करके आराम देने के लिये आती है। फिर इन शरीरों का एक दूसरे प्रकार से विभाग किया गया है और इन विभागों का नाम कोश है। ये कोश पांच हैं।

(१) अन्नमय जो त्वचा से लेकर अस्थि पर्यन्त, (२) प्राणमय—जो पांच प्राणों का समुदाय है, (३) मनोमय :— जिनमें मन और पांच कर्मेन्द्रिय होते हैं (४) विज्ञानमय—जो बुद्धि और पांच ज्ञानेन्द्रियों का सुमदाय है और (५) आनन्दमय कोश, जिसमें प्रेम, प्रसन्नता और सुख होते हैं। पहिले कोश का आधार स्थूल शरीर और दूसरे से चौथे तक का आधार सूक्ष्म शरीर और पांचवें कोश का आधार कारण मय शरीर है। इन कोशों से प्राणी सभी प्रकार के अलौकिक और पारलौकिक व्यवहार करता है जब जीवात्मा यम और नियमादि अष्टांग योग का सेवन करता है तो सांसारिक बन्धनों से छूट कर मोक्ष रूप परम स्वतंत्रता को लाभ कर लेता है। यही मनुष्य

जीवन का अन्तिम उद्देश्य, यही संसार यात्रा की अन्तिम मञ्जिल है।

वेद धर्म का निष्कर्ष यह है कि मनुष्य जीवन में सुखी शान्ति पूर्वक रहे और अन्त में मृत्यु के पश्चात सद्‌गति को प्राप्त हो।

सार्वभौमिक धर्म का पतन

वेद पुस्तकों की भाषा इतनी कठिन है कि जो लोग इनका विशेष अध्ययन विद्यालय में करते थे वही पढ़ और समझ सकते थे, इसलिये ऋषियों ने इनको सरल करने के लिये उपनिषदों की रचना किया। इसके पश्चात इनको और सरल बनाने के लियें विभिन्न ऋषियों ने वेद विषयों को विस्तार पूर्वक समझाने के लिये एक एक अथवा एक से अधिक विषयों पर एक एक स्वतंत्र पुस्तकों की रचना कर डाली; जिसको षट दर्शन के नाम से पुकारते हैं। षट दर्शन वेद के अंग हैं और सब वेद ही के भाग हैं। किन्तु लोगों ने इन दर्शनों को एक भिन्न स्वतंत्र सिद्धान्त समझा, जिससे लोगों में विचार परिवर्तन होने लगे। तब उस समय भगवान कृष्ण ने गीता का उपदेश देकर निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनों मार्गों को संयुक्त कर दिया। कालान्तर में अर्थात महाभारत युद्ध के बाद इन दर्शनों को अलग २ स्वतंत्र सिद्धान्त माना और प्रत्येक दर्शनों के मानने वालों ने अलग २ मत खड़ा कर लिया। लोग भिन्न २ मार्गों से चले, किसी ने योग का मार्ग लिया किसी ने तप का, किसी ने भक्ति का, किसी ने ज्ञान का, किन्तु त्याग सभी वादों का स्थायी लक्षण था। निवृत्ति

की दुहाई सभी देने लगे। सब ने इसी तत्व का प्रतिपादन किया। मोक्ष—आवगमन के बन्धन से छूटना—सुख शान्ति की चरम सीमा है। मोक्ष प्राप्ति के भिन्न २ मार्ग हैं पर सिद्धान्त सब के लिये एक है—निवृत्ति।

इसका परिणाम यह हुआ कि जिसे धर्म का अनुराग हुआ उसने संसार और संसार के व्यापार से मुंह मोड़ कर जंगल की राह ली। कर्म बन्धन है, कर्म से भागो, नहीं तो यह बन्धन पृथ्वी में बांध देगा। तपोबन आबाद हो गये। आज भी मोक्ष उसी तत्व पर अटल है। बुद्ध भगवान के अनुयायियों ने भी उनके सिद्धान्त में निवृत्ति मार्ग को प्रधानता दिया। भिक्षुओं के विहार बस्ती से दूर बने और वहाँ निर्बल पद प्राप्त होने लगा। हिन्दू धर्म उद्धारक शंकर, रामानुज, बल्लभाचार्य आदि सभी निवृत्ति मार्ग के उपासक रहे, निष्कर्ष भारत में अगर यही सिद्धान्त (निवृत्ति मार्ग) कुछ दिन और प्रचलित रहा तो भारत में जन संख्या की गणना सरकार को न करनी पड़ेगी आज भारत के धर्मावलम्बी लोग निवृत्ति मार्ग पर हैं इसके फलस्वरूप अकर्मण्य हो गये, और यही अकर्मण्यता उनके मृत्यु का कारण हो रही है।

पाश्चात्य धर्म

इसके विरुद्ध पाश्चात्य राष्ट्र प्रवृत्ति मार्ग की ओर इतना दत्तचित्त है कि शक्ति सम्बन्ध का भयंकर व्यवहारिक परिणाम आज यूरोप तथा अमेरिका की वर्त्तमान नैतिक तथा सामाजिक हलचल से स्पष्टतया हृदयंगम हो जाता है।

यूरोपीय राष्ट्र संसार को जीत और उसे अपने व्यापार जाल में फंसा और विषय सुखदायी आधिभौतिक सिद्धियों (Scientific invention) को हस्तगत कर इस समय आधिभौतिक स्मृद्धियों के साक्षात हिमालय बने बैठे हैं। उनकी सर्व स्मृद्धियों का श्रेष्ठ मूल उनकी वह क्षात्र शक्ति है, जो भिन्न २ प्रकार के मानवी और दैवी अस्त्र शस्त्र से परवृहित हैं। उनके अपूर्व वलशाली अस्त्र शस्त्र इस समय सारे ब्रह्मांड के संहार में सर्वथा समर्थ हैं। और इन्हीं शक्तिशाली साधनों के कारण आज उनके सिर पर मृत्यु नाच रही है। पच्छिम के राष्ट्रों के परस्पर व्यापारिक द्वेष, तथा उनके व्यवहारिक कृत्यों से यह प्रगट हो रहा है कि यह संहार काली रण चण्डी बहुत शीघ्र उनकी आधिभौतिक सभ्यता का एक ही ग्रास करने को मुंह बाये तैयार बैठी है।

निष्कर्ष यह है कि पूरब आज निवृत्ति मार्ग पर है, वह भाग्य को ही सब कुछ समझे बैठा है। इस तरह वह ईश्वर ही ईश्वर की गाथा सब जगह गा रहा है। और अपने अधोगति का कारण भी ईश्वर को ही समझता है। जो वेद विरुद्ध है। किन्तु इसके विरुद्ध पच्छिम आज प्रवृत्ति मार्ग की ओर इतना हो गया है कि वह अपने पुरुषार्थ से सारे संसार का मालिक बना बैठा है किन्तु यह सब कार्य अपने वाहुबल का ही परिणाम समझ रहा है, ईश्वर कोई वस्तु नही है। अर्थात नास्तिक हो गये हैं, किन्तु यह नितान्त वेद विरुद्ध बात है। वेद धर्म के कारण संसार में सुख

शान्ति का संस्थापन इसलिये होता है कि वह निवृति और प्रवृत्ति मार्गों को, धर्म और राजनीतिक, ब्राह्मण और क्षत्रिय ब्रह्म और प्रवृति को एक सूत्र में पिरो कर विश्व विकास का कार्य सम्पादित कराती है।

गाँधी अवतार इसलिये हुआ है कि पूरब और पश्चिम दोनों राष्ट्रों को एक सूत्र में पिरो दें। और उनका संयुक्त भावी कार्य संसार में सुख तथा शान्ति का संस्थापन हो। महात्मा जी निवृत्ति तथा प्रवृत्ति मार्ग, पूरब के धर्म और पश्चिम के शुष्क राजनीति, तथा पश्चिम के घोर नास्तिकों को पूरब के धर्मान्ध आस्तिकों को घोल कर एक एक कर नवीन विश्वव्यापी राष्ट्र बनावे, पूरब को प्रवृत्ति युक्त-निवृत्ति और पश्चिम को निवृत्ति युक्त प्रवृत्ति के आदर्श की सृष्टि करके एक नवीन राष्ट्र द्वारा संसार में शान्ति स्थापन करे। अर्थात पूरब और पश्चिम को एकसूत्र बद्ध करने आये हैं और निश्चय वह कर देंगे।

इस उपर्युक्त उद्देश्य (पूरब; पश्चिम मिलन) के लिये पूरब को सत्याग्रह और पश्चिम को 'अहिंसा' सिखा रहे हैं इसके साथ साथ अपने कर्मो द्वारा दोनों राष्ट्रों के सामने यह आदर्श रख रहे हैं कि इस महान कार्य में सत्य बोलो और अपने गलतियों तथा त्रुटियों को बिना किसी लोकापवाद तथा लोक लज्जा के सब सामने स्वीकार करते जाओ (जैसा वह स्वयं करते हैं)। इन दोनों विरोधी दलों को एक सेट फार्म पर लाने के लिये वह 'सेवा' का मंत्र पढ़ा रहे हैं कि दोनों इस कार्य

में प्रवृत्त हो जायें तो कार्य सिद्ध हो जाय । इसलिये भारत को सेवा गुण से बनी हुई शूद्र जाति का उत्थान का मन्त्र और पश्चिम को पददलित राष्ट्रों के साथ भ्रातृ-भाव का मंत्र सिखा रहे हैं। यही भगवान गाँधी का कार्य है और इसी वेद धर्म के उद्धार के लिये अवतरित हुये हैं।

अवतार के प्रमाण

बम्बई में श्री निवासाचार्य नाम के एक मद्रासी पंडित हैं। उनके पास कोई एक सत्याचार्य नामक ज्योतिष द्वारा लिखी हुई 'सत्य संहिता, नाम की एक ज्योतिष की पुस्तक है, जो ताड़ पत्रों पर संस्कृत में लिखी हुई है। यह पुस्तक नाड़ी ग्रन्थम नाम की तामिल लिपि में लिखी हुई है। और यह पुस्तक महाराजा बिक्रमादित्य के समय की लिखी हुई बताई जाती है। इसे कन्हैया लाल, मुंशी भूलाभाई देसाई और केशव ध्रुव आदि प्रसिद्ध गुजराती लेखकों ने अपनी आँखों देखा है। और इसका उद्धरण गुजरात और यू. पी. के प्रायः कई अखबारों में हो चुका है। उसमें इस प्रकार लिखा है :—

"लग्न में बुध शुक्र और मंगल वृश्चिक (८) में शनि, मेष (७) में गुरु, कन्या (६) में सूर्य सिंह (५) में चन्द्र और कर्क (४) में राहु पड़ेगा। तुला लग्न में उसका जन्म होगा, पूर्व भाग में तुला लग्न में वह वैश्य कुल में उत्पन्न होगा।

भिन्न २ जाति के लोगों से बसे हुये पश्चिम देश के किसी पुण्य नगर में उसका जन्म होगा, वह कुलीन, दीर्घायु होगा।

इसका मुख और नेत्र सुन्दर, लक्षणयुक्त, देह और शरीर कुछ श्याम बर्ण होगा।

सात्विक, धार्मिक, सद्गुणी और मूर्तिमान सत्य के समान वह अपनी जन्म भूमि छोड़ कर दो तीन भिन्न २ स्थानों में निवास करेगा। बीसवें बर्ष की आयु के बाद वह बिदेश में वास करेगा, उसपर आपत्ति आयेगी, जनता के लिये वह बहुत कष्ट सहन करेगा। अपने देश की भाषा, (अंग्रेज़ी) में प्रवीण होगा, तथा मृदुभाषी सत्यवादी और सारयुक्त बात कहने वाला होगा। वह उदार महात्मा पृथ्वी को अपना कुटुम्ब समझेगा, संसार का हितैषी होगा और जनता उसके पीछे चलेगी। वह देशी वस्त्र धारण करेगा। वह विशेषतः अपने प्राबल्य से जगत में ख्याति और कीर्ति प्राप्त करेगा। वह क्षमाशील और सद्गुणी होगा, क्रोध कभी न करेगा, बस्त्र अलंकार और सुख की ओर उसकी विशेष अभिरुचि न होगी। वह संसार का मित्र बनकर संसार का कल्याण करने वाला होगा, उसकी माता सदाचारिणी साध्वी और साधारण आयु वाली होगी। उसका पिता राजा का मंत्री और राजपुरुषों का मित्र होगा, उसके सोलह बरस की आयु में उसका पिता मर जावेगा। जिस समय वह विदेश में होगा और २२ बरस का होगा उस समय उसकी माता की मृत्यु होगी। वह बिशुद्ध हृदय का गुणवान पुरुष मन और कर्म से एक समान आचरण करेगा। जो विचार उसके हृदय में होगा उसी को वह कार्य रूप में परिणित करेगा।

जनता में वह भाग्यवान पुरुष बहुत सम्मान प्राप्त करेगा,

उससे बड़ा या उसके समान कोई पुरुष पैदा नहीं होगा लोगों के कल्याण के लिये आया हुआ वह पुरुष देवता होगा। उसके चार पुत्र होंगे, वे भी संसार के हितैषी होंगे। परन्तु उनमे से एक मध्यमबृत्ति का निकलेगा। वह महात्मा निराभिमानी, गर्बहीन, विनयी, नीतिवान और बुद्धिमान होगा तथा सदैव सब लोगों को सन्मार्ग पर प्रेरित करेगा। उसकी बुद्धि आगामी घटनाओं को सूचना देने वाली होगी, वह दूसरों में बुद्धि लगाने वाला धीर, साहसी, कार्या-कार्य का विवेक रखने वाला होगा।

वह दीर्घायु होगा, ६५वें बरस में उस पर बहुत दुख पड़ेगा और वह प्राण होम करेगा। तेरहवें बरस उसका बिवाह होगा (पराई स्त्री को माता के समान समझेगा और पत्नीव्रत का पालन करेगा। न्याय समझने वाला, न्यायवादी (वकील) होकर वह दूसरे खण्ड में बैठेगा, परन्तु यवनों के अनीति के कारण उसका परित्याग कर देगा। जनता का उपकार करेगा, और बन्धन आदि का कष्ट भोगेगा। ४५ वें बरस में वह स्वदेश लौटेगा। स्वदेश वासियों की सेवा करता हुआ वह देश सेवक बनेगा।

राजा का विरोध उत्पन्न होने से उसे राज्य की ओर से भीति रहेगी। जेल आदि अनेक कष्ट सहन करने पड़ेंगे। अन्त में वह जनता का कल्याण करने वाला, देव और गुरु के प्रीति श्रद्धालु, योग का अनुष्ठान करने वाला होगा और योग में

सिद्धि प्राप्त करेगा। उसे धन बहुत मिलेगा लेकिन उसका व्यय धर्म कार्य में होगा। ३०वें बरस में वह नीति शास्त्र में प्रवीण होगा और स्वदेश लौटेगा, उसका जीवन सुखपूर्बक नहीं बीतेगा, फिर दूसरे द्वीप में बास होगा, तीन जगह रहेगा। ४०वें बरस में वह प्रसिद्ध कानूनदाँ (वकील) होगा, किन्तु देश सेवा आदि के कारण उसका परित्याग करेगा। ४४वें बरस में वह बहुत कष्ट सहेगा, ४५वें में पुनः देश लौटेगा, देश का हित साधन करेगा, और अनेकों का पथ प्रदर्शन करेगा।

जेल आदि अनेक कष्ट सहेगा, उसके कार्य में बड़े बड़े बिघ्न आवेंगे, राजा की ओर से भय उत्पन्न किया जायगा, बहुत से आदमी कैद होंगे और मरेंगे। ६१वें बरस में भारी विरोध खड़ा होगा, और ६२वें में वह विदेश गमन करेगा। श्वेत प्रजा का शाहंशाह उससे भेंट करेगा और उसकी ओर से कुछ सफलता मिलेगी। वह बिष्णु का अंश होगा, मनुष्य रूप धारण करके जन्म लेगा, कृष्ण पर भक्ति रखेगा और वैराग्य धारण करेगा। सतयुग में नरसिंह के रूप में, त्रेता में राम के रूप में, द्वापर में कृष्ण के रूप में था वही कलियुग में इस महात्मा के रूप में होगा। ऐसे महात्मा का जन्म भाग्य से ही होता है। कलियुग में पाँच हजार बरस बाद ऐसा जन्म होने वाला है। गुण भण्डार राम पर जिस प्रकार त्रेता युग की प्रजा आसक्त थी, उसी प्रकार कलियुग की प्रजा इस गुण सागर पर आसक्ति रखेगी।"

ज्योतिषी के इस उपर्युक्त भविष्य वाणी से और गाँधी जी के

जीवन चरित्र से तुलना की जाय तो दोनों अक्षरशः मिलते हैं, अतएव महात्मा जी अवतार हैं ।

सार्वजनिक उपवासः—

प्राचीन वैदिक संस्कृति के पूर्णावतार संसार की महानतम् विभूति गाँधी, राजा और प्रजा के अन्यायों के प्रायश्चित के रूप में बराबर उपवास करते आये हैं जब जब उन्हे देश के किसी महान हित साधन के लिये अथवा सार्व-जनिक जीवन की शुद्धि के लिये कुछ कठिन प्रयत्न करने की आवश्यकता प्रतीत हुई है, तब २ आपने इस तपस्या, उपवास का आश्रय लिया है। क्योंकि उनका कहना है कि "मैं उपवास को आत्म शुद्धि और प्रार्थना का सर्व श्रेष्ठ साधन समझता हूँ।" आपके उपवास व्रत का सिलसिला उस समय से शुरू हुआ जब आप दक्षिण अफ़रीका के फिनिक्स आश्रम में काम करते थे। ये उपवास सार्वजनिक शुद्धि के लिए थे । महात्मा गाँधी सार्वजनिक दोष को अपना दोष समझते हैं । इसलिये वे कठिन तपस्या से आत्म शुद्धि द्वारा सार्वजनिक जीवन को शुद्ध करना चाहते हैं। यही इनके अवतार सिद्ध होने का मौलिक रहस्य है। निस्सन्देह आपकी तपस्या का व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ा है।

इनका प्रथम उपवास नवम्बर १९२१ ई० में बम्बई के दंगे के सम्बन्ध में हुआ था। दंगा बन्द होते न देखकर आपने उस समय तक के लिये उपवास करने का निश्चय कर लिया जब तक दंगा शान्त न हो जाय। उपवास के चार दिन बाद ही दंगा बन्द हो गया। दूसरा उपवास आपने १९२२ में बारडोली

में चौरा चौरी (गोरखपुर) की दुर्घटना के सम्बन्ध में किया था। तीसरा उपवास १९२४ ई० में दिल्ली में किया था। उस समय जब आपने देखा कि हिन्दू मुस्लिम एकता के सारे प्रयत्न निष्फल हो गये तब उन्होंने २१ दिन तक के लिये उपवास करने का निश्चय किया। उस समय आपने कहा था "मेरे धर्म की शिक्षा है कि जब कोई कष्ट हो और जब मनुष्य उसका निवारण न कर सके तो मनुष्य को उपवास और प्रार्थना करनी चाहिये। हिन्दू मुस्लिम एकता का अब तक मेरा सारा प्रयत्न निष्फल हुआ इसलिये मैं उपवास कर रहा हूँ। मेरा उपवास प्रायश्चित और प्रार्थना दोनों हैं। हिन्दू मुस्लिम दंगा मानव जाति के लिये अपमान की बात है, ऐसा ज्ञात होता है कि हम लोगों ने अपने हृदय से ईश्वर को निकाल दिया है। हम लोग उसे फिर अपने हृदय सिंहासन पर आसीन करें।"

सन् १९३२ का आपका चौथा उपवास आमरण उपवास था। यह उपवास ब्रिटिश सरकार द्वारा हिन्दुओं को आपस में विभक्त कर देने के विरोध में था। १३ नवम्बर १९३१ को गोलमेज कान्फ्रेन्स में महात्मा जी ने कहा था कि अछूतों को पृथक निर्वाचनाधिकार देकर हिन्दुओं को आपस में विभक्त करने के प्रयत्न के बिरुद्ध मैं जीवन दे दूँगा।

पाँचवाँ महान उपवास ८ मई सन् १९३३ को किया। यह वह महान उपवास था जिसकी घोषणा सुनते ही पृथ्वी कम्पायमान हो गई थी। एक अदृश्य चिन्ता से सभी चिन्तित थे। इस उपवास के समय इनकी ईश्वरीयता प्रकट हुई थी। "मैंने

उपवास क्यों किया था के सम्बन्ध में वे स्वयं लिखते हैं कि "सब से पहिला सवाल जिसने बहुतों को चक्कर में डाल दिया है, वह है ईश्वरीय प्रेरणा, मेरे लिये ईश्वरीय प्रेरणा, अन्तरात्मा बिवेक वा सत्य की पुकार सब एक ही है। मैंने कोई आकार नही देखा। इसके लिये मैंने कभी कोशिश भी नहीं की, क्योंकि मेरे विश्वास से ईश्वर आकार रहित है। मैंने जो कुछ भी सुना वह एक दूर से आई हुई आवाज़ थी। पर फिर भी वह मेरे बहुत निकट थी। मैं भूल नहीं कर रहा था, क्यों कि वह आवाज़ ऐसी साफ़ थी, जैसे कोई मनुष्य मुझसे बातें कर रहा हो। जब मैं उस आवाज़ को सुन रहा था, उस समय मैं स्वप्न नहीं देख रहा था। उसको सुनने के पहिले मेरी अन्तरात्मा में भयानक संघर्ष हो रहा था, अचानक मुझे वह आवाज़ सुनाई पड़ी। मैंने उसे सुना, मुझे निश्चय हो गया कि वह "आवाज़' है। मेरे हृदय में होने वाले संघर्ष का अन्त हो गया। मैं शान्त हो गया। शंकाशील व्यक्तियों को सन्तुष्ट करने के लिये मेरे पास कोई उपाय नहीं है। उन्हें यह कहने की स्वतंत्रता है कि वह "आवाज़" केवल मेरे मस्तिष्क की कल्पना थी। हो सकता है। यह सच हो। इसके बिरुद्ध मैं कोई प्रमाण नहीं दे सकता, किन्तु इतना निश्चित है कि समस्त संसार का एक मत से यह कहना भी कि वह 'आवाज़' ईश्वरीय प्रेरणा नहीं थी, मुझे अपने विश्वास से डिगा नहीं सकता है।

इसके अतिरिक्त उनमें सब गुण विद्यमान हैं जो अब तक संसार के महान विभूतियों में थे। ममत्व के पूर्ण त्याग तथा

प्रेम वर्षा तथा साम्यवाद के लिये भगवान बुद्ध से उनकी तुलना हो सकती है। इसी प्रकार 'कर्म योग तथा सब कुछ है और कुछ भी नहीं है, गुण के कारण भगवान कृष्ण; सत्य द्वारा सौन्दर्य का दर्शन करने तथा कड़ाई से धर्म पालन करने तथा अपने अनुयायियों से पालन करवाने के लिये 'हज़रत मुहम्मद से; सेवाधर्म का प्रचार, तथा बुराई को भलाई और घृणा को प्रेम से जीतने के कारण हज़रत ईसा से; अपने जीवनी को स्वयं लिख कर (बुराई भलाई तथा छिपा से छिपा कार्य जो उन्होंने अपने जीवन में किया) वह सेन्ट पाल से; विशुद्ध लगन तथा सत्य के खोज के लिये उनकी तुलना 'टालस्टाय' से; समाजोन्नति की दृष्टि से एफ०डी० मौरिस से, मानसिक विशुद्धता के कारण जे० एच० निवमैन से, आक्सफोर्ड आन्दोलन के प्रवर्त्तक से; सार्वभौमिक भ्रातृभाव के कारण 'अशोक महान' से; ईश्वर साक्षात्कार करने के लिये दरिद्रता से प्रेम करने के कारण फ्रॅन्सिस एसाइसी से; आधुनिक यांत्रिक राज्य से विद्रोह करने के कारण 'चेस्टरनट आफ़ एशिया से; धार्मिक जोश तथा भक्ति के कारण 'जान वेसले' से उनकी तुलना की जा सकती है। किन्तु सब से अपूर्व गुण जो इनमें हैं वह हैं प्रेम के नियम, आत्मबल तथा सत्याग्रह। सब से बड़ा अलौकिक गुण जो वह दुनिया को सिखा रहे हैं वह है बड़े २ दुर्दान्त राक्षसी आधिभौतिक शक्तियों के सामने निशस्त्र सत्याग्रह और उससे विजय। यह गुण और किसी में नहीं था। मर्यादा पुरुषोत्तम राम को भी राक्षसों को मारना पड़ा और रावण से लोहा लेना

पड़ा, भगवान कृष्ण को जरासन्ध और कंस आदि को शस्त्र से मारना पड़ा। इसी तरह संसार के अन्य विभूतियों यथा मुहम्मद साहेब ईसामसीह आदि को भी इस शस्त्र का आश्रय लेना पड़ा था। किन्तु अपूर्व अवतार महात्मा गाँधी के कोई शत्रु नहीं, अगर है भी तो वह स्वयं उनका उचित से अधिक सम्मान करता है। न इनके पास तीर है, न बाण, न तलवार है। सर्वोत्तम गुण उनमें यह है कि उन्होंने कार्य विशेष के लिये संसार को आज्ञा दे दिया और स्वयं उस कार्य को करने लगे, संसार तुरन्त उनके आज्ञा को शिरोधार्य कर लेता है, उस आज्ञा से अगर स्वार्थियों के स्वार्थ पर धक्का पहुँचने के कारण उसका विरोध करते हैं तो वह उसे भी सत्याग्रह तथा अहिंसा द्वारा समझा देते हैं। इन्हें शक्ति तथा शस्त्र का प्रयोग नहीं करना पड़ता। अगर अपने प्रत्यक्ष आज्ञा पालन के लिये शस्त्र का प्रयोग करना पड़े तो वह अवतार नहीं बल्कि साधारण मनुष्य है। अवतार का सब से प्रतिष्ठित प्रमाण इस शस्त्र युग में यही है कि आज्ञा मात्र से लोग उस काम में प्रवृत्त हो जाँय। उसने कहा 'कुन' (होजा) और फैकुन (हो गया)। इसके लिये व्यक्तिगत प्रमाण इस प्रकार हैं।

फ्लोरिडा कालेज (अमेरिका) के अध्यक्ष ने साबरमती आश्रम की इस झोपड़ी का एक पत्थर मंगाया है जिसमें गाँधी जी रहते थे। उस पत्थर को कालेज की उस गुजरगाह (रास्ते) पर रखेंगे जहाँ पर समस्त भूमण्डल के अलौकिक व्यक्तियों की पत्थरों की मूर्ति रूप में यादगार में मौजूद है। उक्त

अध्यक्ष साहब ने अपने पत्र में लिखा है कि कालेज में यह गुज़रगाह इसलिये बनाया गया है कि उनके विद्यार्थीगण संसार के प्रख्यात मुर्दा तथा जिन्दा व्यक्तियों का उचित सम्मान कर सकें। महात्मा गाँधी भी वास्तव में संसार के विख्यात व्यक्तियों में से एक हैं। इसलिये गाँधी जी का नाम खुदवा कर यथेष्ट पत्थर न भेजा गया तो यह गुज़रगाह अपूर्ण रह जायगा।

राष्ट्रवादी मुस्लिम दल पजाब के प्रसिद्ध नेता प्रो० अब्दुल मजीद खां महात्मा जी की अन्तिम रिहाई के विषय में लिखते हैं। "महात्मा जी ने इस बार फिर संसार को दिखला दिया कि आध्यात्मिक ससार में वे अभी अद्वितीय हैं। मन बच और कर्म दृष्टि से वे सत्य, प्रेम और ब्रह्मचर्य के आधार पर प्रतिष्ठित उनकी पवित्रता दुनियां की सबसे बड़ी कठिनाई को हल कर सकती है। उनकी आत्मा और जीवन दिव्य प्रकाश का पुंज है। यह दुबला पतला अनशनवादी फ़कीर इस समय मानवता के उद्यान में खिला हुआ सबसे उत्तम फूल है, नहीं नहीं, वह तो दुनियां का जीवित आठवाँ आश्चर्य है।"

ख़्वाजा हसन निज़ामी ऐसे कट्टर मुसल्मान ने भी गांधी जी में दैवी चिन्ह पाये हैं जैसा कि उनके लेखों से प्रगट है। अमेरिका तथा इंगलैंड के पोप पादरियों ने महात्मा जी को ईसा मसीह का अवतार माना है। एक अमेरिकन पोप ने तो महात्मा जी को सबसे बड़ी विभूति स्वीकार की है। निष्कर्ष यह कि आज समस्त सभ्य संसार महात्मा जी में अपने अपने धर्मानुसार कुछ अलौकिक गुण पा रहा है।

गाँधी की मूर्ति पूजा

राजशाही (बंगाल) में ८ वीं अक्टूबर को वहाँ के सैकड़ों किसानों ने गांधी जी की मूर्ति के आगे जमा होकर उन कीड़ों के नाश करने की प्रार्थना की जो उनकी चावल की खेती को हानि पहुँचा रहे हैं। (भविष्य अखबार १६ अक्टूबर १९३२)।

दो दिसम्बर को सबेरे महात्मा जी जब वर्मनघाट (मध्य प्रदेश) पर नर्मदा नदी पार करने लगे तब मल्लाहों ने उनसे प्रार्थना की कि अपने चरण हमें धो लेने दीजिये और अगर पांव पखारने नहीं दीजिएगा तो हम नाव पर भी नहीं चढ़ावेंगे। इस मर्मस्पर्शी दृश्य ने रामायण की उस समय की घटना याद करा दी जब श्रीरामचन्द्र जी से गंगा पार करते समय निषाद-राज गुह ने ऐसा ही अनुरोध किया था। (प्रताप अखबार जनवरी १९२४)।

अवतार का आध्यात्मिक तथा मनोवैज्ञानिक पक्ष

सर्वव्यापक, निराकार परमात्मा का किसी स्थूल लौकिक रूप धारण करके संसार में प्रकट होना एक अपूर्व वस्तु है। इसलिये अवतार के विषय में अनेक प्रकार की चिन्ताएँ और शंकाएँ होती हैं। इच्छा रहित भगवान की ऐसी इच्छा क्यों होती है, माया निर्मुक्त परमात्मा स्थूल शरीर कैसे ग्रहण करता है। देश, काल वस्तु के परे सीमा रहित भगवान कैसे एक शरीर में सीमित होता है। यही प्रश्न है जिनका सन्तोष जनक उत्तर

अवतार को प्रमाणित करता है। विश्व के पद दलित भक्तों का आर्तनाद ही भगवान की इच्छा है। जिस शरीर केन्द्र से भगवान अवतरित होते हैं वह अलौकिक शरीर भिन्न होता है। और उनका कार्य्य क्षेत्र किसी जाति विशेष तथा देश विशेष अथवा काल विशेष से सम्बन्ध नहीं रहता। उनका कार्य्य सार्वभौमिक भ्रातृभाव, सार्वभौमिक राज्य तथा सार्वभौमिक धर्म के लिए होता है और उनकी कार्य्य शैली सनातन नियमों पर अवलम्बित होती है।

अलौकिक केन्द्र

ब्रह्म में शक्ति पूर्ण है। इस शक्ति का दृश्य के आश्रय से जब उल्लास होता है, तभी दृश्य-जगत में इसका प्रकाश होता है। विकास-प्राप्त यह शक्ति शास्त्र में कला नाम से कही जाती है, और 'सोलह' शब्द पूर्णता का प्रकाश होने से जहाँ पर पूर्ण शक्ति का उल्लास या विकास हो वहाँ सोलह शक्तियाँ प्रकट हुई ऐसा कहा जाता है। जिस प्रकार पूर्णचन्द्र षोडष कला पूर्ण कहे जाते हैं उसी प्रकार पूर्ण शक्ति भी षोडष कला की शक्ति कही जाती है।

आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित मानव विकास सिद्धान्त से अवतार रहस्य और अधिक स्पष्ट हो जाता है विकास सिद्धान्त का अर्थ है कि वर्तमान काल, भूत काल की सन्तान है, और भविष्य काल का पिता है। परमात्मा की सोलह कलाएँ हैं। परमात्मा की यह षोडष कला शक्ति, जड़ चेतन, समस्त विश्व में व्यापक है। जितना जितना जीव अपनी योनि में उन्नत

होता जाता है। उतनी उतनी ही परमात्मा की यह कला, जीव के आश्रय से विकास को प्राप्त होने लगती है। इसको इस प्रकार भी कह सकते हैं कि कला विकास की छोटाई बड़ाई ही जीव योनि की उन्नति या अवनति की सूचक है। एक योनि का जीव, दूसरी योनि के जीव से उन्नत इसलिये है कि उसमें, दूसरे योनि के जीव से भगवद् कला का विकास अधिक है।

चेतन सृष्टि में उद्भिज सृष्टि ही सर्व प्रथम है। षोडष कलाओं में से एक कला अन्न में मिलकर अन्नमय कोष द्वारा प्रकट हुई। पच कोषों में से अन्नमय कोष का उद्भिज योनि में अपूर्व रूप से प्रकट होना एक कला विकास का ही फल स्वरूप है। औषधि, वनस्पति, वृक्ष तथा लताओं में जो संसार के जीवों की प्राण धारण करने वाली तथा पुष्टि देने वाली शक्ति है। सो भगवद् शक्ति को एक कला के विकास का ही फलरूप है। स्वेदज, अण्डज, जरायुज, पशु मनुष्य देवता तक की तृप्ति अन्न-मय कोष द्वारा उद्भिज गण किया करते हैं।

इसके बाद स्वदेज योनि में दो कला का विकास होता है। जिससे अन्नमय, प्राणमय, दोनों कोषों का विकास स्वेदजों में देखने में आता है। उद्भिजों में प्राणमय कोष का विकास न रहने से उद्भिज चल फिर नहीं सकते, परन्तु स्वेदजों में इस कोष का विकास होने से स्वदेज योनि में वे अच्छी तरह से चल फिर सकते हैं। जैसे दीपक कीट, हैजा के कीट, प्लेग के कीट आदि।

इसके बाद अण्डज योनि में भगवद् शक्ति की तीन कला का विकास होता है। जिससे अन्नमय, प्राणमय कोषों के साथ मनोमय कोष का भी विकास अण्डज योनि में हो जाता है। मनोमय कोष का विकास होने से, अण्डज योनि में मानसिक प्रेम आदि बहुत सी वृत्तियाँ देखने में आती हैं। कपोत कपोती शुक सारिका, चकवा चकई का प्रेम मनुष्य में भी दुर्लभ है।

इसके बाद जरायुज के अन्तर्गत पशुयोनि में भगवत शक्ति की चार कलाओं का विकास होता है। चार कलाओं का विकास होने से अन्नमय, प्राणमय, मनोमय कोषों के साथ विज्ञान मय कोष का भी विकास पशुयोनि में देखने में आता है। निकृष्ट पशु दोनों प्रकार के जीव ही अपने अपने अधिकार के अनुसार बुद्धि की चालना कर सकते हैं। उत्कृष्ट पशुओं में तो कहीं कहीं इतना बुद्धि का विकास देखने में आता है कि वे बहुत से कार्य्य मनुष्य की भाँति कर सकते हैं जैसे प्रेम करना, प्रेम समझना, स्नेह बताना तथा समझना आदि कर्म उत्कृष्ट पशुओं में विशेष रूप से देखने में आता है।

तदनन्तर मनुष्य योनि में जीव की उन्नति तारतम्यानुसार इस ईश्वरी कला का विकास ५ से ८ तक हो सकता है। मनुष्य में अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञान तथा आनन्द-मय कोष होते हैं। इन पाँच कलाओं से मनुष्य की साधारण शक्ति का विकास हो जाता है, और ६ कलाओं से विशेष शक्ति का विकास होने लगता है। जिसको शास्त्र में विभूति कहा गया है। इस तरह सोलह कलाओं से

पूर्ण भगवान की आठ कला तक मनुष्य योनि में ही प्रकट होती है। किन्तु आठ कला के बाद शक्ति धारण करना किसी लौकिक केन्द्र द्वारा सम्भव नहीं हो सकता। इसलिये नव कलाओं से लेकर १६ कला तक भगवत शक्ति का विकास जिन अलौकिक केन्द्रों के आधार से होता है उन केन्द्रों का नाम मनुष्य नहीं किन्तु अवतार हो जाता है।

अलौकिक केन्द्र और अवतार

वैज्ञानिक जीव विकास में अवतार क्रोश-शिला (Mileage Stones) हैं। इससे यह पता चलता है कि एक अवतार के बाद दूसरे अवतार तक जीव का कितना विकास हुआ। संसार में सबसे पहिला अवतार मत्स्यावतार हुआ है। सृष्टि के आदि काल में सारा विश्व जल मग्न था, उसमें सबसे पहिले मछली के रूप में जीव का विकास हुआ, इसके बाद जल थल दोनों में रहने वाला जीव कछुआ हुआ। जिसे कच्छपावतार कहते हैं। इसके बाद जल हटने से पृथ्वी घने वनों से आच्छादित हुई उसमें रहने वाले जीव सुअर का विकास हुआ यही बाराह अवतार हुआ, जीव का विकास आधा मनुष्य और आधा पशु के रूप में हुआ यही नरसिंह अवतार है। जिसका शिरोभाग सिंह की तरह और धड़ भाग वर्तमान मनुष्य की भाँति था। फिर शिरोभाग पशु का स्वरूप निकल गया तो शेष धड़ एक छोटे से मनुष्य के रूप में प्रगट हो गया। यही वामन औतार है। यही छोटा मनुष्य बढ़ कर भयानक स्वरूप धारण किया और मार काट

खूंख्वार वृत्ति वाला हुआ। यही परशु शस्त्र धारी परशुराम अवतार हुआ। अब संसार में मनुष्यों का समाज बन गया था किन्तु अराजकता तथा नियम रहित होने के कारण अस्त व्यस्त था। इसलिये राम ऐसे कानून बनाने वाले और उनकी रक्षा करने वाले की आवश्यकता की पूर्ति स्वरूप धार्मिक रामावतार हुआ। इसी प्रकार शान्ति स्थापन के लिये कृष्ण का सामाजिक तथा बौद्ध का राजनैतिक अवतार हुआ। अब वर्त्तमान समय के राजनैतिक परिस्थिति को सुधारने तथा विश्वविकास के शत्रु दुराग्रही राक्षसों का दमन कर के, सारे विश्व के विच्छिन्न राजनीति, समाज नीति तथा धर्म नीति को सार्वभौमिक बनाने के लिये गाँधी अवतार हुआ है। और जिन्हें सार्वभौमिक सेवा का अवतार कहा जा सकता है।

वैज्ञानिक समर्थन

वैज्ञानिकों का कहना है कि जीव विकास के इतिहास में एक समय ऐसा था जब शंख सरीखे बेरीढ़ वाले प्राणियों का ही राज्य था। युगों बीत जाने पर इन प्राणियों का ह्रास हुआ और संसार में पहिले रीढ़ वाले प्राणी मत्स्यों का विकास हुआ। यही मत्स्यावतार हैं। इसके बाद मछलियों के भी युग बीते और हाथ, पाँव, उँगलियों वाले स्थल के ऊपर रेंग सकने वाले, परन्तु जल स्थल दोनों में रहने वाले जीव बढ़े और संसार में फैल गये। आजकल के मेंढक और कछुआ इनके प्रतिनिधि हैं। यही कच्छप अवतार है। अब महा विशाल व्यालों और उरगों की पारी आई। इनका विकास

सुअर के योनि तक हुआ। यही तीसरा अवतार बराहावतार है। जटायु-गरुड़, सम्पाती आदि शक्ति शाली खग पक्षियों का जिस प्रकार वर्णन मिलता है उसी प्रकार नरसिंह, शार्दूल, दिग्गज महाबाराह आदि स्थल चरों की भी चरचा है। यह सब बैज्ञानिक जीव बिकास के क्रम को प्रगट करते हैं। इन घटनाओं के भी युग पर युग बीत गये अन्त में मनुष्य योनि का विकास हुआ। यही प्रथम मानवी जाति जरूर मनुष्य जाति थी और इसी ने मानवी सभ्यता का श्री गणेश किया होगा। और सब पिण्डजों के सर्वोत्तम बिकास के समय में आदिम मनुष्य का आविर्भाव हुआ होगा उससमय के भीमकाय प्राणियों की अपेक्षा यह वामन रूप ज्ञात होता होगा। और पृथ्वी पर तीन पग मात्र पर अधिकार जमाकर सारे संसार पर प्रभुत्व जमा लिया हो। जम्बूदीप या बर्त्तमान एशिया पर पूर्ण प्रभुत्व स्थापित करके दैत्यों को पाताल भेज दिया होगा। यही वामनावतार है। प्रस्तरों में लिखे इतिहास से यह भी ज्ञात होता है कि प्रत्येक महायुग के अन्त में हिम प्रलय होता रहा है। और मनुष्य की जाति में भी इन प्रलयों के कारण बारम्बार परिवर्तन होता रहा है इसी प्रकार बर्तमान धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक बिकास के लिए राम, कृष्ण और बुद्ध के अवतार हुए। अब वर्तमान संसार को एक धागे में पिरो देने के लिए गाँधी जी का अवतार हुआ है।

अलौकिक केन्द्र

आहार निद्रा भय मैथुनंच, सामान्येतत पशुभिर्नराणां ।

अर्थात निद्रा, आहार, भय और मैथुन इत्यादि शारीरिक और मानसिक विकारों का प्रभाव सब प्राणियों में समान रूप से है जितने लौकिक प्राणी हैं उनमें यह चार विकार अवश्य पाये जाते हैं। इन विकारों से कोई रहित नहीं है। इनसे रहित केवल अलौकिक केन्द्र वाला व्यक्ति होता है। गाँधी जी में इन चारों विकारों का कोई चिन्ह नहीं।

आहार

वह आज २६ साले से कोई स्थूल अन्न नहीं खाते। केवल बकरी का दूध और थोड़ा शन्तरा या मुसम्मी का रस ही पीते हैं। वह भी बिना किसी पूर्व संकल्प के कभी कभी चालीस चालीस दिनों के लिए छोड़ देते हैं। और ऐसा व्रत एक नहीं कई बार सफलता पूर्वक कर के दुनियाँ को दिखा दिया है। इस तरह इनके पांचों कोष शुद्ध हैं और आहार के मुहताज नहीं।

निद्रा

जो व्यक्ति आज अपने ५० साल के सार्वजनिक जीवन में बड़े बड़े आन्दोलनों का संचालन सफलता पूर्वक और अंग्रेज ऐसे राज-नीति के प्रभुओं के विरुद्ध चतुर्मुखी लड़ाई लड़ रहा हो वह भला कब गहरी नींद सोया होगा? इस प्रकार निद्रा इनके वशीभूत है।

भय

सारे संसार की सर्वोच्च भयानक, सामूहिक शक्ति, जेल फांसी, कारागार कष्ट, मृत्यु, राज-भय, तथा विरोध भय इनके आज तक के जीवन प्रगति में कोई बाधा उपस्थित न कर सके। इस तरह इनमें भय का स्वभाव ही नहीं है। वह स्वयं कहते हैं कि

जो अहिंसा धर्म का पुरा पूरा पालन करता है, उसके चरणों पर संसार आ गिरता है उसको भय कैसा।

मैथुन

गांधी जी द्वारा लिखित और सर्वमान्य अपने जीवन चरित्र में जो कुछ लिखा है उससे और उनके आज तक के जीवन से यह बात स्वयं सिद्ध है कि वह मैथुन पर पूर्ण बिजय प्राप्त कर लिया हैं। यह सिद्ध हो जाता है कि सामान्य प्राणियों की तरह, आहार, निद्रा, भय और मैथुन का स्वभाव इनमें है ही नहीं। अतएव इनका शरीर लौकिक नहीं बल्कि अलौकिक केन्द्र है।

विकार रहित केन्द्र

पंच तत्व से रचित विश्व के प्रत्येक प्राणी में काम, क्रोध, लोभ, मोह और मद का विकार अवश्य होता है। क्योंकि इन पांचों विकारों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध पाँच तत्वों से है। यह सम्भव है कि किसी में एक या दो कम, अथबा तीन और चार तक कम हो सकता है किन्तु पांचों विकारों से रहित किसी प्राणी का होना असम्भव है। गाँधी जी की ओर ध्यान लगा कर देखिये तो काम (इच्छा) क्रोध, लोभ मोह और मद इन पांचों में से एक भी इनमें नहीं है। इनके जीवन और उसके प्रगति को भली भाँति अध्ययन करने से ऐसा ज्ञात होता है कि इनमें ये पाँचों विकार स्वभाव से नहीं हैं।

प्रत्येक पंचतत्व—पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि, और वायु—रचित शरीर में इन पांचों विकारों, क्रम से—काम, क्रोध, लोभ,

मोह, पाये जाते हैं। इन्हीं विकारों से मुक्त होकर मुक्ति पाने के लिये पाँच देवताओं शिव, बिष्णु, गणपति, शक्ति तथा सूर्य्य की उपासना करनी पड़ती है। ब्रह्मचर्य्य, अहिंसा, अस्तेय, दया, और सत्य के साधना से मनुष्य इन पाँचों देवताओं को क्रम से बश कर लेता है। और मनुष्यता से देवत्व को प्राप्त हो जाता है। निम्नांकित नकशे से यह बात और भी अधिक स्पष्ट हो जाता है।

पंचतत्व	पंचविकार	विकार से मुक्त होने के साधन	देवता
पृथ्वी से	काम	ब्रह्मचर्य्यव्रत	शिव
आकाश से	क्रोध	अहिंसा	विष्णु
जल से	लोभ	अस्तेय	गणेश
अग्नि से	मोह	दया	देवी
वायु से	मद	सत्य	सूर्य्य

अर्थातः—पृथ्वी तत्व से काम उत्पन्न होता है, इस पर विजय पाने के लिये ब्रह्मचर्य्य की आवश्यकता है। पृथ्वीतत्व के देवता शिव हैं। शिव पर तीनों प्रबल इच्छायें (पुत्र, वित्त और यश की इच्छा) चढ़ा दे अर्थात छोड़ दे तो शिव प्रसन्न हो जाते हैं और सब इच्छायें पूरी हो जाती हैं। इसको यों भी कह सकते हैं कि जिस व्यक्ति में काम का विकार नहीं होता वही शिव है। आकाश तत्व से क्रोध उत्पन्न होता है, यह अहिंसा से पराजित होता है और विष्णु पर उन्हें प्रसन्नार्थ चढ़ाया जाता है। जल तत्व से लोभ का विकार उत्पन्न होता है, यह विकार

अस्तेय (चोरी न करना) से पराजित होता है और गणेश जी पर चढ़ाया जाता है। अग्नि तत्व से मोह का विकार उत्पन्न होता है, दया गुण से पराजित होता है और देवी के प्रसन्नार्थ चढ़ाया जाता है। वायु तत्व से मद का विकार उत्पन्न होता है, सत्य गुण से पराजित होता है और सूर्य्य के प्रसन्नार्थ मद (अहंकार) चढ़ाया जाता है। इस तथ्य को सूक्ष्मतः इस प्रकार भी कह सकते हैं कि जिसमें काम का वि।ार स्वभाव से नहीं है वह साक्षात शिव है, जो क्रोधरहित है वह विष्णु है, इसी प्रकार लोभ रहित गणेश है, मोह रहित देवी है और मद रहित होने के कारण सूर्य्य देवता है।

गांधी ब्रह्म हैं

पंच तत्व से रचित गाँधी का शरीर, पंचतत्व सम्बन्धी पांच विकार—काम, क्रोध, लोभ, मोह और मद से रहित है। उनमें पाँच विकारों की जगह ब्रह्मचर्य्य, अहिंसा, अस्तेय, दया तथा सत्य का गुण स्वभाव से है। और इस प्रकार से शिव पर काम, देवी पर मोह चढ़ाकर, विष्णु पर क्रोध चढ़ा कर, गणेश पर लोभ चढ़ाकर, सूर्य्य पर मद (अहंकार) चढ़ाकर इन पंच विकारों से रहित हो गये हैं। इसलिये पांचों देवता इन पर प्रसन्न होकर इनके आधीन हैं। और ये पाँचो देवता पूर्ण ब्रह्म के अंश हैं। पाँचों अंशों को आधीन करके वे पूर्ण ब्रह्म होगये हैं। या यह कहिये इन पांचों विकारों से स्वाभावतः रहित होने के कारण तपस्या से ब्रह्म नहीं हुये बल्कि

स्वय ब्रह्म ज्योति हैं ।

योगिराज गाँधी

योग मार्ग के आठ अंगों में से चार वहिरंग और चार अन्तरंग कहलाते हैं। यम, नियम, आसन, प्राणायाम चार वहिरंग हैं। और प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि चार अन्तरंग वाहिरंग और अंतरंग को मिलाने वाला प्रत्याहार अग है। जीव बाहरी इन्द्रिय और भीतरी इन्द्रिय में फँस कर बँधा रहताहै। इस कारण बाहिरी इन्द्रिय से वीतराग कराने का जो अभ्यासहै उनको यम और नियम कहते हैं। इस प्रकार से यम और नियम के साधनों से, साधक योग साधन का अधिकारी वनता है। चंचलता से वन्धन और धैर्य्य से मुक्ति होती है, इसलिये शरीर को धैर्य्युक्त करने को जो शैली है उसको आसन कहते हैं। शरीर को धैर्य्ययुक्त करने की शैली को प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम साधन के बाद साधक को अन्तरंग साधन का अधिकार प्राप्त होता है। क्योंकि मन और वायु दोनों कारण और कार्य्य रूप से एक ही हैं। प्रत्याहार साधन के द्वारा साधक अपनी बाहरी दृष्टि को बाहिरी संसार से हटा कर भीतरी जगत में ले जाता है। कछुआ जिस प्रकार अपने अंगों को समेट लेता है उसी प्रकार प्रत्याहार के साधन से साधक बाहिरी विषयों से अपनी विषयवती प्रवृत्ति को भीतरी राज्य में खींच कर बाहरी संसार से भीतरी जगत में पहुँच जाता है। यही योग का पाँचवा अंग है।

भीतरी जगत में पहुँच कर सूक्ष्म भीतरी राज्य के किसी

विभाग का सहारा लेकर भीतरी राज्य में ठहरे रहने को ही धारणा कहते हैं। धारणा के साधन द्वारा योगी जब भीतरी राज्य को जय कर लेता है तब बाहिरी और भीतरी राज्य के दृष्टा परमात्मा के सगुण अथवा निर्गुण रूप का प्रत्यक्ष ध्यान कर सकता है। उस समय ध्याता, ध्यान और ध्येय एक हो जाता है। यही योग का सातवाँ अँग है। ध्याता, ध्यान ध्येय रूपी त्रिपुटी का जब विलय हो जाता है और ध्यान करने वाला ध्यान में मिल कर दोनों ध्येय में लय हो जाते हैं, उसी द्वैतभाव रहित, वृत्ति निरोध की अन्तिम अवस्था को समाधि कहते हैं।

योग के इन आठ अंगों पर गांधी जी का पूरा अधिकार है यह बात जन साधारण की समझ में नहीं आयेगा, यह तो वही समझ सकता है जो रात दिन उनके सहवास में रहता है। और उनके व्यक्तिगत जीवन से परिचित है। उनका जीवन जितना सरल और सात्विक है उनके विचार उतने ही उच्च और गम्भीर हैं। उन्होंने प्राचीन योगियों की भाँति आश्रमवत जीवन व्यतीत करते हुये भी ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध ४० करोड़ भारतीय नर नारियों का पथ प्रदर्शन करने में अलौकिक सफलता प्राप्त की है। उन्होंने अपने जीवन को जितना नियमित और संयमित बनाया है, अपने मन और इन्द्रियों का जिस कदर निग्रह किया है और समदर्शिता का जो दृष्टि कोण अपनाया है, उससे वे सच्चे अर्थों में बीतराग योगी बन गये हैं। उनका चरित्र और नैतिक बल इतना ऊँचा है कि विश्व के बड़े से बड़े लोग उनके सम्पर्क में आते ही

उनके व्यक्तित्व से आकर्षित एवम् प्रभावित हो जाते हैं । वे इस महापुरुष के सामने नतमस्तक हो कर लौटते हैं। उनके बिरोधी भी सामने पहुंच कर प्रभावित हुये बिना नहीं रहते। यद्यपि महात्मा जी ने सक्रिय राजनीति से अवकाश सा ग्रहण कर लिया है, फिर भी सारे देश में उनका प्रभाव पहिले से और अधिक हो गया है। वह अलग दिल्ली में भंगी टोला में बैठ कर भी अप्रत्यक्ष रूप से कांग्रेस तथा अस्थायी सरकार का सूत्र-संचालन कर रहे हैं। सभी महत्वपूर्ण विषयों में बड़े से बड़े नेता परामर्श के लिये उनके पास पहुंचते हैं और पथ-प्रदर्शन के लिये याचना करते हैं। गाँधी जी निर्विवाद रूप से योगिराज कृष्ण भगवान के अवतार हैं। अन्धकार से आच्छन्न संसार में वे एक अखण्ड ज्योति हैं। और उनके आलोक से चारों दिशायें प्रकाशित हो उठी हैं। ऐसा विश्वास है कि भारतीयों की भाँति आगे चल कर विश्व के सभी लोग उनकी पूजा करेंगे।

अष्ट सिद्धि के अधिकारी

योग के आठ अंगों में पारंगत योगिराज में आठों सिद्धियाँ स्वयं आ जाती हैं। इस प्रकार योगिराज गाँधी में आठों सिद्धियाँ मौजूद हैं। (१) अणिमा (अणु से भी छोटा होने का गुण) (२) महिमा (संसार के कोने कोने में गाँधी का नाम व्याप्त है । (३) लघिमा (संसार में व्वापक होते हुये भी अपने को सब से छोटा सेवक बना रखा है) (४) गरिमा (इतना भारी हो गये हैं क विश्व की कोई शक्ति भी उनको अपने सिद्धान्त और जगह

से न हटा सकी) (५) प्राप्ति (उन्हें संसार की प्रत्येक वस्तु प्राप्त है) (६) प्राकाम्य (जिस चीज की इच्छा करें मिल सकती है) (७) ईशित्व (उन्हें संसार ने संसार का सबसे बड़ा पुरुष स्वीकार कर लिया और अहिंसा और सत्य का विश्व-व्यापी नेता है) (८) वशित्व । पूर्ण योगिराज और आठों सिद्धीयों के अधिकारी होते हुये भी वह संसार में योग सम्बन्धी आठ भागों में से केवल दो ही अंगों—अहिंसा और सत्य का प्रयोग कर रहे हैं। क्योंकि, वर्त्तमान संसार को केवल उन्हीं दो गुणों की आवश्यकता है ।

वर्त्तमान संसार में दो अवगुण—क्रोध और अहंकार प्रधान हो गये हैं। जिसके कारण संसार की सार्वभौमिकता छिन्न भिन्न हो कर नाश की ओर अग्रसर हो गई हैं। गत महायुद्ध इसका ज्वलन्त उदाहरण है। अगर संसार ने इन दोनों अवगुणों का त्याग न किया तो निकट भविष्य में विगत महायुद्ध से भी अधिक बिनाशिकारी युद्ध होगा और यह अन्तिम युद्ध होगा। जैसा कि इसके पहिले बताया जा चुका है। अहंकार का नाश सत्य से होता है। सत्य का देवता सूर्य्य है। सूर्य्य ही विश्व का जीवन दाता है। अहंकार के बलिदान से सूर्य्य प्रसन्न होता है । सूर्य्य के प्रसन्न होने पर सारा मृत प्राय संसार जीवित हो उठेगा। क्रोध का नाश अहिंसा से होता है, अहिंसा के देवता विष्णु हैं । विष्णु संसार का पालन कर्त्ता है। क्रोध के बलिदान चढ़ाने से विष्णु प्रसन्न होते हैं। विष्णु के प्रसन्न होने से सारे संसार का पालन पोषण होगा और संसार सुखी हो जायगा।

की ताकत ला पटकती है। केवल भेद होगा तो मात्रा का। जिन्हें अहिंसा में श्रद्धा है उन्हें इसका प्रयोग संकट के क्षण में भी न करना चाहिये। चाहे इस समय हम जड़ दीवार से अपना सर टकराते फिरते अनुभव करें। किन्तु डाकुओं के दिल भी एक दिन पसीजेंगे हमें यह आशा नहीं छोड़नी चाहिए।

अहिंसा की साधना करने से कोई दुशमन नहीं रह जाता, जब कोई दुशमन नहीं रहेगा तब डर किसका? अहिंसा व्रत का पालन करते हुये किसी अंग्रेज को किसी तरह का नुकसान पहुँचाने का इरादा छोड़ देना पड़ेगा। उसके आराम की भी उतनी ही फिक्र करनी पड़ेगी, जितनी अपनी। इस व्रतको सिद्ध करने के लिये क्रोध को पचाकर अपनी ताकत वढ़ानी पड़ेगी, अहिंसा को सिद्ध करने के लिये किसी को मारिये मत, किसी को गाली मत दीजिये। किसी का बुरा मत सोचिये। क्रोध न करिये। अपने इरादे के ख़िलाफ़ काम होता देखकर क्रोध तो जरूर ही पैदा होगा। उस हालत में क्रोध को बाहर मत निकलने दीजिये। खुद पचा जाइये। क्रोध ही ताक़त है। उसे निकाल कर आदमी मुर्दा बन जाता है, और पचाकर संसार को जीत सकता है। इस व्रत को पूरा पूरा निभाकर जो चाहियेगा वही पाजाइयेगा। स्वराज्य चहियेगा तो विना खून खच्चर के मिल जायगा। अहिंसा से बढ़कर कोई भी शस्त्र नहीं है।

महाभारत के भीष्म पर्व में कृष्ण नारद सम्बाद में ऐसा लिखा है कि एक दिन कृष्ण जी ने नारद से पूछा "हे नारद। तुम मुझे यह बतलाओ कि वह कौन स ऐसा हथियार है जो लोहे का नहीं है, जो बहुत मृदु है और फिर भी जो सब के हृदय

छेद सकता है, और जिसे बार बार रगड़ कर तेज करते हुये मैं उन लोगों की जीभ काट सकता हूँ।

नारद ने कहा "जो हथियार लोहे का बना हुआ नहीं है वह यह है कि जहाँ तक तुम्हारी शक्ति हो सदा उन लोगों को कुछ खिलाया पिलाया करो। उनकी बात सहन किया करो; अपने अन्ताः करण को सरल और कोमल रक्खो, और लोगों की योग्यता के अनुसार उनका आदर सत्कार किया करो। जो सम्बन्धी या जाति के लोग कटु और लघु बातें कहते हैं। उनकी बातों पर ध्यान मत दो। और अपने उत्तर से उनका हृदय, बाचा और मन शान्त करो"।

इससे प्रकट है कि नारद जी ने भी कृष्ण जी को अहिंसा ही का व्रत बतलाया था जिस व्रत का प्रयोग कृष्ण जी अपने सारे कार्यों में करते रहे

अहिंसा का प्रयोग और सफलता

जो महापुरुष समस्त मानवीय जाति को एक ही परम पिता की सन्तान समझता है, वह हिंसा, रक्त पात, और युग के सिद्धान्त को कैसे कभी अंगीकार कर सकता है। इसलिये गाँधी जी ने अहिंसा के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय सभी समस्यायें अहिंसा के उपाय से और पड़ने पर सत्याग्रह का आश्रय लेकर हल की जा सकती है, ऐसा उनका दृढ़ विश्वास है। वे प्रेम सहानुभूति और सद्-भावनाओं से हर प्रकार के काम निकालने के पक्ष में हैं। उनकी नीति में अस्त्र शस्त्र तथा आज कल के बड़े बड़े रण साधनों और

आष्विकारों को कोई स्थान नहीं है।

अहिंसा में कितना बल है यह गांधी जी ने भारत के कार्य्य क्षेत्र में प्रत्यक्ष रूप से सिद्ध कर दिया है। और साथ साथ यह भी सिद्ध कर दिया है कि वह किस तरह जन साधारण को आत्म बल प्रदान करती है। अहिंसा ही के बल से शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ़ उन्होंने इस देश में जन-मोर्चा संगठित किया। और देश के एक छोर से दूसरे छोर तक सम्पूर्ण जनता में आश्चर्य जनक जाग्रति पैदा कर दी है। आज़ादी के लिये ऐसी प्रबल आकाँक्षा उत्पन्न कर दिया है जिसे कभी दबाया नहीं जा सकता। गांधी जी के असहयोग और सत्याग्रह आन्दोलन को दबाने के लिये कट्टर पंथी ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने कठोर से कठोर उपायों का आश्रय लिया, बड़े से बड़े नेताओं को ही नहीं प्रायः सभी कांग्रेस कार्य्यकर्त्ताओं को कारागार में ठूँस दिया, उनकी जायदादें नीलाम कर दीं, उनके अनुयायियों और सगे सम्बन्धियों को घोर कष्ट दिया, किन्तु फिर भी राष्ट्रीयता के उठते हुये प्रबल ज्वार को वे दबा नहीं सके। राष्ट्रीय आन्दोलन और काँग्रेस संगठन दोनों दिनोदिन सबल ही बनते गये। जो भारतवासी लाल पगड़ी देखते ही थरथरा उठते थे, उनमें गाँधी जी के प्रताप से इतना बल और साहस आ गया कि वे बड़े बड़े अधिकारियों और अफसरों के सम्मुख भी इन्कलाब जिन्दाबाद का नारा लगाते फिरते हैं कौन कह सकता था कि गाँधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलनों से डर कर ब्रिटिश अधिकारी हिन्दोस्तानियों के हाथ में शासन-शक्ति

धरोहर की भाँति लौटा देने के लिये तैयार हो जायेंगे किन्तु आज हम अपनी नंगी आँखों से देख रहे हैं कि प्रान्तों में ही नहीं, केन्द्र तक में जनता की सरकार स्थापित हो गई है और गाँधी जी का आशीर्वाद पाकर नेहरू जी ने समस्त भारत का शासन-सूत्र अपने हाथ में संभाल लिया है।

भारत में यहाँ पहले शासन सम्बन्धी और राजनैतिक टाल मटोल और दावों का रोना ही कांग्रेस का सिद्धान्त था। अब गांधी जीके द्वारा परिवर्तित होकर शान्ति पूर्ण और अवैध साधनों से प्राप्त किये जाने वाले स्वराज्य के लिये भारत कीं माँग की खुल्लम खुल्ला घोषणा हो गई है। गांधी जी ने सत्य पूर्ण और अहिंसात्मक शब्द जोड़ दिया है। शान्ति का अर्थ अहिंसा और बैधता का अर्थ सत्यता है। असत्य को सत्य के ऊपर सस्ती और जल्दी विजय मिलती है। और श्रीमती एनीबिसेन्ट के कथनानुसार "एक झूठ सच्चाई से छः महीने पहिले पहुंचा करती हैं। काँग्रेस ने दासता से मुक्ति पाने के लिये भूत काल में अनेक प्रकार के उद्योग किये थे। एक सुधरों का युग था, विरोध प्रदर्शन का भी समय था, फिर होम रुल का भी जमाना आया, उपनिवेशों के ढंग पर स्वशासन स्थापित करने का आन्दोलन भी दिखाई पड़ा। यदि सम्भव हो तो साम्राज्य के अन्तर्गत और आवश्यक हो तो साम्राज्य के बाहर स्वराज्य और अन्त में पूर्ण स्वराज्य के आन्दोलन का समय आया जिस समय पश्चिम में साम्राज्य विध्वंस हो रहे हों, राजा बध किये जाते हों; जहाँ राजनीति केवल दृष्टि कोण में ही कलह मय

नहीं हो गई हो, बल्कि भाव में कड़वी हो रही हो, ऐसे समय में पूर्ण स्वराज्य उद्देश्य रखने की घोषणा करने के लिये केवल वाक पटुता और राजनैतिक युद्ध कला की ही आवश्कता न थी, बल्कि आदर्श और चरित्र की अदम्य पवित्रता की ज़रूरत थी। जिसे वैसे ही एक महात्मा, दार्शनिक और पूर्ण उन्नत पुरुष ने प्राप्त और व्यवहृत किया हो सचमुच ऐसे पुरुष पूर्ण रूप से गांधी जी हैं।

सत्य

सचमुच ऐसे पुरुष पूर्ण रूपेण गाँधी जी हैं, जिनका दूसरा बड़ा सिद्धान्त सत्य है। जिसका व्यवहारिक प्रयोग राजनैतिक क्षेत्र में बड़ी दृढ़ता के साथ किया है। सत्य को छिपाने का उन्होंने कभी भी प्रयत्न नहीं किया। सत्य को छिपाने या दबाने के वे सदैव बड़े बिरोधी रहे हैं। अपने राजनैतिक आन्दोलन को सफल बनाने के लिये उन्होंने कभी असत्य अथवा कपट से काम नहीं लिया। जब जो कुछ किया पहिले उसकी सूचना स्पष्ट शब्दों में अधिकारियों को दे दी। राजनैतिक क्षेत्रों में जहाँ लोग, दाँव पेंच, और छल कपट से काम लेने के अभ्यस्त रहे हैं, इस तरह की खुली नीति को अपनाते देख कर कुछ लोग प्रारम्भ में उसकी कार्य-कारिता अथवा प्रभाव शीलता में सन्देह कर रहे थे, किन्तु गांधी जी अपनी इस नीति पर ज्यों का त्यों बने रहे, और शत्रुओं को अपने भावी कार्य्य कर्म की सूचना बराबर देते रहे ताकि उसका मुकाबिला अगर कर सकें तो, करने के लिये तैयार रहें। उनका सत्य से ओत प्रोत आन्दोलन जिस तरह सफल हुआ है उस पर बिचार करने से कोई नहीं कह सकता कि उनकी खुली नीति किसी

भी भाँति गलत रही है।

वर्त्तमान अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में इस तरह की खुली नीति का कोई स्थान नहीं है। कूटनीति और दाँव पेंच भरपूर प्रयोग किया जा रहा है गुप्त मंत्रणाएँ और वार्ताएँ किये जाते हैं। इसलिये और कपट नीति में जो जितना ही सफलता प्राप्त करता है संसार में उसका उतना ही अधिक सम्मान होता है। किन्तु इसके साथ साथ इसका दुष्परिणाम भी संसार के सामने है। यह कोई गुप्त बात नहीं है। बिश्व के प्रत्येक राष्ट्रों में एक दूसरे के प्रति भ्रम, सन्देह और अविश्वास की जो भावना बढ़ रही है, जो शत्रुता, दुश्मनी, वैमनस्य और कटुता फैल रहा है, उसका मूल कारण यह कूटनीति ही है। यदि संसार के राजनीतिज्ञ लोग गांधी जी की खुली नीति से काम लें और सत्य पर परदा डाल रखने की नीति त्याग दे, तो उसका कल्याण हो सकता है। इसमें सन्देह नहीं गांधी जी की राजनैतिक कार्य्य शैली में राजनीति को नैतिकता से अलग नहीं किया जा सकता। यदि उसे नैतिकता से रहित कर दिया जाय तो उसका स्वरूप बहुत ही भद्दा हो जायगा विश्व, बिशेषतः पश्चिम की आधुनिक राजनीति वर्त्तमान समय में ऐसी ही है। नैतिकता का उसमें नाम भी नहीं हैं। यही कारण है कि संसार में अशान्ति और हाहाकार मचा हुआ है। और राजनीति की गुत्थी सुलझने के बजाय उलझती जा रही है। जिस क्षण गाँधी जी के आदर्श के अनुसार पश्चिम की राजनीति का आधार नैतिकता हो जाय, उसी क्षण से साम्राज्यबाद, शोषण, प्रभुता, और अत्याचार के लिये कोई स्थान नहीं रह

जायगा। भविष्य में विश्वशान्ति के चाहने वाले राजनीतिज्ञों को विवश होकर गाँधी जी के ही पथ का आश्रय लेना होगा।

गांधी कौन

यदि सतयुग में क्रय, विक्रय नहीं होता था, लाभ हानि नहीं थी, कोई न स्वामी था न कोई सेवक, न कहीं ग़रीबी थी और न कहीं अमीरी और उस आदर्श से अवनत होकर हम लोग आज की अधोगति को प्राप्त हुये हैं, तो क्या यह उचित प्रस्ताव नहीं है कि जिस प्रकार हम लोग कलियुग तक अवनत हुऐ हैं उसी प्रकार हम लोग एक दिन सतयुग में पहुंच जाने का गँभीरता से प्रयत्न करें। इस विचार पर जिसे विश्वास नहीं है वह 'गांधी कौन है' नहीं समझ सकता। कोई भी तर्क, प्रमाण मिसाल, उदाहरण या दलील उसको यकीन नहीं दिला सकती। क्योंकि जिस किसी युग में कोई महान पुरुष उत्पन्न होता है तो इस बात का पूर्ण निश्चय नहीं हो सकता कि उस पुरुष ने युग को बनाया या युग ने उस पुरुष को बनाया। शायद सत्य दोनों के बीच में है। गांधी जी और किसी रूप से भारतीय समाज के साथ हम यह मान सकते हैं कि इन दोनों ने एक दूसरे पर प्रभाव डाला है। संसार की परिस्थिति ने गांधी जी के प्राण और मानस की पुनर्रचना की है। और गांधी जी ने संसार पर अपने व्यक्तित्व की छाप लगा दी है। उन्होंने एक धर्म को जन्म दिया है जो भारतीय समाज के चारों वर्णों और चारों आश्रमोंके पृथक पृथक धर्मोंका सम्मिश्रण है। गांधीजी

ने अपने व्यक्तित्व में कृषक और जुलाहे, व्यपारी और व्यवसाई युद्ध करने वाले, और रक्षक योद्धा और अन्तत: जनता के सेवक के गुणों का (जो ज्ञानी का कार्य्य है) सयोग किया है और अपनी सेवा तथा प्रेम भावना से उच्च बनकर स्मृतिकार और सूत्र कार का पद प्राप्त किया है। उन्होंने अपने में ब्रह्मचारी, गृहस्थ वान-प्रस्थ और सन्यासी धर्मों का भी समावेश किया है। जीवन के आदर्शों में जो एकांगिक माने जाते थे, सामंजस्य और समन्वय स्थापित कर दिया गया है। और वे व्यापक और सर्वाङ्गीण बना दिए गये हैं। और इसीलिऐ गांधी जी की ईश्वर प्रार्थना के परायण की समाप्ति स्वस्ति वाक्यों से होती है। (लोका: समस्ता: सुखिनो भवन्तु और सेर्वेजना: सुखिनो भवन्ति) अर्थात सारी दुनियां सुखी होवे ,सभी लोग सुखी होवें) वह युग पुरुष हैं, युग पुरुष की भाँति उन्होंने हमारे जीवन को आच्छन्न कर दिया है। हम चाहें या न चाहें, उनके विरोधी हें या समर्थक, उसके प्रकाश से आज की हमारी विचार धारा अर्थात हमारे जीवन की कोई दिशा अछूती न रह सकीं। एक प्राकृतिक शक्ति की भांति उन्होंने लक्ष लक्ष व्यक्तियों को प्रभावित किया है। यह दुबला पतला, अर्द्धनग्न मनुष्य संसार के लिये जीवन और संहार दोनों प्रकार की सामग्री प्रस्तुत करता है। जीवन उन्हें जो परतंत्रता अत्याचार दुख या दर्द के शिकार है। और विनाश—उनका जो इन स्थितियों के जिम्मेदार हैं। उसमें अजीव जादू है। अनन्त आकर्षण है। इस पीड़ा और दैन्य के जमाने में वह देव दूत नहीं अवतार सा साबित हुआ है। ज्ञान, भक्ति और कर्म तीनों योगों

का हम इनमें मोहक सम्मिश्रण पाते है। आज से ३० बरस पहले महामना गोखले जी ने कहा था "इस पृथ्वी पर इनसे अधिक महान् इनसे अधिक बीर और इनसे अधिक उदार आत्मा अवतरित नहीं हुई। उनमें आत्मा अनासक्त रूप से कार्य्य कर रही है। यह व्यक्ति है जिन्हीं ने जनता का परिष्कार करने वाली आत्मा का भी संस्कार किया है।"

वह सत्य की गंगा में प्रतिभा और शक्ति की विराट वाहिनी है, वह भारत की अमूल्य विभूति और संसार को प्रभु की अनोखी देन है। वह तपस्या; चिर प्रज्वलित अंगार है। जो संसार को प्रकाश देता है। पर जिसमें ताप के स्थान में शीतलता है उसके रोम रोम से शक्ति साहस और आशा की किरणें निकल कर जनता में जोश का संचय कर रही है। वह अवतार है।

गांधी जी केवल भारत के लिए नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व के लिये एक दिव्य विभूति है। उनका आविर्भाव भारतीयों का ही उद्धार और कल्याण करने के लिये नहीं बल्कि समस्त मानव जाति का हित साधन करने के लिये—सब को न्याय और सत्य का पथ प्रदर्शित करने के हेतु—हुआ है। उनकी आत्मा धर्म, जाति अथवा देश के उन बन्धनों को नही मानती जिनसे सर्वत्र सभी लोग बुरी तरह से बंधे हुये दिखाई पड़ते है। और जो मनुष्य मनुष्य के बीच इतने अधिक भेद भाव उत्पन्न करने के लिये उत्तरदायी हैं। गांधी जी का दृष्टि कोण बहुत ही उदार और विस्तृत है इतना विस्तृत जिसकी साधारण और सामान्य लोग कल्पना भी नहीं कर सकते।

विश्व सेवा संस्थापन में दुराग्रही साम्राज्यवादी ही बाधक है। साम्राज्यबाद के लिये तो घर और बाहर एक सा ही है। उसकी तो जहाँ भी स्वार्थ सिद्धि होगी वहीं उसका कार्य्य क्षेत्र बन जायगा और असल में साम्राज्यबाद पहिले अपने कहे जाने वाले घर ही को नष्ट किया करता है। इसलिये यह कोई आश्चर्य्य की बात नहीं है कि हमको भी उसका शिकार बनना पड़ा। साम्राज्य जातियों ने ही बनाये, उनका आधार तो कुछ थोड़े से ब्यक्तियों की स्वार्थ लोलुपता ही है। उनमें से कुछ तो अपने व्यक्तिगत, साहस, वीरता के प्रदर्शन और शोहरत के लिये, कुछ परिवार और अपने खानदानों का प्रभुत्व स्थापित करने के लिये कुछ ब्यापारी और पूँजीपति अपने ब्यापार और पूंजी के विस्तार के लिये अफ्रीका और एशिया के अनुसन्धान कर्त्ताओं, धर्म प्रचारकों और ब्यापरिक मण्डलियों के रूप में आये हैं। प्रत्येक देश में इन्हीं मुट्ठी भर लोगों ने साम्राज्य की स्थापना की है और इसी के लिये उन्होंने अपने देश और जातियों को अनेक प्रकार के सब्ज़बाग दिखा कर लड़ाई के मैदान में भी घसीटा है। साम्राज्य-विस्तार के पाठ भी इन्होंने ही पढ़ाये हैं और यहाँ तक कि संसार में खून की नदियाँ भी इसीलिये बही हैं।

अब ये साम्राज्यबादी ही आज संसार में राज्य का काम संभालते हैं। अब तक जितनी लड़ाइयाँ होती हैं उनके बाहर से मालूम पड़ता है कि भिन्न भिन्न राष्ट्र लड़ रहे हैं, परन्तु वास्तविक बात वैसी नहीं होती। जिनका आर्थिक लाभ रहता है, उन्हीं लोगो के बीच लड़ाई होती है। प्राचीन काल की सरकारें ज़मीन्दारों

की सहायता से लड़ा करती थीं। अब की सरकारें कुछ पूंजीतियों के ज़ोर डालने से उन्हीं के फ़ायदे के लिये उन्हीं के खर्च से लड़ती हैं। १९११ ई० में जर्मन सरकार मोरक्को के मामले में बहुत दिलचस्पी लेती थी, इसका कारण यह था कि मैनस्मैन एण्ड ब्रादर्स (जर्मन फर्म) का मोरक्को की खानों में आर्थिक लाभ था। इंगलैंड के कुछ व्यवसायियों का रुपया मिश्र में लगा हुआ था। उसकी रक्षा करने के लिये ही अंग्रेज़ी सरकार ने मिश्र के मामले में हस्तक्षेप किया था।

गत महायुद्ध भी पूर्ण रूप से साम्राज्यवादियों का ही युद्ध था। लड़ाई के कल कारखाने जितने भी नष्ट किये गये, वे इसलिये कि जिससे प्रतिद्वन्दी राष्ट्र युद्ध के बाद उनके साथ मुकाबिला न कर सके। जर्मनी के कुछ बड़े बड़े बैंक बर्लिन-बगदाद रेलवे (Berlin Baghdad Railway) में रुपया लगाना चाहते थे। किन्तु अन्य राष्ट्रों की अड़चन के कारण ऐसा नहीं कर सकते थे। महायुद्ध का सबसे बड़ा यही कारण था। ऐसे व्यवसाइयों के लाभ के लिये ही देश विजय किये जाते हैं। ऐसे लोगों में ही कुछ ऐसे लोग हैं जिनका यदि शान्ति रहेगी तो पेशा ही मारा जाता है। इसलिये भी इनकी हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं। दूसरे प्रकार के लोग जो आज कल लड़ाया करते हैं, वे हैं जिन्हें उपनिवेशों में ऊंचे ऊंचे पद प्राप्त होते हैं। और अपने देश में जिन्हें गौरव तथा ऊंचे पद प्राप्त करने का मौका नहीं मिलता।

सारांश यह है कि आज वही मुट्ठी भर साम्राज्यवादी ही हैं

जो मानव-विकास की चमत्कारिक वैज्ञानिक उन्नति का अपनी स्वार्थ लिप्सा और साम्राज्य-वर्द्धनी आकांक्षा के लिये दुरुपयोग करके सारे ससार में कलह, अशान्ति, पारस्परिक अविश्वास और विश्व व्यापी महाभारत के बीज बोते हैं। इतना ही नहीं, इसी कारण आज संसार का एक बड़ा हिस्सा किसी न किसी का गुलाम बना हुआ है। संसार व्यापी इस गुलामी का उद्धार करने ये लिये ही विश्व के सर्वश्रेष्ठ साम्राज्यवादी राष्ट्रों के अगुआ अँग्रेजी जाति के विरुद्ध अहिंसात्मक युद्ध छेड़ दिया। चूँकि साम्राज्यवादियों का केन्द्र स्थान भारत है इसलिये पहिले भारतसे ही साम्राज्यवाद की जड़ उखाड़ फेंकना चाहते हैं।

सार्वजनिक सेवा

वे सार्वभौमिक सेवा के अवतार हैं। क्योंकि वे विश्व शान्ति और सुख के पक्ष में हैं और साम्राज्यवाद तथा शोषण के प्रबल विरोधी हैं। और कोई देश दूसरे देश पर बलपूर्वक शासन करे, कोई जाति दूसरी जाति को अपने से नीचा समझकर उस पर अत्याचार करे। उसको हानि पहुँचा कर अपनी सुविधा की व्यवस्था करे—यह स्थिति उनके लिये असह्य है। यह तर्क उनकी समझ में बड़ा ही उपहासास्पद है कि गोरे लोग सभ्यता के दीप दर्शक हैं और पिछड़ी हुई जातियों की उन्नतावस्था में लाने की जिम्मेदारी ईश्वर ने उन्हें सौंप रक्खी है। गाँधी जी का दृढ़मत है जब तक साम्राज्यबाद कायम रहेगा और सबल राष्ट्र अस्त्र शस्त्रों के बल से दूसरे देशों पर जनता की इच्छा के विरुद्ध शासन करते रहेंगे तब तक संसार में शान्ति स्थापित

नहीं हो सकती और मानव जाति सुख शान्ति के साथ जीवन व्यतीत कर सकती है।

विश्व के राजनीतिज्ञों की ओर से स्थायी विश्व-शान्ति स्थापित करने के अनेक प्रयत्न विगत काल में भी हुये हैं और अब भी हो रहे हैं। किन्तु संसार निरन्तर कटुता, संघर्ष और युद्ध की ओर ही बढ़ता जा रहा है। अभी फ्रान्सिसको के सम्मेलन में जिन बड़े राष्ट्रों ने सार्वभौमिक शान्ति की स्थापना की आयोजना बनाई थी और जिन्होंने सम्पूर्ण मानव-जाति के कल्याण के लिये संसार की अगुआई करने का भार उठाया था, आज उनमें कितना मतभेद और वैमनस्य बढ़ता जा रहा है। यह आज खुला रहस्य है। तीनों राष्ट्रों इंगलैंड, रूस, और अमेरिका के बीच बढ़ती हुई कटुता और फूट को देखकर कौन कह सकता है कि अब आगे युद्ध न होने पावेगा। और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति सुरक्षित रहेगी। इसकी बिफलता का मुख्य कारण यह है कि वे प्रभुता, शोषण और स्वार्थ साधन की मनोंवृत्ति अभी त्याग नहीं सके हैं। संसार में स्थायी शान्ति तो तभी स्थापित हो सकती है जब सभी देशों के लोग और विशेष कर बड़े देशों के लोग गांधी जी के द्वारा सुझाये हुये मार्ग पर चलने के लिये तैयार हों। अपने स्वार्थ को भूल कर और शोषण का अन्त कर वे सभी परतंत्र देशों को स्वधीन घोषित करदें और साथ ही ऐसी आर्थिक नीति अपनायें जो सभी देशों की सभी श्रेणीयों के जनता के रहन सहन के मान को ऊँच उठा सके। और सब का प्रभाव दरिद्र दूर करने में सहायक हो। गांधी जी को यह कभी

सहन नहीं हो सकता कि समाज में एक ओर कुछ थोड़े से पूंजी-वाद ऊँची ऊँची अट्टलिकाओं पर भर पूर सुख-साधनों से सम्पन्न होकर बिलास करें। और दूसरी ओर बहुसंख्यक लोग हवा और प्रकाश से वंचित अस्वास्थ्यप्रद संकीर्ण घरों में अभाव ग्रस्त होकर कंगालों का जीवन बितायें। मनुष्य मनुष्य के बीच अथवा राष्ट्रों के बोच ऐसी बिषम अर्थिक असमानता कभी रह नहींसकती। अगर संसार की भवीष्यवस्था गांधी के बिचारों और आदर्शों के अनुसार की जाय। ससार को अगर आज नहीं तो कल अवश्य ही गांधी जी के अनुसार चलना होगा, क्योंकि वे सेवा के अवतार हैं और सारे संसार के पतितों का उद्धार करने के लिये अवतरित हुये हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये गांधो जी ने पहिले सुधार के विश्व केन्द्र भारत को ही चुना है और यहाँ के पतितों का उद्धार उनके प्रोग्राम में पहिले है। इसीलिये यहाँ के पद दलितजातियों का सबसे पहिले उद्धार करना चाहते हैं जिनकी संख्या लगभग ९ करोड़ है। और जो आज तीन युगों से साम्राज्य वादियों का शिकार बनी हुई है। आनरेबुल मि० सम्पूर्णा नन्द जी कहते हैं कि "हम लोगों में एक बुरी, भ्रामक अथवा हानिकर धारणा यह आगई है कि हमारा देश पृथ्वी के अन्य देशों से पूर्णतः पृथक है। हमारी समस्यायें सब से भिन्न है, और इन समस्याओं के सुलझाने के हमारे उपाय भी सारे जगतमें विलक्षण होगें। इस धारणा के अनेक कारण हैं। पर इसके फैलाने में सरकार के साथ ही हमारे कई गण्यमान्य नेताओं का हाथ रहा है। आज कोई भी सभ्यदेश अन्य सभ्य देशों से पूर्णतया पृथक

असमबद्ध नहीं है । प्रायः सर्वत्र एक ही प्रकार की शिक्षा है, मिलना जुलना सांस्कृतिक वातावरण है। एक ही ढंग से कल कारखाने चल रहे हैं। एक ही ढंग से हड़तालें होती है । एक ही सा आर्थिक संकट है। शासन का स्वरूप कुछ भी हो पर साम्य अधिक और वैषम्य कम हैं। भारत जैसे गुलाम देश के सामने भी वही प्रश्न है जो रूस, जापान, अमेरिका और इंगलैंड के सामने है"।

सेवा के अवतार

महात्मा गांधी के जीवन के आदि से अब तक के कार्यों पर ध्यान दीजिये तो यह सिद्ध होता है कि वे केवल अछूतोद्धार, स्त्री जातोद्धार तथा शूद्र उत्थान के लिये अवतरित हुये हैं। वह स्वयं कहते हैं 'मैं अछूत को हिन्दू-धर्म का सब से बड़ा पाप समझता हूँ। यह विचार मुझमें न तो दक्षिणी अफ्रीका के सत्याग्रह युद्ध के कठिन अनुभव से उत्पन्न हुआ है और न ईसाई धर्म पुस्तकों के अध्ययन द्वारा उत्पन्न हुआ है, बल्कि मुझमें इन बिचारों का प्रादुर्भाव उस वक्त हुआ जब मैं इस बात के समझने के योग्य भी नहीं था, अर्थात यह बिचार मेरे ही घर में उत्पन्न हुआ था, जब मैं मुश्किल से १२ साल का था। मेरे घर में ऊका नाम का एक मेहतर था। जो हमारे यहाँ पाखाना साफ़ करता था, और मेरी माँ मुझे उसके छूने के लिये मना करती थी, और और अगर मैं छू लेता था तो मेरी माँ मुझ पर बहुत क्रुद्ध होती

थी, और मुझे नहलाती थी, तब मैं शुद्ध होता था। मैं अपने मां बाप का आज्ञाकारी पुत्र होते हुये भी इसका कठिन विरोध किया करता था"।

आप फिर कहते हैं "मैं मुक्ति चाहता हूँ" मैं फिर जन्म नहीं लेना चाहता हूँ, किन्तु यह मेरी हार्दिक इच्छा है कि अगर मुझे फिर जन्म लेना ही पड़े तो अछूत के घर में उत्पन्न हूँ। ताकि मैं उनके वेदना, दुख और तकलीफ में शरीक हो सकूँ। और उनको (अछूतों) इस दुखमय जीवन से अपने यत्न द्वारा मुक्त कर सकूं। अतएव मैं ईश्वर से प्रार्थी हूँ कि अगर मैं फिर से जन्म लूं, तो मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के घर में जन्म न लू। (सन् १९२१ ई० में अहमदाबाद अछूत सम्मेलन में सभापति सम्भाषण में कहा था)।

इस उपरोक्त कथन से सिद्ध होता है कि महात्मा जी जब अबोध बालक थे तभी से उनमें अछूतोद्धार की प्रेरणा हो रही थी और अब तो वह मृत्युपर्यन्त तक ही नहीं बल्कि मृत्यु के बाद भी अछूतोद्धार का कार्य करना ही अपनी मुक्ति समझते हैं। अपने उपवास व्रत के समय २० सितम्बर १९३२ में कहा था :—

"वह कौन सी वस्तु है जिसके लिये मेरी प्रबल इच्छा है ? वह कौन सी चीज़ है जिसके लिये मैं अब तक जिन्दा हूँ ? वह कौन सी वस्तु है जिसके प्राप्त करने के लिये मैं खुशी से अपने प्राण का परित्याग कर सकता हूँ। वह यथेष्ट वस्तु है अछूत रूपी रोग का समूल नष्ट होना'। मैं इस रोग का अन्त नाटक की भांति नहीं चाहता, बल्कि मेरी इच्छा है कि

अछूत लोग भाई की तरह गले लगाये जायें। अपने इस उद्देश्य —अछूतोद्धार, कि जिसका स्वप्न गत पचास बरसों से देख रहा था—की पूर्ति के लिये मैं आज अग्नि द्वार से प्रवेश कर रहा हूँ।

मेरी निश्चित धारणा है कि अगर अछूत का रोग समूल नष्ट हो जाय, तो केवल हिन्दू धर्म ही को भयानक पाप से मुक्ति प्राप्त न होगी बल्कि इसका प्रभाव विश्व व्यापी होगा। अछूत के विरुद्ध मेरा युद्ध मानव जाति के पाप के बिरुद्ध युद्ध है।

इन सब उपरोक्त बातों से सिद्ध होता है कि महात्मा जी ने आदि से अब तक केवल अछूतोद्धार तथा शूद्रोत्थान का ही कार्य किया है और अगर दूसरा भी कार्य किया है तो वह भी इसी उद्देश्य के किसी साधन के पूर्ति की लिये ही किया है। राजनोति के लिये प्रकृति के चार गुण ज्ञान, बल, धन तथा सेवा से चार वर्ण बने थे। अर्थात सेवा गुण से शूद्र बने थे इसलिये शूद्रो-त्थान का कार्य करने के कारण महात्मा जी सेवा के अवतार कहे जा सकते हैं।

शूद्रोद्धार

लगभग एक शताब्दी पहले राजाराममोहन राय ने इस तरफ़ कदम उठाया; और उन्होंने जो कार्य्य आरम्भ किया, उसे उनके उत्तराधिकारियों ने बराबर जारी रखा। ऐसे कोड़ियां दृष्टान्त हैं जिनमें हरिजन वालिकाओं का उद्धार किया गया है। और हरिजन बालकों का पालन पोषण किया गया है। ये दोनों ही ईमानदार नागरिक के रूप में जवान हुये हैं। और सुखी तथा

सुन्दर जीवन व्यतीत किया है। कोई भी बड़ा आन्दोलन बिना पृष्ट के अकस्मात उठ खड़ा नहीं होता। और भारत में एक शताब्दी पहिले जब तक और जहाँ तहाँ हुये—इन स्फुट उदाहरणों ने सामाजिक-धार्मिक सुधार के एक कार्य-क्रम में कुछ योग दिया है। जिसे रामानुज ऐसे विभूतियों ने जन्म दिया था। यह सब बातें आधुनिक पीढ़ी की अमूल्य जायदाद हैं। और सेवा के अवतार गाँधी के लिये स्फूर्ति है। जिन्होंने एक सामाजिक-राजनैतिक कार्य्य क्रम को जन्म दिया है। जिसमें अछूत कहे जाने वाले वर्गों जिनको उन्होंने हरिजन नाम दिया है के सामाजिक और आर्थिक और राजनैतिक सुधार का महत्व पूर्ण स्थान है।

समस्त भारत में एक उल्लेखनीय लहर प्रवाहित हो गई है। और यथार्थ में महत्व की बात केवल सफलताओं की सूची नहीं है, बल्कि उस भावना की है जो गाँधी जी के नये कार्य क्रम के परिणाम स्वरूप हिमालय से लेकर कुमारी अन्तरीप तक सम्पूर्ण देश में व्यापक हो गई है। सहायता की भावना तथा अवर्णों के प्रति सवर्णों द्वारा अपने कर्त्तव्य की स्वीकृति ने अपना विस्तृत कार्य्य क्षेत्र बना लिया है। हाई स्कूल के विद्यार्थियों के लिये छात्र-वृत्ति उद्यम की शिक्षा देने वाली संस्थायें, जैसे जूता बनाना, सिलाई चमड़ा कमाना, बढ़ईगीरी, बुनाई, होम्योपैथिक, आयुर्वेद, चटाई बुनना, छापने का काम, ताड़ का काम, टीनसाजी, कसेरे (बर्त्तन जोड़ने) का काम, बाल पाठशाला, विद्यार्थियों के छात्रावास, चिकित्सा के केन्द्र और हरिजनों के लिये चिकित्सा-

शास्त्र की परीक्षायें, और उनके लिये नये कुएँ खुदवाना, कारखाने, व्यापारिक गद्दियों और दूकानों तथा सवर्ण हिन्दुओं के घरों में हरिजनों को नौकरी देना, तथा उन्हें अखबार वेचने वाले आदमियों का काम देना, और उन्हें सवर्णों के लिये धोबी और नाई का काम करने की शिक्षा देना हरिजन कामों में बैल भेजवाना, हरिजन मज़दूरों; उनकी मजदूरी की वृद्धि तथा उनकी बस्तियों में पुस्तकालय, अखाड़े तथा सामाजिक संघों की स्थापना, हरिजन बच्चों में कपड़े बंटवाना, तथा जवान हरिजनों में कम्बल बंटवाना सरकार की ओर से प्रान्तों के मिनिस्टर होना अस्थाई भारत सरकार के मंत्री बनाना, सरकारी नौकरियों में अच्छे अच्छे पदों पर विभूषित होना, भारत के तमाम मन्दिरों को हरिजनों के लिये खोल देने के लिये व्यवस्थापक सभाओं में कानून बनना ये सब कुछ देश भक्ति; वास्तविक सेवा के कार्य्य अथवा शूद्रोद्धार कार्य हैं जो गांधी जी द्वारा स्थापित हरिजनों में भारी संगठन द्वारा किये जा रहे हैं।

इसके बाद कुछ प्राचीन प्रतिबन्ध है, जिनके आधीन हरिजन पड़े हैं उदाहरणार्थ—गढ़वाल ज़िले में हरिजनों की बरात में डोली और पालकी ले चलने की मनाही है। इलाहाबाद हाईकोर्ट से उनके इस अधिकार के पक्ष में फैसला किया गया है। मध्यदेश में भंगियों को लारी हांकने वाले अपनी लारियों में नहीं बैठाते, किन्तु शाजापुर के भंगियों ने यह अधिकार प्राप्त कर लिया है। यह सब कुछ कैसे हुआ है। समाज सुधार के जहाँ तहाँ के दृष्टान्तों द्वारा व अर्थशास्त्र के आग्रहों द्वारा वा धर्म संस्थापकों

के उपदेशों द्वारा नहीं हुआ। बल्कि गाँधी जी के एक ही ऐतिहासिक अनशन द्वारा सारे देश में व्याप्त प्रबल शक्ति द्वारा हुआ। जिसने अपने जीवन को नगण्य समझा और बीस करोड़ भाइयों से नौ करोड़ हरिजनों के पृथक हो जाने को रोकने के लिये आमरण अनशन करने का निश्चय किया।

आज तो जब कि कांग्रेस ने अस्थायी भारत सरकार भारत में स्थापित किया है तो भारतीय मौनी सम्राट गाँधी ने दिल्ली तख्त के बगल में भंगी के मुहल्ले को ही भारत की राजधानी बना दिया है। जहाँ गाँधी स्वयं शासन सूत्र संभाले हुये बैठे हैं और बड़े २ नवाब, राजा महाराजा फौजी मुल्की लाट, बड़े लाट, प्रान्तीय लाट, प्रधान मत्री तथा अन्य मंत्रीगण उसी भंगी टोले में अपने को अपवित्र समझ कर जाते हैं और गांधी दर्शन करके पवित्र हो कर लौटते हैं।

जब आज के राजनैतिक क्षेत्र में जगमगाते हुए पुरुष अपना कार्य्य कर चुके होंगे। और लुप्त हो चुके रहेंगे, तथा जब आज की राजनीति कल के इतिहास रूप में स्थापित हो रहेगी और भारतीय जन संख्या का पांचवा भाग के एक लुप्त वर्ग माने जाने का विचार तक भूतकाल की विस्मृति परम्परा बन गया रहेगा तब २० सितम्बर का गांधी जी का अनशन भविष्य में शताब्दियों तक बाद में आने वाली पीढ़ियों की स्मृति में एक ऐतिहासिक घटना बनी रहेगी। जिसने राष्ट्रीय पुनरुत्थान के लिये भारतीय आन्दोलन के पूर्णरूप को ही परिवर्तित कर दिया। सचमुच गाँधी

जी के एक अनशन ने ९ करोड़ अछूतों का सामूहिक उद्धार कर दिया।

पतित पावन गांधी

सामूहिक पतितोद्धार

अवतार का सर्व प्रथम कार्य्य होता है तात्कालिक पतितों को पावन करना। गाँधी जी ने सब से पहिले अफ्रीका निवासी पतितों को पावन किया।

अफ्रीका का मैदान खाली पाकर योरुपवालों की नजर उस पर पड़ी। अँग्रेज फ्रान्सीसी, जर्मन, डच, प्रायः योरुप की सब जातियों के लोग वहाँ जा बसे। अफ्रीका के एक बहुत बड़े भाग ट्रांसवाल को अंग्रेजों ने अपने कब्जे में कर लिया। इन लोगों ने वहाँ खेती करना शुरू किया। लेकिन इन्हें तो मालिक बनने का शौक है, खेती में मेहनत कौन करे गोरे खुद काम कर नहीं सकते थे, हबशी खेतों पर काम करने को राजी नहीं थे। इस लिये गोरों ने विलायत की सरकार का दबाव डाल कर हिन्दोस्तान की सरकार से शर्त बँधे कुली हिन्दोस्तान से बाहर भेजे जाने का कानून पास करवा लिया।

सबसे पहिले सन् १८३४ ई० में ७००० हिन्दोस्तानी कुली बनाकर मारीशस टापू को भेजे गये दक्षिण अफ्रीका में १६ नवम्बर १८६० ई० को शर्त बंधे हिन्दोस्तानियों का पहिला बेड़ा पहुँचा उस समय वहां नये नये कारखाने खुल रहे थे, खानें खोदी जा रही थीं, ईख, चाय, अरारोट की खेती भी दिन दूनी रात

चौगनी बढ़ती जाती थी। जब तक हिन्दोस्तानियों की जरूरत थी तब तक गोरों ने उन्हें बेखटके रहने दिया लेकिन जब उन्होंने देखा कि ये तो बड़े परिश्रमी हैं। जल्दी ही धनवान हो जाते हैं, तब उन्होंने उन बेचारे निस्सहाय कुलियों को तकलीफ देनी शुरू की।

इस प्रकार हिन्दोस्तानियों की बढ़ती रोकने के लिये दक्षिण अफ्रीका में गोरे लोग और उनकी सरकार जो जो जुल्म करती थी, उनके थोड़े से नमूने नीचे लिखे जाते हैं।

(१) हिन्दोस्तानियों के साथ मामूली आदमी का भी सलूक नहीं किया जाता।

(२) हिन्दोस्तानी स्त्रियों के साथ अमानुषिक व्यवहार हुआ। गर्भवाली स्त्रियों से काम कराया गया, नौजवान स्त्रियों का धर्म नष्ट किया गया। गोद से बच्चों को छुड़ा कर माँ को काम पर भेज गया।

(३) हिन्दोस्तानी व्यापारियों की बराबरी को न सह कर सरकार से कानून बनवा कर उनके हक़ छीने गये।

(४) अँग्रेज लोग वहां और हिन्दोस्तानियों को नहीं जाने देते थे।

(५) उस देश में हमेशा बसने के लिये एक इम्तहान लिया जाता था, जो बहुत ही मुश्किल था। किसी एक यूरोपियन जवान का जानना भी बड़ा लाज़िम था।

(६) दाम देने पर भी हिन्दोस्तानी ट्राम, घोड़ा गाड़ी आदि किसी अच्छी गाड़ी में नहीं बैठने पाते थे। गोरे ठोकर मार

कर उन्हें उतार देते थे।

(७) हिन्दोस्तानियों को दुकान खोलने के लिये लाइसेंस भी बड़ी कठिनाई से दिये जाते थे।

(८) हिन्दोस्तान में किये हुये विवाह नाजायज समझे गये हिन्दोस्तानी स्त्रियों को वेश्या बतलाया गया।

(९) हर औरत और मर्द से ४५) सालाना टैक्स माँगा गया। यह कायदा सन १८९५ ई० में पास हुआ। गोरे चाहते थे कि २१ पौंड सालाना माँगा जाय।

(१०) १९०५ ई० में हिन्दोस्तानी लड़कों के लिये स्कूल अलग कर दिये गये। फीस बाँधी गई। १९०८ ई० में शिक्षा का खर्चा कम कर दिया गया। लड़कियों के स्कूल तोड़ दिये गये स्कूलों में हिन्दोस्तानी शिक्षा का नाम भी नहीं रखा गया। शर्त बंधे कुलियों के लिये तो शिक्षा का कोई प्रबन्ध था ही नहीं।

(११) ट्राँसवाल में हिन्दोस्तानियों के लिये अलग मुहल्ले बनाये गये। उन्हें सड़क की पटरियों पर भी नहीं चलने दिया। जुर्माना हुये।

(१२) आरेंज रीवर में बसने वाले सब हिन्दोस्तानी निकाल दिये गये।

(१३) नेटाल से ट्रांसवाल जाने का हुक्म नहीं था। परवाना लेकर ही जाना होता था।

(१४) ट्रांसवाल की लड़ाई के बाद हिन्दोस्तानियों के लिये हुक्म जारी हुआ कि सब हिन्दोस्तानियों को कमिश्नरों के दफ्तर में अपना नाम रजिस्टर्ड करा लेना चाहिए। १९०३ में यह कानून

पास हुआ कि बिना परवाने का कोई हिन्दोस्तानी ट्रांसवाल में नहीं रह सकता। कुछ महीने के बाद ही वहाँ के हाई कमिश्नर लार्ड सैलबोर्न ने यह मंजूरी दे दी कि हर एक हिन्दोस्तानी को अपना नाम रजिस्टर्ड कराना पड़ेगा। साथ ही दसों अंगुलियों की अलग अलग और फिर चार चार अंगुलियाँ की एक साथ, कुल मिला कर १८ छाप देनी पड़ेगी। इस क़ायदे में हिन्दोस्तानियों के लिये कुली शब्द का इस्तेमाल खुल्लम खुल्ला किया गया था। परवाना हमेशा अपने पास रखने और सिपाही के पूंछने पर तत्काल दिखला देने का भी इस क़ायदे में हुक्म था।

यद्यपि ये तकलीफ़ें एक साथ ही नहीं पैदा हुईं और गाँधी जी को इनके लिये अवसरों पर ही लड़ना पड़ा। लेकिन दक्षिणी अफ्रीका में हिन्दोस्तानियों की हालत समझने के लिये सब तक़लीफ़ें एक साथ ही लिख दी गई है।

कुलियों को जो हिन्दोस्तान से भरती करके टापुओं में ले जाते थे। उनको आरकाटी कहते थे ये आरकाटी हिन्दोस्तान के हर एक हिस्से में शहरों में फैले रहते थे और गाँव के बेचारे भोले भाले लोगों को बहका कर भरती कर लेते थे। वे लोगों को किस तरह धोखा देकर ले जाते थे, उसका हाल पढ़ने से पत्थर का कलेजा भी टूक टूक हो जाता है। वे ऐसी औरतों की ताक में रहते थे जिनका अपने पति से लड़ाई झगड़ा हुआ हो। ये ऐसे जवान आदमियों की तलाश में रहते थे जो देश विदेश घूमने के लिये अपना घरबार छोड़ कर आये हों और ऐसे किसानों की तलाश में रहते थे जो साहूकार के कर्ज़ से बचने के लिये इधर उधर

चले जाते हैं। कितनी ही स्त्रियाँ बेचारी घर से निकल कर तीर्थों में गईं। उन्हें आरकाटी बहका कर ले गये और फिर वे घर न लौटीं।

हिन्दोस्तान छोड़ते समय कुलियों से यह शर्तनामा लिखा लिया जाता था कि हम पाँच बरस के लिये दक्षिण अफ्रीका जा रहे हैं। इतने वक्त के अन्दर तक कभी हिन्दोस्तान लौटने का नाम भी न लेंगे। कुलियों के लिये ये हिदायतें थी

(१) कोई भी कुली अपने मालिक के बनवाये हुये अहाते के बाहर एक मील से अधिक नहीं जा सकता। अगर हुकुम अदूली करे तो उसे पकड़ लाने में जो कुछ खर्च हो वह उसकी तनख्वाह में से जो ८) मासिक के लगभग होती थी—काट ली जाय।

(२) अगर कोई कुली-इन्सपेक्टर से अपने ऊपर होने वाले जुल्मों की शिकायत करे, लेकिन वह झूठ निकले तो भी ऐसा ही किया जायगा। (वहाँ की सरकार की ओर से कुलियों पर होने वाले जुल्मों की जाँच के लिये एक इन्सपेक्टर नियुक्त था। लेकिन वह जब कभी छठे छमासे आता भी था तो गोरे मालिक हर वक्त उसके साथ २ रहता था) कुलियों को अपनी तकलीफें कहने का मौका ही नहीं मिलता था।

(३) अगर कोई कुली बीमार हो जाय तो उसकी तनख्वाह से चार आना रोज़ काट लिया जायगा। हाँ अगर कुली दो बरस का पुराना हो तो सिर्फ दो आना रोज़ काटा जायगा। कुलियों को बारह आना रोज़ दिये जाते थे। लेकिन वहाँ चीज़ें इतनी महंगी थीं कि वह बारह आना यहाँ के पाँच आने के लगभग पड़ता था।

(४) अगर कारखाने के सब कुली काम छोड़कर मालिक की शिकायत करने के लिये चले जाँय, चाहे शिकायत सच्ची ही हो और उससे मालिक को सजा भी मिल जाय तो भी उन कुलियों पर तीस तीस रुपया जुर्माना या दो दो महीने की कैद की सज़ा दी जाय।

(५) अगर इन्सपेक्टर से किसी कुली को शिकायत करनी हो तो पहिले वह मेजिस्ट्रेट के पास जाय, अगर वह ठीक समझे तब वह इन्सपेक्टर के पास जा सकता है। नहीं तो रास्ते से लौटाया जायगा और सारा खर्च उसकी तनख्वाह से कट जायगा।

ऐसे ऐसे जुल्मों को सहते हुये हमारे हिन्दोस्तानी भाई दक्षिण अफ्रीका में अपने दुख के दिन बिता रहे थे। जब ये कुली हिन्दोस्तान में जहाज़ में भरकर टापुओं की ओर भेजे जाते थे। तब जहाज़ में जोड़ा लिखाया जाता था। अर्थात कौन सा मर्द किस औरत के साथ रहेगा। इसका प्रबन्ध डिपो से ही कर दिया जाता था। सैकड़ों हिन्दू जहाज़ पर चढ़ते ही माँसाहारी बन जाते थे। ब्राह्मण अपने जनेऊ तोड़ डालते थे। और पोथियाँ गंगा जी में फेंक देते थे। आरकाटी पंडितों को यह कहकर बहका ले जाता था कि चलो फ़िजी में पुरोहिताई करो और माला माल हो जाओ।

इस प्रकार ४ लाख निस्सहाय, बाल बच्चों से छुड़ाये हुये, गोरों की चाबुक, ठोकर खाकर रोते कलपते हुये हिन्दोस्तानियों के दरमियान पतित पावन संकट मोचन गांधी जी जा पहुंचे।

गांधी जी वहाँ दो बरस तक वकालत करते रहे। और

हिन्दोस्तानियों की शिक्षा का प्रबन्ध भी करते कराते रहे। उन्होंने वहाँ, 'नेटाल इंडियन काँग्रेस' और नेटाल इण्डियन एजुकेशनल ऐशोसियेशन भी स्थापित कराये। इन्होंने कुलियों की सहायता करनी शुरू की जूलू युद्ध और बुअर युद्ध में अँग्रेजी सरकार की मदद करके पारितोषिक में कुलियों को संकट से मुक्त कराना चाहते थे किन्तु अंग्रेजों के वणिक हृदय ने इस पर कुछ ध्यान नहीं दिया बल्कि जुल्म और बढ़ता गया। सत्याग्रह जारी किया। हिन्दोस्तानियों के झुण्ड के झुण्ड बड़ी खुशी से जेल जाने लगे। जैसे वे तीर्थ यात्रा करने जा रहे थे। स्त्री का पति से; पुत्र का माता से; और भाई का बहन से साथ छूटता था जेल में लोगों का दिल कमज़ोर करने के लिये उन्हें बड़ी तकलीफें दी जाने लगी। गांधी जी को भी दो दो बार दो दो महीने की जेल मिली सज़ा सुनाते समय जज ने कहा था—

"इस हाईकोर्ट के एक अच्छे इज्जतदार और योग्यव्यक्ति को सज़ा देते हुये मुझे बहुत ही दुख होता है, लेकिन जिन्हें सज़ा दी जा रही है, वे शायद यह जान कर खुश होंगे कि मैं अपनी मातृभूमि के लिये यह सब तकलीफें सह रहा हूँ। गाँधी जी ने कहा—सरकार ने वादा करके भी पूरा नहीं किया, इसलिए हम लोगों को सत्याग्रह करना पड़ा। जो कुछ सज़ा मिलेगी मैं सब सहने के लिये तैयार हूँ।" जेल में कैसा कष्ट था उसका बर्णन गाँधी जी अपनी 'मेरे जेल के अनुभव' नामक पुस्तक में लिखते हैं।

"जमीन बड़ी कड़ी थी, उसे कुदाली से खोदना था काम कड़ा था, धूप बड़ी तेज़ पड़ रही थी, छोटी जेल से वह स्थान

डेढ़ मील के लगभग होगा. सारे हिन्दोस्तानी झपाटे से काम करने लगे। लेकिन अभ्यास कम था। सब बहुत थक गये। बाबू तालेवन्त सिंह का लड़का रविकृष्ण भी उनमें था, उन्हें काम करते देख मेरा कलेजा सूखता था। ज्यों ज्यों दिन बढ़ता गया; काम का बोझ अधिक मालूम होने लगा। दारोगा बहुत सख्त था। बराबर चलाओ, चलाओ, चिल्लाया करता था। इससे हिन्दोस्तानी बड़े घबड़ाते। कितनों ही को मैंने रोते देखा एक आदमी का पैर फूला देखकर मेरा कलेजा फट रहा था। फिर भी मैं सब से कहता था कि सब कोई ऐसा दिल लगाकर काम करो कि दारोगा को टोकने की ज़रूरत न पड़े। मैं स्वयं थक गया था। हाथों में बड़े २ छाले पड़ गए। उनसे पानी बहने लगा। झुका मुशकिल से जाता था। मैं ईश्वर से बिनती करता कि मेरी लाज रखो। मुझे इतना बल दो कि मैं बराबर काम करता रहूँ। मैं तो उसी पर भरोसा करके सब काम किया करता था। कई बार सत्याग्रह करने और जेल जाने के अन्त में विलायती सरकार के दबाव से दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने जाँच के लिये कमीशन बैठाया और हिन्दोस्तानियों को सजा भुगतने से पहिले ही छोड़ दिया।

जाँच कमीशन ने १८ मार्च सन् १९१४ ई० को अपनी रिपोर्ट पार्लियामेंट में पेश की। रिपोर्ट में हिन्दोस्तानियों पर से प्रायः सब जुल्मी कानून उठा लेने की सिफारिश की गई। २ जून १९१४ को स्मट्स ने इंडियन रिलीफ़ बिल' पार्लियामेंट में पेश किया और वह पास हो गया!

चम्पारन के गोरे वहाँ के हिन्दोस्तानियों को ऐसा कष्ट देते थे कि उसे सुनकर रोंगटे खड़े हों जाते हैं। और हृदय क्रोध से जलने लगता है आधा चम्मारन गोरे ठीकेदारों के हाँथ में था। लाखों ग़रीब किसान गोरे ठीकेदारों के लिये नील बोने के लिये लाचार किये जाते थे। जरा भी गफलत करने पर गोरों के नौकरों से लात घूँसा खाने का भय हमेशा लगा रहता था। जब जर्मनी नील से हिन्दोस्तान के नील का बाजार मारा गया; तब निलहे साहबों ने दूसरी तरकीब ढूंढ निकाली। वे गरीब किसानों से नील की खेती की जगह दूसरी चीज की खेती कराने लगे। या शरह बेशी या तावान का ढंग रचा। रैयत को अपनी जमीन के किसी निश्चित हिस्से में नील बोने के लिये सट्टा (तमस्सुक) लिखना पड़ता था। १८६८ ई० में जमीन का यह हिस्सा फ़ी बीघा तीन कट्टा कर दिया गया था। उसी को तिनकठिया कहते हैं। अगर तिनकटिया से किसान पिण्ड छुड़ाना चाहे तो उसे ७५) सैकड़ा तक जमीन का लगान अधिक देना पड़ता था। या एक मुश्त रकम तावान के रूप में देनी पड़ती थी। इससे किसान उजड़े जा रहे थे। यह तो माली हालत थी। इज्जत आबरू जो जाती थी वह ऊपर से। चम्पारन के किसान गुलामों से भी बुरी हालत में थे। जब कोई बोले तो उसका गला बुरी तरह, दबा दिया जाता था। क्योंकि कोठी के साहब से सरकार डरती पुलिस डरती और कलक्टर भी डरता।

किसानों से कितने अबवाब लिये जाते थे। उनमें से कुछ के नाम ये हैं। बांध बहेरी, पईन खर्चा, चुल्हिआवन, कोल्हुआवन,

बपही, मड़वच, सगाही जंगल, इस्मनवीसी, हिसाबाना, तहरीर, बटछपरी, दसहरा और चैतनौमी, गुरुभेंटी और उपरोहिती।

अबवाव लेना सन् १७९३ ई० के दस साला बन्दोबस्त की ५४ दफ़ा के अनुसार मना कर दिया गया था, तो भी गोरे कोठी वाले उसकी कुछ परवाह नहीं करते थे, वे समझते थे कि कानून तो हमारे घर की लौंडिया है और हमारे भाई बन्दों की करामात है। रैयत जब मालगुज़ारी देने आती तो अबवाव पहिले काट लिये जाते थे। बेतिया और रामनगर रियासतों में कई ठीकेदार मरे हुऐ जानवरों के चामड़े भी ले लिया करते थे जब से चमड़े का भाव चढ़ गया था तब से यह लोभ समाया था, बेतिया में बच्चे पैदा कराने या बच्चा पैदा होने के वक्त धाय या चमारिन का काम भी ठीके पर दिया जाता था। बेतिया राज्य को इस मद से तीस हजार रुपये की आमदनी थी। बेतिया में मिट्टी का तेल बेचने का भी हुक्म नामा दिया जाता था। रैयत अपनी ज़मीन में उगे हुए पेड़ों को बिना ज़िमीन्दार के हुक्म के नहीं काट सकती थी। सूखे या कटे हुये पेड़ की आधी लकड़ी का दाम ज़मीन्दार लेता था। वहाँ काम करा कर जमीन्दार मज़दूरों को मजदूरी नहीं देता था। बहुत सा काम तो बेगार से कराया जाता था। इसी तरह की सैकड़ों तकलीफ़ें चम्पारन के बेचारे किसानों को भोगनी पड़ती थीं।

गाँधी जी ने आन्दोलन करके सरकार को मजबूर किया कि वह चम्पारन की रियाया को निलहे गोरों के जुल्म से बचावे। सरकार ने जाँच के लिये एक कमीशन बैठाया, उसमें उसने गाँधी

जी को भी रक्खा। कमीशन ने अपनी रिपोर्ट तैयार करके सरकार को दी। सरकार ने उसे मंजूर करके हुक्म जारी किया। उसके अनुसार नील की खेती के लिये तिनकठिया प्रणाली उठा दी गई। जिसका जी चाहे नील बोवे चाहे न बोवै। सट्टा लिखना न लिखना किसान की मर्जी पर रहा, कोई जोर जुल्म नहीं किया जा सकता। नील का दाम बोने वालों की मर्जी से दिया जाय। तावान लेना बन्द कर दिया गया। अबवाब लेना रोक दिया गया मालगुज़ारी की रसीद देने के लिये ज़मीन्दारों को हुक्म दिया गया। मिट्टी के तेल का ठेका देने की प्रथा उठा दी गई। चमारिन का ठेका और मरे जानवरों के चमड़े ले लेने का ज़मीन्दार का हक़ बेकानूनी ठहराया जाकर रोका गया। इसी तरह के कानून बनवा कर गाँधी जी ने चम्पारन के किसानों का दुख दूर किया। सरकार ने भी आप की बड़ी बड़ाई की और प्रार्थना किया कि कम से कम छः महीने आप चम्पारन में और रहें, जिससे कानून ठीक ठीक चल निकले और उसके कारण निलहे गोरों और रिआया में दंगा फ़साद न हो। इसके अनुसार गाँधी जी छः महीने चम्पारन में रहे। इस अवसर पर आपने वहाँ एक लड़कियों की पाठशाला और तीन लड़कों की पाठशालायें स्थापित कीं। आपके प्रबन्ध से वहाँ रोगियों को मुफ्त दवा दी जाने लगी। और वहाँ लोग अपने घर का फैसला भी आप ही से कराते थे।

मज़दूरों का उद्धार

फरवरी १९१८ ई० में अहमदाबाद की मिलों के मालिकों

और मज़दूरों में तनख्वाह की कमी के कारण कुछ झगड़ा हो गया। गाँधी जी ने पतित मज़दूरों का पक्ष लिया। मज़दूरों ने हड़ताल कर दी। बेचारे हड़ताली भूखों मरने लगे। तब कुछ लोगों ने उन्हें ताना दिया कि तुम लोग तो मर रहे हो, और तुम्हारे नेता आराम से खा पीकर मोटरों पर घूमते हैं। उस वक्त गाँधी जी ने यह प्रतिज्ञा की कि जब तक मज़दूरों की शिकायत दूर न होगी तब तक मैं अन्न जल ग्रहण न करूगा। अन्त में मिल के मालिकों ने मज़दूरों की तनख्वाहें बढ़ा दीं और गाँधी जी ने एक सप्ताह और उपवास करने के बाद अन्न जल ग्रहण किया। उस समय बहन अनुसुया बाई ने अपने भाई का पक्ष छोड़ कर जो एक मिल के मालिक थे गाँधी जी के साथ मजदूरों की बड़ी सहायता की। मिलों के प्रायः सब मालिक गाँधी जी के भक्त, मित्र और मुलाकाती थे, लेकिन आपने सत्याग्रह का शस्त्र उन परभी चलाकर उनको ठीक रास्ते पर किया। और मज़दूरों का इस प्रकार से उद्धार किया।

किसानोद्धार

बम्बई प्रान्त में खेड़ा एक जिला है। सन् १९१८ के शुरू में वहाँ रबी की फसल मारी गई। वहाँ सरकारी नियम है कि फसल चार आने से कम हो तो सरकारी लगान माफ़ कर दिया जाता है। उस समय खेड़े में अकाल तो था ही, प्लेग भी खूब संहार कर रहा था गुजरात सभा की ओर से गांधी जी और मि० पटेल ने गाँव गाँव घूम कर अच्छी तरह जाँच कर सरकार से प्रार्थना की कि इस साल लगान माफ़ कर दी जाय। लेकिन

कमिश्नर साहब इससे बिगड़ गये। और अपनी हठ पर अड़ गये। अन्त में मजबूर होकर गाँधी ने अपना सत्याग्रह का शस्त्र संभाला। वे गाँव गाँव घूम कर किसानों को समझाने लगे कि अपने हक़ पर कायम रहो और लगान मत दो। २३०० किसानों ने प्रण कर लिया कि चाहे जायदाद बिक जाय, गहना गुरिया छिन जाय, सरकार हमारे जानवरों को छीन ले, लेकिन हम लगान न देंगे। ग़रीबों की लड़ाई शुरू हुई। सरकारी अफ़सर किसानों का माल असबाब नीलाम कराने लगे। किसान लोग अपने जायदाद की कुर्की देख कर बहुत खुश होते थे। स्त्रियाँ भी इस लड़ाई में शामिल हुईं।

अन्त में सरकार को झुकना पड़ा। सत्याग्रह की जीत हुई। सरकार ने घोषणा कर दी कि लगान जो दे सकते हों वे दे दें। जो नहीं दे सकते वे न दें। गाँधी जी ने इस प्रकार किसानों का उद्धार किया।

सार्वभौमिक पतितोद्धार

राक्षस के लक्षण

अवतार का दूसरा कार्य्य विश्व विकास के हठी बाधक राक्षसों का दमन करना और विश्व में शान्ति स्थापन करना है। इसलिये पहिले इस बात का ज्ञान कर लेना परमावश्यक है कि वर्तमान समय में ऐसे राक्षस कौन हैं और उनके मुख्य लक्षण क्या हैं? राक्षसों के विषय में संसार की एक अजीब धारणा है। उनका

मत है कि राक्षस एक भयानक प्राणी है। जिसका रूप रंग साधारण व्यक्तियों से सर्वथा भिन्न होता है। अनेक सींग पूंछ तथा कई मुख तथा हाथ होते हैं। वास्तविक बात यह है कि राक्षस, सभ्य पुरुषों की भाँति सुन्दर विद्वान, ऊपर से महात्मा और देव उपासक होते हैं। मिलनसार और समाज में उत्तम ढंग से रहते हैं। किन्तु इस सब गुणों के अन्दर निकृष्ट स्वार्थ और हम चुनी दीगरे नेस्त (मेरे बराबर कोई नहीं है) की भावना उसमें इस प्रकार ओत प्रोत रहती है कि हठ वश वह दुराग्रही हो जाता है। किसी भी विषय पर अपना मत इन्हीं अवगुणों पर स्थिर करता है। और यह भली भाँति जानता हुआ कि वह गलती पर है और संसार उसके इस मत विशेष के विरुद्ध है। किन्तु वह अपने हठ पर अडिग रहता है। यहाँ तक कि उस हठ विशेष के परिणाम स्वरूप चाहे उसे निजी मृत्यु अथवा अपने कुल, कुटुम्ब और अनुयायियों के सर्वनाश का भी मुकाबिला करना पड़े इतिहास में रावण, हिरण्य कश्यप कंस, दुर्योधन जरासंध, आदि कतिपय ऐसे राक्षसों का वर्णन मिलता है। अध्ययन करने से, उनमें इस प्रकार के दुराग्रह के अतिरिक्त और कौन सी ऐसी बात है जो तात्कालिक सभ्य पुरुषों में थे और उनमें न थे। उदाहरण के लिये मन्दोदरी की रावण से अन्तिम प्रार्थना हो लीजिये जब उसने समझाया था कि इतना सर्बनाश के बाद भी अब आप चेतें कि राम साधारण राजपुत्र नहीं किन्तु अलौकिक पुरुष अथवा अवतार है। उन्हें सीता जी को देकर सुलह कर लीजिये और हम दोनों सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करें। दुराग्रही रावण ने

उत्तर दिया। "जानामि राम मधुसूदनं च जानामि सीतां जनक प्रसूतां। बध च जानामि निजं दशस्य, तथापि सीतां न समर्पयामि।" अर्थात:—राम को मैं खूब जानता हूँ वह मधु कैटभ के समय से हमारे राक्षस वंश का समय समय पर नाश करता आरहा है। और मैं जनक से उत्पन्न सीता को भी जानता हूँ कि वह अचल महालक्ष्मी है। इतना ही नहीं बल्कि मैं यह भी जानता हूँ कि मेरी मृत्यु भी इन्हीं के हाथों ध्रुव निश्चित है। किन्तु यह सब जानते हुये भी मैं सीता को राम के हवाले नहीं कर सकता। दुराग्रह का यह एक चोटी का उदाहरण है।

ठीक इसी तरह भगवान कृष्ण का दुर्योधन को यह समझाने पर कि पाँच भाइयों को जीवन निर्वाह के लिये केवल पाँच गाँव ही दे दीजिये। तो दुर्योधन उत्तर देता है "सूच्याग्रं नैवदास्यामि बिना युद्धं न केशवा:" इसके बाद भगबान कृष्ण ने धर्म अधर्म का विवेचन करते हुये उसे ऐसा न करने के लिये समझाया तो दुराग्रही दुर्योधन फिर कहता है कि "जानामि धर्मं न च में प्रबृत्ति जानामि अधर्मं न च में निबृत्ति। केनापि देवेन हृदयस्थितेन यथा नियुक्तोस्मि तथा करोमि।" अर्थात:—धर्म क्या है मैं उसे खूब जानता हूँ, किन्तु मैं क्या करूँ मेरी इसमें प्रवृत्ति नहीं। मैं अधर्म भी खूब समझता हूँ किन्तु क्या करूँ मेरी इससे निबृत्ति नहीं है। इसके अतिरिक्त आप यह बतलाइये कि कौन सा हृदय है जिसमें भगवान स्वयं विराजमान नहीं हैं। फिर जैसा वह चाहते हैं मेरे हृदय से कराते हैं। मेरा इसमें क्या दोष। दुराग्रही दुर्योधन ने अपने अनुचित हठ के प्रतिपादन में अपने तर्क से स्वयं

भगवान ही को इस दुराग्रह का कारण ठहराया। इसी प्रकार हिरण्यकश्यप, कंसादि दुराग्रह के कारण राक्षस कहलाते थे। और यही दुराग्रह राक्षस होने का मुख्य लक्षण है। इसी प्रकार के दुराग्रही इस समय भी मौजूद हैं। जिनके कारण सारी वसुन्धरा दुख और कष्ट से आक्रान्त हो रही है।

राक्षसीयता क्या है

वर्तमान साम्राज्यवाद ही प्राचीन शब्दों में राक्षसीयता है। साम्राज्यवाद केवल एक साम्राज्य विस्तार की योजना और गरीबों के परिश्रम को लूटने की नीति ही नहीं, बल्कि यह तो एक सभ्यता की शकल में संसार के सर पर चढ़ा हुआ प्रत्यक्ष राक्षस हैं। इसका एक अलग सामाजिक शास्त्र है। अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिये उसने धर्मशास्त्रों और सिद्धान्तों का भी उपयोग किया है। साम्राज्यवादी अर्थात बड़े २ जिमीन्दार, पूंजीपति, और बड़े २ ब्यापारी और ब्यवसायी ईश्वर और धर्म को भी मानते हैं। किन्तु ये लोग धर्म और ईश्वर की दुहाई उसी हद तक देते हैं, जहाँ तक उनको पैसा बटोरने की नीति और भोग विलास के जीवन में कोई बाधा न पड़े। यह बात उनकी राजनीति से स्पष्ट सिद्ध हो जाता है

साम्रज्यबादी नीति

साम्राज्यवादी राजनैतिक दासता का उत्तर सन्तोष जनक देता है। इसने भी पुराने राज के नियमों को असभ्य और निरंकुश कहकर घृणा किया है। और अनेक स्थान पर गुलामी

के नए २ साधनों का आविष्कार कर लिया है। इनसे अगर यह सरल सा प्रश्न पूछा जावे कि "समस्त मानव जाति के भाग्य की कुंजी केवल एक मुट्ठी भर आदमियों के हाथ में हो क्यों है। तो इसका उत्तर देते हैं "कानून और शान्ति की स्थापना करनी ही होगी, नहीं तो सरकार शासन छोड़ दे" कितना मनोहर उत्तर है। कौन कहता है कि कानून और शान्ति न रहे, किन्तु असली प्रश्न तो यह है कि इन कानूनों को बनाया किसने और किसके हित के लिये बनाये? क्या पब्लिक से कभी कानून बनवाने में राय ली गई थी। संसार के मुट्ठी भर पूँजी-पति और उनके दुमछल्ले जैसा चाहें वैसे कानून अपनी विषय पूर्ति की रक्षा व नीति के समर्थन के लिये बनवा लेते हैं, और फिर जनता से राजनैतिक शास्त्रों की शिक्षा व तलवार के बल से कहा जाता है कि कानून का पालन करो। यह है साम्राज्यवादी राजनीति का उद्देश्य। इसके संचालक हैं पूंजीपति, समर्थक हैं कानूनदाँ वकील और बैरिस्टर। निरंकुश राज्यसत्ता के स्थान में वर्तमान समय में थोड़े से धनी मानी व्यक्तियों का शासन स्थापित होगया है।

अर्थनीति

साम्राज्यवादी अर्थ शास्त्र के विद्वानों ने गुलामी व आर्थिक लूट खसोट के प्राचीन नियमों को वहशियाना व जंगली कहकर ठुकरा दिया है। और विज्ञान के उन्नति के साथ २ आर्थिक शोषण और लूट के नए २ ढंगों का आविष्कार किया है। मज़ा यह है कि इन साधनों द्वारा न मनुष्य जीता ही है और न मरता

ही है। लाचार दिन ब दिन धन सम्बन्धी गुलामी के फन्दे में फंसता जा रहा है। जोंक की भाँति धीरे २ जनता का खून चूसा जाता है किन्तु कहा जाता है कि शरीर के अन्दर खराब खून निकालने की यह औषधि है। फलतः वैज्ञानिक तरीके से तलवार की गुलामी के बजाय पैसे की गुलामी स्थापित हो गई है। अगर उनसे पूँछिये कि क्या कारण है ससार में कच्चे व बने हुये सामान जैसे—अनाज, कपास, कपड़ा मशीन आदि वस्तुओं की उपज पहिले से कई गुना बढ़ गई है, किन्तु दरिद्रता पहिले से कहीं अधिक भीषण होगई है" यह कैसी पहेली है। उपज और उत्पादन शक्ति भी बढ़े और साथ ही आर्थिक गुलामी और दरिद्रता भी बढ़े। वे लोग जबाब देते हैं कि People are poor because there is poverty (लोग गरीब है क्योंकि गरीबी मौजूद है। सोना चांदी, लोहा, ताँबा, मुद्रा आदि की संख्या कम से कम आज १०-१५ गुना बढ़ गई है किन्तु इसके साथ २ गरीबी ५०-६० गुना बढ़ गई है।

व्यापारी, बैंकर्स, पूंजीपति, धनीमानी और उनके साथी भी इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार देते हैं कि मौजूदा गरीबी शोक जनक और दुखःदायक है पर वह टल कैसे सकती है"। प्रश्न का सीधा उत्तर न देकर वह उल्टी तरह से आये दिन की मची हुई आर्थिक अशान्ति, कलह और गरीवी के प्रश्नों को सुलझाने के लिये नई नई पेचीदगियाँ पैदा कर रहे हैं।

साम्राज्यवादियों ने प्राचीन धार्मिक सिद्धान्तों और पुस्तकों को तोड़ मरोड़ कर अपना उद्देश्य सिद्ध कर लिया है। सबसे

पहिले इन्होंने देश के धार्मिक संस्थाओं को हस्तगत कर धर्म के प्रचार की कुंजी को अपने हाथ में ले लिया। दूसरी ओर ईश्वर प्रारब्ध, तक़दीर, पुनर्जन्म और धार्मिक सिद्धान्तों की अफीम में लोगों को बेहोश कर दिया। ईश्वरवाद ने पिसे, पिटे, पिछड़े और पीड़ित जनसाधारण को सन्तोष और धैर्य्य का घूंट पिलाया। प्रारब्ध ने उसकी भीषण भूख (ज्वाला) को भाग्य-फल कैह कर सान्त्वना दी, धर्म गुरुओं पादरियों और मुल्लाओं ने जनता को क्रान्तिकारी मनोवृत्ति को प्रचलित धर्मवाद की सान्त्वना और सन्तोष के औषधियों से कुचल दिया है। और साम्राज्यवादियों के हाथ में धार्मिक शक्ति भी पैसा बटोरने के हितार्थ सौंप दिया है। इसी कारण हम देखते हैं कि समाज में सब से बड़े पूँजीपति व व्यापारी ही सबसे अधिक धार्मिक और प्रगति विरोधी हैं। पैसा कमाने और रक्त चूसने के लिये यह दल संसार के किसी भी साधन व तरीके को छोड़ने वला नहीं है। हिन्दुओं में मारवाड़ी, मुसलमानों में खोजे, ईसाइयों में यहूदी इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं।

लेनिन द्वारा बताये हुये साम्राज्यवाद की पांच विशेषतायें हैं। (१) एकाधिकार की स्थापना, चन्द महाजनों का आधिपत्य (३) पूंजी का निर्यात, (४) पूंजीवादी राष्ट्रों द्वारा संसार के पिछड़े देशों का बँटवारा (५) अन्तर्राष्ट्रीय और आर्थिक गुटों का निर्माण।

ये हैं कुछ थोड़े शब्दों में साम्राज्यवाद की विशेषतायें। इसके जन्मदाता, पोषक, सम्वर्द्धनकर्त्ता हैं अँग्रेज पूँजीपति जिसके

फल स्वरूप उनके साम्राज्य में सूर्य्यास्त नहीं होता इसलिये नहीं कि सूर्य्य उनका जीवनदाता और रक्षक है बल्कि अपनी विशाल आंखों से सदैव यह देखने के लिये कि कहीं गरीबों, श्रमिकों और मजदूरों का शोषण करने का कोई नया साधन तो नहीं पैदा कर रहा है। इसके साम्राज्यवादी नीति ने सौ ही साल में संसार में उथल पुथल, अशान्ति, कलह, पारस्परिक वैमनस्य और युद्धों का ताण्डव नृत्य खड़ा कर दिया। समाज का आर्थिक ढांचा नष्ट भ्रष्ट कर डाला। नये नये राजनैतिक व आर्थिक सिद्धान्त ने जन्म लिया। पुराने उत्पादन के साधनों को दकियानूसी कह कर तिरस्कार से फेंक दिया, प्रचलित उद्योग धन्धों को मेट दिया और उसकी जगह मशीन का हल, बिजली की रोशनी, सैर को मोटरकार, तफरीह को सिनेमा, लड़ने को हवाई जहाज व जंगी जहाज, जहरीले गैसों आदि का अविष्कार कर संसार को चौधियां और घबड़ा डाला।

गाँधी जी की दमन नीति

अब यह सिद्ध है कि वर्त्तमान साम्राज्यवादीयता ही राक्षसीयता है और उसके सहायक और पोषक राक्षस। आज संसार में इस 'वाद' का अगुआ अंग्रेज जाति का अनुदार दल है। इसी लिये विश्व की शान्ति के लिये तथा सार्वभौमिक पतितों को एक ही प्रयत्न में उद्धार करने के लिये गाँधी जी ने दमन के लिये इनको ही चुना है। गाँधी जी का अस्त्र सत्याग्रह है और साधन अहिंसा है। गांधी द्वारा दमन करने का अर्थ, सर्वनाश अथवा बध नहीं है बल्कि सत्याग्रह करके उसके दुराग्रह को मिटाना

है। शत्रु पर विजय करना नहीं है, बल्कि उसे अपने मत का कर लेना है। यह इस बड़े सत्य पर भी निर्भर करता है कि इस संसार में कर्त्तव्य का उतना ही स्थान है जितना अधिकार का। संसार में रहने का अधिकार उनको भी है। किन्तु सत्याग्रह के सिद्धान्त पर।

गांधी-अंग्रेज युद्ध

स्वामी दयानन्द जी ने एक बार कहा था कि "मूर्ख से पाला पड़ा था छुटकारा मिला, अब बुद्धिमानों से पाला पड़ा है। छुटकारा मिलना कठिन है" अर्थात:—मुसलमान शासक मूर्ख थे जिन्होंने अपनी नीति, जुल्म तथा तलवार से भारत की प्रजा को थोड़े दिनों में उन्हें नष्ट कर देने के लिये मजबूर किया। अंग्रेज बुद्धिमान हैं इनसे छुटकारा मिलना कठिन है, क्योंकि इनकी नीति साधारण जनता कभी भी नहीं पहचान सकती और जो पहिचान पाते हैं, उनको वे मिला रखते हैं। और जो समझ कर विद्रोह करते हैं उनके विरुद्ध उन्हीं के दल में फोड़कर उन्हीं के बराबर शक्तिशाली व्यक्ति को उसके विरोध में खड़ा कर देते है। बलि के शत्रु कि भाँति शत्रु का आधा बल ताल ठोंकते ही कम हो जाता है।

अंग्रेजों को शैतानी नीति

मुस्तफ़ा कमाल पाशा ने एक बार शैतानी नीति के विषय में इस प्रकार कहा था कि टर्की के एक क्लबघर में, आमोद प्रमोद के

लिये, कुछ भद्र पुरुष इकट्ठे थे। कुछ देर बाद एक शैतान आया जो देखने में गौरांग, सुन्दर और दिव्य वस्त्रधारी था। शैतान भी उन्हीं लोगों में हिल मिलकर उनके खाने, पीने, खेल तमाशे में शामिल होगया। जब सब लोग अपनी २ आमोद प्रमोद में मशगूल हो गये, तब उस शैतान ने अपनी जेब से एक डिबिया, जिसमें शहद था, निकाली। और शहद का एक क़तरा क्लब घर में टँगे हुये तोता के पिंजरे के बाहिरी तीली में लगा दिया। शहद के लगते ही पिजंरे की तीलियों पर चिंउटियाँ शहद खाने के लिये इकट्ठा होगईं। चिऊटियों को देखकर तोते ने उन्हें खाने के लिये अपना टोंट तीली से बाहर निकाला। टोंट तीलियों के बीच अँटक गया और भीतर न जा सका। बिल्ली जो क्लब में पली थी, तोते पर झपटी, तोते के मालिक ने जो वहीं कैरम खेल रहा था कैरम बोर्ड उठा सर मारा। बोर्ड बिल्ली पर चोट करने के बजाव, दरवाजे के शीशे पर जा पड़ा, दरवाजा और शीशा दोनों टूट गये। इधर क्लब का मालिक बिगड़ खड़ा हुआ, उधर खेल खराब होने से खिलाड़ी। बस फिर क्या था, बाद विवाद, कहा सुनी, तुक्का फजीहत की नौबत आगई। झगड़ा होते होते क्लब के घर में आग लग गई। क्लब भस्मीभूत हो गया, अगल बगल, अड़ोस पड़ोस के घर भी जल गये लोगों में गुर्री गुर्री हो गया। क्लब टूट गया किन्तु घटना के असली कारण का पता न लगा और न लग सका।

अंग्रेज अपने इसी नीति से शासन का कार्य्य बिना प्रयास

और साथ साथ इस खूबी से चलाते हैं कि मनुष्यों का खून सहारा के जंगल के साँप की तरह चूस लेता है और मनुष्य खून चुसवाने में आनन्द अनुभव करता है। और हिसाब देते वक्त बारह डेढ़े अठारह की जगह आठ बताता है और उससे लोग सन्तुष्ट हो जाते हैं।

गाँधी-अंग्रेज युद्ध नीति

दो चोर साझे में चोरी किया करते थे एक बार उन्हें चोरी में सुन्दर सोने की थाली हाथ लग गयी। सवेरा होने और चोरी का भेद खुल जाने के डर से कथित थाली का बँटवारा न हो सका। चालाक चोर थाली यह कह कर अपने घर लेता गया कि वहाँ से आधा दूसरे चोर के यहाँ भेज देगा। कौन भेजता है। कुछ अरसे के बाद दूसरा चोर मेहमानी के बहाने उस चोर के घर गया। मेज़बान चोर झट ताड़ गया कि अब थाली की खैरियत नहीं। एक तरकीब सूझ पड़ी। रात में थाली में लबालब पानी भर कर उसने छत के धन्नी के सहारे छीके में टाँग दिया। और ठीक उसी के नीचे पलंग बिछा कर निश्चिन्त सो गया। मेहमान चोर ने रात में पानी से मुँहामुँह भरे हुए थाली में राख छोड़कर पानी सुखा लिया, और थाली छींके से निकाल कर नजदीक के एक तालाब में गुठने भर पानी में गाड़ आया, कि चलते वक्त लेता जायगा। तत्पश्चात वह भी आकर खुर्राटे लेने लगा। मेजबान चोर जागा तो देखा कि बावजूद इस सतर्कता के थाली निहायत खूबी से गायब कर दी गई है। अपने बेचैनी को व्यक्त नहीं होने दिया। पता लगाया तो मालूम

हुआ कि रात पानी में हिलने से, मेहमान चोर के गुठने तक, पानी का दाग बना हुआ है। झट ताड़ गया कि थाली पास वाले तालाब में गुठने भर पानी में गड़ी है। थाली ढूंढ निकाला और खाते समय उसके लिये खाना उसी थाली में परसवाया। मेहमान चोर ने आश्चर्य में आकर पूंछा कि क्या आपके पास सोने की दो थाली हैं ? दूसरे चोर ने जवाब दिया "नहीं, यह वही थाली है जो आप रात में चुरा ले गये थे। इस दृष्टान्त का अर्थ केवल इतना ही है कि भारत सोने की थाली है। उसको अंग्रेज़ अपने अधिकार में सन्दूक के अन्दर गुलाम करके अपने स्वार्थ के लिये रखना चाहता है। इसके विरुद्ध गाँधी जी अपने अधिकार में करके थाली को विश्व-विकास का साधन बनाना चाहते हैं। यही दोनों की नीति और उद्देश्य है। पहिले अंग्रेजों की नीति पर ध्यान दीजिये तो ज्ञात होगा कि वे भारत को किस प्रकार से अपने चँगुल में सफलता पूर्वक दबाए बैठे हैं।

प्रत्येक चक्रवर्ती राजा को किसी भी देश को अपने काबू में अक्षुण्य बनाए रखने के लिए चार नीतियों से काम लेना पड़ता है। पहिली नीति है साम, दूसरी दाम, तीसरी दण्ड और चौथी नीति है भेद। अंग्रेज़ों ने भी भारत में इन्हीं चारों नीतियों का प्रयोग किया है। जिसकी काट सिर्फ गाँधी जी ही ने किया।

इस उद्देश्य पूर्ति के लिए दोनों एक दूसरे के विरुद्ध काट छांट, दांव पेंच, चाल नीति से काम ले रहे हैं। मज़ा यह कि एक, दूसरे का मित्र बना हुआ है। किन्तु साथ ही साथ एक दूसरे को अन्दर ही अन्दर खूब समझते हैं।

सामनीति

सामनीति का अर्थ है देश में शान्ति रखना और प्रजा को सुख देना ताकि प्रजा की भावना राजा की ओर से अच्छी रहे और राजा का छिद्रान्वेषण न करे। इस नीति से राज्य और शासन जम ही नहीं जाता बल्कि सुदृढ़ हो जाता है और प्रजा राज भक्त हो जाती है। अंग्रेजों ने भारत में इस नीति का प्रयोग इस प्रकार किया।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री लिखते हैं कि जब अंग्रेज आए तो "वह ऐसा समय था कि अविचारी लोग बढ़ गए थे। सामाजिकता भूल गए थे। दिल्ली के सम्राट अपने अत्याचार का फल भोगने लगे थे और उन पर और उनकी प्रजा पर कठोर दक्षिणियों की बराबर मार पड़ रही थी। राजपूताना और मेवाड़ जो बराबर मुगल शक्ति का सामना करते करते चूर हो गया था। मरहठों के मार से व्याकुल हो उठा था। वीरता बूढ़ी हो चुकी थी, ओज मर रहा था, सहन शक्ति थक चुकी थी। सिसोदिया कहाँ तक सहते कोई सहायक नहीं था पड़ोसियों की यह दशा थी कि जहर खाए बैठे थे। सबके मन में गुमान था कि हमारी तो नाक कट गई। उदयपुर सूखा कैसे बचे। उदयपुर की सफेद पगड़ी पर किसी भी स्वार्थी के हाथ का काला छींटा पड़ता कि लोगों के कलेजे ठण्डे होते थे। बदला मिला, दोष किसे दें। निरन्तर अपमान और ठोकर खाकर सहने को और सहन करके सन्तुष्ट रहने की आदत पड़ ही जाती है। पूरब के प्रान्तों में

सूबेदार लोग उच्छृङ्खल नवाब बन बैठे थे। वे शराब और ऐयाशी में डूबे रहते थे। प्रजारञ्जन एक ओर रहा, प्रजा पालन भी उनसे ठीक २ नहीं होता था। बल और स्वेच्छाचारिता थी। पर खैर इतनी थी कि टुकड़े टुकड़े थी नहीं तो भारत का वहीं अन्त था। दक्षिण के मरहठे अपनी गाँठी भरने की धुन में मनुष्यत्व को तिलाञ्जलि दे रहे थे। वे कुपित बादशाह पर थे, और दण्ड देते थे प्रजा को। दण्ड भी क्या उत्पीड़न करते थे। पंजाब की दशा और भी बुरी थी।"

इतना ही नहीं भारत की तात्कालिक सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक और आर्थिक स्थिति उक्त कथन से भी अधिक अधोगति को प्राप्त हो चुकी थी जब कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने यहाँ पर अपना बनिया राज्य स्थापित किया

जिस समय देश में ईस्ट इण्डिया कम्पनी (वणिक राज्य) का राज्य था। उस समय सब काम व्यापारी नीति पर होता था। इसी बात की ओर सबसे अधिक ध्यान दिया जाता था कि कम्पनी के हिस्सेदारों को अधिक से अधिक मुनाफा कैसे मिले। कम्पनी के जो डाइरेक्टर होते थे वे आजकल के सिक्रेट्री आफ स्टेट के जगह पर होते थे। आप यह कह सकते हैं कि राज्य चलाने के लिये एक प्रकार का ठेका दिया हुआ था। पेशवाओं के समय में मामलतदारी ठेके पर दी जाती थी, कम्पनी के समय के सरकारी कानूनों के अनुसार भारत का शासन कम्पनी का व्यापार था। उससे जितना लाभ उठाया जा सके उठाया जाता था। कम्पनी के डाइरेक्टर विलायत में रहते थे। उनका ध्यान

सदा इस बात की ओर रहता था कि हिस्सेदारों को कितना नफा मिलना चाहिए। वहां से गवरनर जनरल के पास पत्र आते थे कि "इस साल में इतना मुनाफा मिलना चाहिए। इतनी आमदनी करके मेरे पास भेजो।" शासन की ऐसी व्यवस्था थी कि ग्वाले और उसके गऊ का हिसाब था। गौ दूध नहीं देती वह कहता है कि पानी मिला कर पूरा करो। वही हालत भारत का था। आगे चल कर वाद विवाद से निश्चित हुआ कि ऐसी शासन पद्धति ठीक नहीं। १८५७ ई० के गदर के बाद स्वतंत्र प्रिय अंग्रेजी जाति के पार्लियामेंट ने राज्य अपने हाथ में लिया और इस व्यापारिक नीति का घोर विरोध किया।

गदर आजादी की लड़ाई नहीं

सन् १८५७ के गदर के बाबत एक भ्रम यह प्रचलित कर दिया गया है कि यह भारत को स्वतंत्र करने का एक सशस्त्र सार्वजनिक आन्दोलन था। यह बात सत्य नहीं है। सत्य बात यह है कि गदर भारत के सामन्तवाद की आखिरी और जीवन छोड़ कोशिश थी। आखिरी मुगल राजा बहादुरशाह और मरहठे जो उस वक्त राजा थे, भारत में अपनी सत्ता ज्यों का त्यों बनाये रखने के लिए अंग्रेजों को निकालना चाहते थे, मरहठे और नवाबों की हरकतों से भारतीय जनता खूब परिचित थी। उसने कुछ भी साथ नहीं दिया। हाँ कुछ धार्मिक आदमियों ने जो हमेशा और हर समय इस काम के लिये मिल सकते हैं, मदद दिया और जनता में इसका धार्मिक रूप देने का प्रयत्न किया किन्तु निष्फल रहे। अधिकाँश जनता ने अंग्रेजों का ही

साथ दिया। और भारतीय राज्य सीधे सीधे ब्रिटिश सरकार के अधिकार में कर लिया गया।। कम्पनी खतम हो गई। महारानी विक्टोरिया भारतबर्ष की साम्राज्ञी बनाई गई। सारा हिन्दोस्तान पूर्णरूपेण अंग्रेजी साम्राज्यवाद की राजनैतिक सत्ता के नीचे आ गया।

इसके बाद भारत का शासन तीन सिद्धान्तों पर चलाया गया। (१) प्रजा को सुख और शान्ति (२) शासन की नींव को दृढ़ बनाने (३) अंग्रेजी शिक्षा द्वारा भारतीय संस्कृति का लोप।

प्रजा को सुख और शान्ति

इस शासन काल में भारत की बड़ी उन्नति हुई। शान्ति का दौर दौरा हुआ। अब लुटेरों और घातक डाकुओं का भय नहीं रहा। अब एक निस्सहाय अबला स्त्री निर्जन बना में सोना हाथ में उछालती हुई जा सकती है। कोई भय नहीं। पहिले भारत में विधर्मियों विजातियों के हमले हुआ करते थे। जिसके कारण प्रजा दुखी थी। विदेशी आक्रमणकारी धन, द्रव्य लूट कर ले जाते थे और लाखों यमलोक पहुंचा दिये जाते थे। सारे देश में हिमांचल पर्वत से लंका तक एकही राज्य है देशी रियासतों में भी विदेशियों के आक्रमण का भय नहीं क्योंकि सरकार उनकी रक्षा के लिये एक सेना सर्वदा तैयार रखती है। आजकल हिन्द के सब सूबे एक ही सरकार की छत्रछाया में कार्य कर रहे हैं। वही उनका राज्य प्रबन्ध करती है और उनकी रक्षा करती है। रेल, तार द्वारा सरकार को सारे देश के समाचार मिलते रहते

हैं। यदि कहीं झगड़ा, फसाद हो गया तो रेल द्वारा सेना भेजकर तुरन्त शान्ति स्थापित कर दिया जाता है। सरकार के पास थल सेना के अतिरिक्त जल सेना जहाजी बेड़ा भी है, जो व्यापार की रक्षा करती है। हवाई जहाज भी हैं जिनसे लड़ाई के समय काम लिया जाता है।

समानता

*आजकल देश एक कानून है। धनी, दरिद्री, शिक्षित, अनपढ़, हिन्दू यवन, ईसाई, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, साधू, सन्यासी, राजा, प्रजा सबके लिये एक कानून है। कानून के सामने सब लोग बराबर हैं, चाहे वह किसी पद अथवा किसी वर्ण या जाति के हों। यदि कोई ऊँची जाति, अमीर अथवा सरकारी नौकर कोई भी अपराध करे तो वैसा ही दण्ड मिलता है जैसा छोटी जाति अथवा दूसरे मुजरिम को।

रेल तार

रेलों के कारण सफर में बड़ी सुविधा हो गई। बड़ी बड़ी सड़कें बनाई गईं, नदियों में पुल बाँधे गये। अकाल के समय एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में अनाज पहुँचाया जाता है। हर तरफ भूखे मनुष्यों के प्राण बच जाते हैं। दूसरे देशों से जो माल आता है उसे रेल के ही द्वारा समग्र देश में तुरन्त पहुँचा दिया जाता है। यदि ऐसा न हो तो हमें बहुत सी जरूरी चीजों के लिये असुविधा होती और समय पर न मिलती। डाक का प्रबन्ध पहिले कभी ऐसा नहीं था। अब डाक का महकमा खोल दिया गया है। सस्ते टिकट चलाए गये हैं। डाकखानों

में सेविंग बैंक खोल दिए गये हैं, जिनमें कम हैसियत वाले लोग अपनी आमदनी का शेष भाग जमाकर देते। और जरूरत पड़ने पर वापिस लेते हैं। इस रुपये पर सरकार ब्याज भी देती है। यह राज्य सुख का नमूना है। मनीआर्डर से रुपया भेजने का सुभोता हो गया है, जो लोग परदेश में नौकर हैं वे अपने घर वालों को मनीआर्डर द्वारा रुपया भेज देते हैं। तार द्वारा हजारों मील का खबर मिनटों में मिल जाती है।

सामाजिक उन्नति

भारतवर्ष में अनेक जातियों के मनुष्य रहते हैं जिनके धर्म रीति रिवाज एक दूसरे से भिन्न हैं। धर्म के विषय में अब इस राज्य में सबको आजादी है। यदि एक मनुष्य एक धर्म को छोड़ कर अन्य धर्म ग्रहण करना चाहे तो कर सकता है। उसे न कोई रोक सकता है न सता सकता है। ऐसा करने पर सरकार अन्यायी को दण्ड देती है। अंग्रेजी राज्य के कारण लोगों की सामाजिक दशा में आश्चर्यजनक परिवर्त्तन हुआ है। पहिले बहुत से लोग अपने अबोध और बेगुनाह लड़कियों को पैदा होते ही मार डालते थे। इस अमानुषिक रीति का प्रचार काठियावाड़, राजपूताना आदि में अधिक था, सरकार ने इसे बन्द कर दिया। पहिले लोग देवी देवताओं को सन्तुष्ट करने के लिये कहीं २ मनुष्य यहां तक कि ब्राह्मणों का बलि देते थे, परन्तु सरकार ने इस राक्षसी प्रथा को भी बन्द कर दिया। पहिले यह रीति थी कि जब कोई आदमी मर जाता था तो उसकी स्त्री भी उसी चिता में बिठा कर जबरदस्ती जला दी

जाती थी जिसको सती प्रथा कहते हैं। इस प्रथा को भी सरकार ने बड़े २ धार्मिक पुरुषों से सलाह लेकर बन्द कर दिया। गुलामी की प्रथा भी एक दम बन्द कर दिया गया। छोटी जातियाँ अछूत जातियों को धार्मिक तथा सामाजिक और राजनैतिक स्वतंत्रता मिल गई है जो पहिले कभी नहीं थी। उनके शिक्षा के लिये मदरसे खोले गये हैं। जाति पाँति का भेद भी अब कम हो गया है। छोटी जाति (नाई चमार, मेहतर, डोम) के मेम्बर कौंसिलों में बड़े २ हाकिमों के बराबर बैठते और सार्वजनिक विषयों पर अपनी राय प्रगट करते हैं।

एकीकरण

भारत भिन्न २ जातियों का एक बड़ा समूह है जो छोटी २ जातियों और सम्प्रदायों में बंटो हुई है। अंग्रेजी सरकार एक महान सरकार है। भारतीय जातियों की सब छोटी २ जातियाँ एक हो सकें इसलिये अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार हुआ। भारत को विद्यादान की महान कृपा है। इस अंग्रेजी शिक्षा ने भारत के बहुत से भिन्न २ समूहों में एकता उत्पन्न की है। यदि अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार हिन्द में न होता तो वर्त्तमान जाग्रति का इस प्रबल वेग से होना नितनात असंभव था। क्योंकि भारत में कोई एक ऐसी भाषा नहीं है जिसको सब समझ सकें या सब जगह प्रचलित हो। बम्बई के सेठ, बगाल के लाबू, मद्रास के ब्राह्मण, पूना के मरहठे, उत्तरी भारत के पठान, राजपूत, देहात के किसान, दक्षिणी भारत के तामिल और तैलंग आज इस ही अंग्रेजी भाषा द्वारा

एक स्थान पर इकट्ठे होकर (नेशनल कॉँग्रेस) आपस में सर्व अधिकारों और अभिलाषाओं को भली भाँति प्रगट करने में समर्थ हुये हैं।

राष्ट्रीयता

अंग्रेज़ी शिक्षा का एक महत्व पूर्ण फल यह हुआ कि देश में एकता का भाव उत्पन्न हो गया है। पहिले बंगाली, मद्रासी, पंजाबी, राजपूत, सिक्ख आदि अपने को एक दूसरे से अलग, समझते थे। वे आपस में न तो बातचीत कर सकते थे और न एक दूसरे के साथ सहानुभूति प्रगट कर सकते थे। अंग्रेज़ी शिक्षा ने यह भिन्नता दूर कर दी। अब भिन्न २ प्रान्त के लोग दूसरे प्रान्त के लोगों से अंग्रेज़ी भाषा द्वारा आपस में बातचीत कर सकते हैं। वे अबसमझने लगे हैं कि हम सब एक देश के निवासी हैं। मिलजुल कर काम करने में ही हमारा तथा हमारे देश का कल्याण है। राष्ट्रीयता के भाव फैलाने में रेलों ने भी अद्भुत सहायता दी है। पहिले एक प्रान्त के लोग दूसरे प्रान्त वालों से मिलने भी न पाते थे और न एक दूसरे के बिषय में कुछ जानते थे। अब सारे देश में निर्भीक, विना किसी भेद भाव के रेल में भ्रमण करते हैं। देश में एक प्रकार शक्ति शाली शासन होने के कारण लोगों की विचार धारा एक हो गई है।

अंग्रेजी राज्य के इस प्रकार के सामनीति से भारत का बच्चा बच्चा सुख और शान्ति का अफ़ीम खा बैठा। प्रत्येक ने इस राज्य को राम राज्य समझा। और को जाने दीजिए, अंग्रेजों के कठिन २ विरोधियों ने भी उनकी प्रशंसा किया।

तिलक जी, लाला लाजपति राय के शब्दों में "उन्नीसवीं शताब्दी के सबसे बड़े भारतीय विद्वान थे, उन्होंने ही आजादी के भाव जनता में उत्पन्न किए। अपनी उज्ज्वल देश भक्ति को धर्म का स्वरूप उन्होंने ही दिया। यदि भारत में कोई सच्चा स्वराज्य-वादी था, तो वह एक मात्र तिलक ही थे। उनकी दूरदर्शिता अद्भुत थी तिलक जी अंग्रेजों के इस काल से प्रभावित हो कर कहते हैं। (२७ अगस्त सन् १९१४ ई०) "लोग जो यह कहते हैं कि अंग्रेजी राज्य से लाभ हो रहा है। उनका ऐसा कहना ठीक है। अंगरेजी राज्य की सुधरी हुई प्रणाली से भारत के भिन्न २ जातियों का एकीकरण होकर उसमें समय पाकर एक संयुक्त भारतीय राष्ट्र निर्माण होने की सम्भावना है। स्वतंत्राप्रिय ब्रिटिश जाति के सिवा यदि यहाँ किसी दूसरी जाति का शासन होता तो राष्ट्रीय उद्देश्य ध्यान में रख कर उसे स्पष्ट करने में हमारी वह मदद देता या नहीं इसमें हमें शंका है। हिन्दोस्तान के सम्बन्ध में हार्दिक प्रेम रखने वाले पुरुषों को ये और इसी तरह के दूसरे लाभ पूर्णतः अवगत हैं।" बारहवीं कांग्रेस के प्रेसीडेन्ट मुहम्मद रहमतुल्लाह सयानी ने कांग्रेस के सेटफार्म से कहा, "आज समस्त भूमण्डल में जहाँ तक सूर्य्य है, अंग्रेजी राष्ट्र से बढ़ कर ईमानदार और मजबूत कोई राष्ट्र नहीं है"। सरदार दयाल सिंह मजीठिया चेयरमैन काँग्रेस १८९३ ने कहा, हम भारतीय सुख से एक ऐसे शासन के मातहती में रहते हैं जिसका उद्देश्य आजादी और जिसका प्रधान स्तम्भ सहनशीलता है। अब गाँधी जी की सुनिए।

माह अप्रेल सन् १९१५ ई० में मद्रास लाडिनर के वार्षिकोत्सव पर व्याख्यान देते हुए महात्मा जी ने कहा था "भारतवर्ष में मेरी तीन मास की यात्रा में, और दक्षिण अफ्रीका में भी मुझसे प्रश्न किया गया है कि आधुनिक सभ्यता को दृढ़विरोधी और प्रणबद्ध देशभक्ति हो कर भी मैं क्यों कर उस ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति भक्ति रखता हूँ, जिसका भारतवर्ष एक बड़ा भाग है। और मेरे लिये यह समझना संभव है कि भारतवर्ष और इंगलैंड एक दूसरे को लाभ पहुंचाने के लिये किस प्रकार परस्पर मिल जुल कर काम कर सकते हैं। आज इस समय इस विशाल और महत्वपूर्ण सभा में मुझे फिर से यह बात बतलाने में सबसे अधिक प्रसन्नता होती है कि मैं ब्रिटिश साम्राज्य का खैरख्वाह और भक्त हूँ। मुझे अनुभव हुआ है कि ब्रिटिश साम्राज्य के कुछ निश्चित आदर्श हैं जिनके कारण मैं उसका आशिक हूँ। इन आदर्शों में एक आदर्श यह है कि ब्रिटिश साम्राज्य के प्रत्येक व्यक्ति या प्रजा को अपनी शक्तियों का यथाशक्ति उपयोग करने के लिए पूरी आज़ादी हासिल है। और जिस काम को वह अपने आत्मा के अनुकूल समझता हो वह उसे पूर्ण स्वतंत्रता के साथ कर सकता है। लेकिन ये सब खूबियाँ किसी अन्य गवर्नमेंट में नहीं पाई जातीं। आप लोग कदाचित् जानते हैं कि मैं किसी भी गवर्नमेंट को पसन्द नहीं करता और मैंने कई बार कहा है कि सबसे अच्छी गवर्नमेंट वही है जिसे शासन का सबसे कम काम करना पड़ता हो या सबसे कम हुकूमत करनी पड़ती हो, और मैंने देखा और

अनुभव किया है कि ब्रिटिश साम्राज्य में ही मेरे लिए सबसे कम शासित होना संभव है । और उन्हीं उपरोक्त कारणों से मैं अंगरेज़ी राज्य का भक्त हूँ ।"

पहिली मई सन् १९१६ ई० को बेलगाँव वाले व्याख्यान में तिलक जी ने कहा था "यह बात निर्बिवाद है कि हमें अपना कल्याण अँग्रेजों की अधीनता में, ब्रिटिश जाति के निरीक्षण में, इनकी सहायता से सहानुभूति और चिन्ता से, तथा उनके उच्च-भावनाओं का लाभ उठा कर ही करना होगा, मुझे इस बिषय में कुछ और कहना नही है (करतल ध्वनि) हमें जो कुछ करना है वह किसी न किसी की मदद से, क्योंकि आज हमारी स्थिति पँगुओं की सी हो रही है, करना होगा । इन्हीं के आश्रय में रह कर हमें अपने कल्याण का साधन करना चाहिये । इस बात पर किसी को बिवाद नहीं" ।

दादाभाई नौरोजी, काँग्रेस के जन्मदाता हैं, सब से पहिले उन्होंने ही भारत में स्वराज्य शब्द का प्रचार किया है भारत में पहिले व्यक्ति हुये हैं जो अँग्रेजी निर्वाचन क्षेत्र से चुन कर पार्लियामेंट के मेम्बर चुने गये थे । पार्लियामेंट के मेम्बर चुने जाने पर अपनी प्रथम पार्लियामेंटरी व्याख्यान में हाउस आफ कामन्स में अंग्रेज़ी राज्य के सम्बन्ध में आपने कहा था ।

"ब्रिटिश साम्राज्य विश्व के लिये बरकत है, और संसार की भलाई के लिये यह बहुत ही ज़रूरी बात है कि इस साम्राज्य का इत्तिहाद सुरक्षित रक्खा जाय । अतएव साम्राज्य के प्रत्येक सच्चे पुत्र का यह परम कर्त्तव्य है कि वह साम्राज्य के इत्तिहाद

को सुरक्षित रखने में प्रयत्न शील रहे, और ऐसे आन्दोलनों से कि जिससे साम्राज्य को धक्का पहुँचने की संभावना हो, दूर रहे। बिशेषकर हिन्दोस्तान और इंगलैंड का सम्बन्ध बहुत ही आवश्यक है। क्योंकि अगर भारत साम्राज्य से निकल जाय तो ब्रिटिश साम्राज्य का सूर्य्य अस्त हो जायगा, और भारत ब्रिटेन से स्वयं अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लेगा तो वह अन्धकार के गढ़े में गिर जायगा, और सबसे बुरी बात यह होगी कि भारतवर्ष में फिर खून व कुश्त जारी हो जायगा और नाश को प्राप्त होगा"।

उसी व्याखान में 'अंग्रेजो ने भारत में क्या किया' के विषय में फिर कहते हैं।

"अंग्रेजों के आने के पूर्व भारत में बाल हत्या होते थे, किन्तु अंग्रेजी आदर्श, अंग्रेजी सभ्यता और अंग्रेजी मनुष्यता के कारण इस प्रथा का अन्त हो गया। और सती की प्रथा भी इन्हीं के कारण बन्द हो गई। इन कुत्सित प्रथाओं का अंत कर देने के कारण अंग्रेज लोगों ने उन लाखों आदमियों को आशीर्वाद प्राप्त किया है, जो कि मृत्यु के मुख में जाने से बच गये हैं। इनके अतिरिक्त डाकुओं के जत्थे होते थे, जिनका पेशा ही लोगों को लूटना होता था, इनका भी अन्त कर दिया। और इसलिये भारतवर्ष अंग्रेजो का कृतज्ञ है। अंग्रेजों के प्रति भारतवर्ष की सबसे अधिक कृतज्ञता इस बात में है कि उसको अंगरेजी विद्या प्रदान हुई है, जिसके कारण भारतवासियों ने अपने को पहिचाना। अंगरेजों के और आदर्श भी हैं जिससे भारतवर्ष को लाभ

पहुँचा है, जैसे बोलने की स्वतंत्रता और प्रेस की स्वतंत्रता आदि ”।

निशस्त्रीकरण तथा पंगु सेना

भारतवासियों को सुख और शान्ति का अफीम जब खूब चढ़ गया और देश के बड़े २ विद्वान सुधारक भी जब पीनक लेने लगे तो अंग्रेजों ने भारत को सदा के लिए निपनिया बनाने के उद्देश्य से गदर के बाद ही भारत को एक कोने से दूसरे कोने तक निःशस्त्र कर दिया। इसके बाद सेना को पंगु बनाने के लिए अथवा समय पड़ने पर एक सेना दूसरी सेना से लड़ाई जाने के लिए, सेना में जातीयता और साम्प्रदायिकता का विष दिया गया। सेना का संगठन और शासन की बागडोर सीधे सीधे अंग्रेजों के हाथ में रक्खा। उन्होंने हिन्दोस्तानी पल्टनों को अविश्वास की दृष्टि से देखना शुरू किया। पल्टनों में पारस्परिक द्वेष, ईर्षा और मनोमालिन्य बढ़ाने के लिए उनका साम्प्रदायिक नाम करण किया। यथा पठान पलटन, सिक्ख पलटन, राजपूत पलटन और गोरखा तथा ब्राह्मण पलटन आदि। इन्हें सिर्फ साधारण अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग सिखाया गया, वेतन और कम कर दिया गया। इनको प्रत्येक उपायों से गोरी पलटनों के सामने ज़लील करने की कोशिश की गई। इसके बाद के सैनिक-बजट को देखने से पता लगता है कि शासकों ने फौज के मामले में हिन्दोस्तानियों के साथ कितना पक्षपात पूर्ण व्यवहार किया। भारतीयों को निःशस्त्र करने और पलटनों को लुंज और पंगु बनाने में उसका उद्देश्य यह था कि गदर की भाँति हिन्दोस्तानी

फौज कभी बगावत न कर सके और अगर जनता करे तो गोरी पलटनों के नेतृत्व में यह पलटनें दमन करने में आना कानी न कर सकें।

जनता को भी भली भांति कसने की तरकीब की गई। गदर करने वाले खान्दानों का अस्तित्व ही मिटा दिया गया, उनके बड़े बड़े कोट और कोठियों को धराशायी कराके उस पर हल चलवा दिया गया। सरकार की मदद करने वालों को मुंह मांगा इनाम मिला। आज के बहुत से, जिमीन्दार, रियासतदार इसी इनाम के चिन्ह स्वरूप हैं। आर्म्स एक्ट के अनुसार हथियार रखना गैर कानूनी हो गया। यहाँ की आत्मरक्षा के लिए भी हथियार रखना जुर्म करार दिया गया। प्रेस आदि पर भी कड़ा अनुशासन रखा गया। इधर गिराया, उधर उठाया, एक छीना दूसरे को दिया, इस नीति से अंग्रेजी राज्य में साम नीति खूब सफल रही।—

अंग्रेजी शिक्षा का नशा

रोम जातीय वाग्मि प्रधान सिसिरो जब सिलीसिया का शासन कार्य्य समाप्त करके रोम लौटा तो लोगों ने कहा कि आपने वहाँ कुछ नहीं किया तो उसने उत्तर दिया कि "मैंने सिलिसिया में जो कुछ किया, है उससे उस प्रदेश के लोग रोम को चिरकाल के लिए गुरु मानेंगे। मैंने सिलिसिया में रोमीय भाषा लैटिन की शिक्षा के लिए १४० स्कूल स्थापित करा दिये हैं। जिसका फल यह होगा कि उन स्कूलों से निकले हुए शिक्षित पुरुष रोमीय मंत्र में ही दीक्षित होकर रोम को ही अपना आदर्श मानेंगे"।

सिसिरो के इस नीति के अनुसार अंगरेजी राज्य को सुदृढ़ बनाने और हिन्दू मुसलिम सब को बाइबिल पढ़ाने की तरकीब सर्व प्रथम लार्ड मैकाले ने किया। उन्होंने १८,५ ई० में पब्लिक इन्सट्रक्शन कमेटी के सभापति की हैसियत से कहा था।

"अंग्रेजी शिक्षा द्वारा ऐसा एक मनुष्य दल तैयार होगा जो रक्त और रंग में तो हिन्दोस्तानी होगा, लेकिन आचार विचार, खान पान, रहन सहन में बिल्कुल ग़ैर हिन्दोस्तानी होगा।" भारतीय शिक्षा के प्रश्न को हल करते समय लार्ड मेकाले ने इसी उद्देश्य को सामने रखा था। और अपने जीवन काल ही में अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त कर लिया। आज भारत में ऐसे दुभाषियों की श्रेणी बन चुकी है जिसमें हिन्दू मुसलमान दोनों ही हैं। और जो यूरोपियनों, भारतीयों के बीच भाव प्रकाशन का काम दे रही है। इस प्रकार की श्रेणी पैदा करने में बर्तमान यूनिवर्सिटियों को काफी सफलता मिली है।

सन् १८३६ ई० में मेकाले ने अपने पिता को पत्र में लिखा था कि, "इस शिक्षा का प्रभाव हिन्दुओं पर आश्चर्यजनक पड़ा है। जिस हिन्दू को यह शिक्षा मिली है वह हृदय से अपने धर्म का उपासक नहीं रहा। कई नीति की दृष्टि से हिन्दू बने रहते हैं, और कई सीधे ईसाई धर्म को स्वीकार कर लेते हैं। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि मेरे निर्दिष्ट मार्गानुसार शिक्षा चलती रही तो तीस साल के अन्दर बंगाल में पढ़े लिखे लोगों में कोई भी मूर्ति पूजक न रहेगा"।

लाला हरदयाल ने अपने 'थाटस आफ ऐजुकेशन' नामक

पुस्तक में सर चार्ल्स ट्रैविलियन का निम्न उद्धरण दिया है— "हमारी भाँति शिक्षा प्राप्त कर हमारी ही प्रवृत्तियों को जागृत कर और हमारे जैसे कामों में लगे रहकर हिन्दू नहीं रहते, पर भीतर से अंग्रेज ही बन जाते हैं। हम अङ्गरेज इसीलिये तो हैं कि हम अँग्रेजों में रहते हैं। उनसे बातचीत करते हैं और अँग्रेजी विचारों तथा चाल चलन के अनुसार अपने जीवन को बिताते हैं। हिन्दू भी ऐसा ही करने लगे हैं। वे अच्छे से अच्छे अँग्रेजों के साथ उनकी लिखित पुस्तकों आदि द्वारा प्रतिदिन परिचय पाते हैं और इस प्रकार 'अपनेपन' को छोड़ कर हमारे अधिकाधिक निकट आते जाते हैं" अँग्रेजी साहित्य के द्वारा ज्यों २ भारतीयों का अँग्रेजों से परिचय बढ़ता जाता है त्यों २ वे अँग्रेजो को बिदेशी समझना छोड़कर उनके साथ सहयोग करने को उत्सुक होते जाते हैं। उनकी ऊँची से ऊँची अभिलाषा सब प्रकार से अंग्रेजों की नकल करने की रह जाती है। लाहौर क्रिश्चियन कालेज की प्रबन्धक कमेटी के सामने एक बार उसके प्रिंसपल ने कहा था कि "यह ठीक है कि मैं इन छः बरसों में एक भी हिन्दू को जाहिरी तौर से ईसाई न बना सका लेकिन कमेटी को यह भी याद रहे कि मेरे कालेज में जिसने शिक्षा पाई है वह यदि ईसाई नहीं तो हिन्दू भी नहीं रहा।"

भारतीय पाश्चात्य शिक्षा दीक्षा में दीक्षित लोग पूरे यूरोपीय सभ्यता के गुलाम बन चुके हैं। न तो इनके सर पर चोटी रहती है न गले में जनेऊ ही। न इनको देव दर्शन, सन्ध्या, पंचयज्ञ, सोलह संस्कार, चन्दन धारण, अतिथिसत्कार, पर्व, व्रत तीर्थ

भगवत्पूजन, आदि पर श्रद्धा है और न विश्वास ही। क्या हिन्दू क्या मुसलमान आज सारे भारतवर्ष के लोग जो जरा भी अंग्रेजी जानते हैं अपनी भाषा में बोलना, पढ़ना या पत्र लिखना बेइज्जती समझते हैं। उनके चाल चलन आहार व्यवहार भेष सभी अंग्रेजी सभ्यता के अनुसार ही मिलेंगे, 'कोटश्च बूट च पतलून च मुखे च धूम्रः सिगरेट कस्य। घड़ी छड़ी गन्ध लवेंडरं च जानन्ति सर्वेकुल धर्म मेवम्।'

अँग्रेजों की दाम नीति

दाम नीति का अर्थ है एक ऐसा जाल बिछाना, जिससे प्रजा यह समझे कि यह कार्य्य जनता के लाभ के लिये हो रहा है किन्तु उसका आन्तरिक उद्देश्य यह हो कि जनता के ऊँचे ऊचे मस्तिष्क जिनको काबू में न रखने से शासन में गड़बड़ी होने का अंदेशा हो स्वतंत्र विचार न कर सकें। अंग्रेजों ने भारत में काँग्रेस स्थापित करके ऐसा ही जाल बिछाया। इस संस्था के द्वारा अंगरेजी जाति ने भारत में १९१७ ई० तक बड़े चैन से शासन किया।

भारतीय षड़यन्त्रकारियों के आन्दोलन का आन्तरिक उद्देश्य विधर्मियों को नष्ट करना तथा हिन्दू धर्म स्थापित करना था, किन्तु आगे चलकर इस आन्दोलन का रूप राजनैतिक हो गया और अङ्गरेजों को भारत से बाहर कर देना ही एक मात्र उद्देश्य रह गया। इस आन्दोलन का इतिहास काँग्रेस स्थापना से भी पुराना है या यों कहिये कि इस दल के आन्दोलन को दबाने के लिए ही कांगरेस की संथापना की गई थी। क्योंकि सन् १८५७ के अंग्रेज विरोधी लोग अब भी मौजूद थे।

वरीन्द्र ने उनमें से कुछ लोगों को साथ लेकर मध्यभारत के किसी तीर्थ स्थान में एक आश्रम बाँधने का संकल्प किया। इस उपरोक्त कथन से सिद्ध होता है कि सत्तावन वाले गदर की चिनगारियाँ भारत में यत्र-तत्र पड़ी हुई थीं, जो ऐसे कामों का पथ प्रदर्शन कर सकती थीं। इन्हीं चिनगारियों तथा इनसे प्रज्वलित होने वाली अग्नि को दबाने के लिये ही कॉग्रेस संस्थापित हुई।

काँग्रेस संस्थापन का उद्देश्य

कॉगरेस संस्थापना के पूर्व अङ्गरेजों के विरुद्ध षड़यंत्र के बहुत से चिन्ह पाये गये थे। अतएव क्रान्तिकारियों को मिटाने के लिये ही भारतीय काँगरेस खोला गया था। कांगरेस संस्थापन का कार्य लार्ड डफरिन के मस्तिष्क की उपज थी। लाला लाजपत राय अपने पुस्तक 'तरुणभारत' में लिखते हैं "जिस समय लार्ड रिपन ने भारत से प्रस्थान किया था, उस समय देश शोका-कुल था। अब भी भारतवासियों और अंगरेजों में खींचातानी चली आती थी, द्वेषाग्नि जल रही थी। जब लार्ड डफरिन वायसराय होकर आये तो उनका उद्देश्य शासित जाति के क्रोध को शान्त करना तथा लार्ड रिपन के कार्य्य को धीरे धीरे नष्ट करना था। उन्होंने सोचा कि तुरन्त वह काम करना कदाचित् भयानक हो, क्योंकि राजनैतिक स्वाधीनता तथा समानता की पुकार मच चुकी थी। लार्ड रिपन की सुनीति से उत्पन्न अवस्था में जो राजनैतिक आन्दोलन खड़ा हुआ था, और जो भयंकर रूप से बढ़ता जा रहा था, उस आन्दोलन का

जितना ही अधिक विरोध किया जाता वह उतना ही बढ़ता तथा फैलता जाता था। अतः लार्ड डफरिन ने निश्चय किया कि कोई ऐसा उपाय निकालना चाहिये जिससे यह आन्दोलन निरर्थक सिद्ध हो जाय, और इससे किसी प्रकार की हानि न हो सके। उन्होंने स्वयं आन्दोलनकारियों से ही यह काम निकालना चाहा, और ऐसे ढंग से उन्हें अपने हाथ की कठपुतली बना लिया कि उन्हें लार्ड डफरिन की इस कूटनीति का पता भी न चल सका। अर्थात् उक्त लार्ड ने आन्दोलनकारियों को ऐसे मार्ग में लगा दिया, जिससे वे अनजान से स्वयं अपने ही पक्ष की हानि करने लग गये।" इस बात की सत्यता सिद्ध करने के लिये एक अन्य उदाहरण देखिये जो इस प्रकार है।

ह्यूम साहब सर आकलेंडे काल्विन (तात्कालिक यू० पी० के गवर्नर को पत्र का उत्तर देते हुये लिखा था कि "ब्रिटिश सम्बन्ध द्वारा उत्पन्न दिन पर दिन बढ़ने वाली प्रतिघातक शक्तियों को व्यर्थ करके निकाल देने के लिये एक मार्ग की आवश्यकता है, और इसके लिये काँग्रेस के आन्दोलन से बढ़कर और कोई अन्य उपाय नहीं हैं।" उक्त प्रमाणों तथा और पहिले दिये हुए प्रमाणों से सिद्ध है कि काँग्रेस की संस्थापना ऐसे आन्दोलनों को व्यर्थ कर देने के लिये किया गया था।

मि० ह्यूम साहब के जीवनी लेखक (सर विलियम वेडरबर्न) ने उनके कागज़ों में पाई हुई एक याददाश्त के आधार पर इस बात का प्रमाण ढूढ़ निकाला है जिससे सिद्ध होता है कि उन्हें लार्ड रिपन से भारत जाने के सवा महीने पूर्व ही यह बिश्वास

हो गया था कि भारत में अंगरेज़ों के विरुद्ध एक अत्यन्त घोर उपद्रव खड़ा होना चाहता है।

सर विलियम वेडरवर्न अपनी जानकारी से आगे लिखते हैं "भारत में व्यापक संकट का पूर्व रूप बम्बई प्रान्त में मेरे देखने में आया था। उस समय बम्बई के कृषकों ने वह उपद्रव आरम्भ किया था, जिसे आज कल 'दक्षिण का विद्रोह' कहते हैं। इनका आरम्भ महाजनों पर आक्रमण और लूट मार आदि से हुआ था। और ये डाकू दल मिलकर इतने बली हो गये थे कि पुलिस के लिये इनका सामना करना कठिन हो गया था और पूने की समस्त सेना को उससे लोहा लेना पड़ा था। भारत में शान्ति स्थापना तथा अंगरेजी राज्य सुदृढ़ करने के लिये जितने भी साधनों का उपयोग अंगरेजों ने किया उनमें काँग्रेस सर्व प्रथम सफल साधन सिद्ध हुआ। लाला लाजपत राय जी काँगरेस के कितने बड़े नेता थे, शायद आज यह बताने की आवश्यकता नहीं। वह कांग्रेस स्थापनके विषय में अपने 'यंग इंडिया नामक पुस्तक में लिखते हैं।

"यह एक निर्विवाद ऐतिहासिक सत्य है कि कांग्रेस का विचार लार्ड डफरिन के मस्तिष्क से उत्पन्न हुआ था। उन्होंने भारत सरकार के भूतपूर्व मंत्री ह्यूम से काँग्रेस की सृष्टि करने के लिये कहा था, और ह्यूम साहब ने कांगरेस खड़ी की थी। उन्होंने कुछ लोगों से ज़रूर यह कहा था कि कांगरेस खड़ी करने का विचार मुझे लार्ड डफरिन ने समझाया है। यह भेद लार्ड डफ़रिन के जीवन काल ही में खुल गया था, अखबारों में छापा

गया था. और लार्ड डफरिन को भी दिखलाया गया था, लेकिन उन्होंने कभी इसका खण्डन नहीं किया। विलियम वेडरबर्न द्वारा लिखी गई ह्यूम साहब को जीवनी में लिखा है कि "ह्यूम साहब ने निस्सन्देह कांग्रेस खोलने में वायसराय डफ़रिन की सलाह ली थी। लाला जी ने अपनी उक्त पुस्तक में जिसका शीर्षक यह है "ब्रिटिश साम्राज्य को आपदा से बचाने के लिये ही काँगरेस" लिखा है कि "यह स्पष्ट है कि काँगरेस के स्थापन का अर्थ भारत के राजनैतिक स्वतंत्रता दिलवाने की अपेक्षा ब्रिटिश साम्राज्य को आपदा से वचाना ही था। उसमें ब्रिटिश साम्राज्य के हित का ध्यान प्रधान, और भारत का हित गौण था। कोई यह नहीं कह सकता कि कांगरेस कभी अपने लक्ष्य से बिमुख रही है। न्याय तथा विवेक दृष्टि से कहा जा सकता है कि कांगरेस संचालकों ने भारत में ब्रिटिश राज्य का होना ही उसके लिये हितकर समझा था, और उसके संचालक केवल उसको भयंकर आपदाओं से वचाने के लिये यथा शक्ति प्रयत्न नहीं करते थे, बल्कि भारत में अगरेजी राज्य और भी दृढ़ करने का यत्न करते थे, वे देश के राजनैतिक कष्टों को दूर करने और उसकी राजनैतिक उन्नति करने के बिचार को गौण ही समझते थे"। काँगरेस के विषय में यह सुनकर इसके प्रेमियों को आश्चर्य हुआ होगा, किन्तु वास्तविक रहस्य का ज्ञान हो जाने से यह आश्चर्य स्वयं निर्मूल हो जायगा। बात यह है कि अँगरेज़ी जाति इतिहास से इतना परिचित है कि वह इतिहास की त्रुटियों को दुहराना नहीं चाहती सिकन्दर महान के समय से १८५७ ई० के गदर तक इतिहास साक्षी है

कि भारतवासियों ने किसी भी बिदेशी को टिकने नहीं दिया, एक एक से गिन २ कर लोहा लिया है। बहुत से विदेशियों का तो पैर ही उखाड़ दिया कि वे भारत में जमने ही न पाये और जो जम गये शासक हुये, उन्हें भारत में एक दिन भी चैन से रोटी नहीं मिली। और न शान्ति स्थापित कर पाये। कारण यह कि एक बिदेशी जब तक भारत के रीति-रिवाज, सबसे अधिक श्रद्धालु बस्तु, जनता के वास्तविक मनोबृत्ति का पता न लगाले तब तक वे जनता के साथ कैसे स्थायी व्यवहार स्थापित कर सकते हैं। अकबर ऐसे बादशाहों ने अंगरेजी जाति से पूर्व भारत में शान्ति स्थापित करने का प्रयत्न किया था किन्तु वह सफलता स्थायी नहीं हो सकी, क्योंकि उनके पास जनता के आन्तरिक मनोवृत्ति का पता लगाने वाली वर्त्तमान काँग्रेस ऐसी सस्था नहीं थी। कुछ भी हो, काँग्रेस स्थापित किसने किया या किसने कराया इससे हमारा कोई अर्थ नहीं किन्तु यह बात निर्विवाद है कि सरकार को काँगरेस से बहुत लाभ पहुँचा है और इसी के द्वारा भारत में अपनी सत्ता अधिक से अधिक दृढ़ किया है। आम विवेक दृष्टि से देखा जाय तो ज्ञात होगा कि महारानी बिक्टोरिया, महाराजा सप्तम एडवर्ड तथा राजेश्वर जार्ज पंचम, ही ऐसे तीन बिदेशी अब तक हुये हैं जिसको समस्त भारतवर्ष ने अपना महाराजा (overlord) हृदय से स्वीकार किया है।

काँग्रेस का जन्म

अंगरेजी शिक्षा तथा राज्य के कारण भारत में जागृति हुई लेकिन राजनैतिक जागृति नहीं हुई। अगर हुई तो टुकड़े टुकड़े

सरकार चाहती थी कि भारत में एकराजनैतिक संस्था हो तो भारत संगठित रूप में राजनीति की ओर अग्रसर होगा इसी उद्देश्य से सरकार ने हिन्दोस्तानियों द्वारा काँग्रेस खुलवाई। सरकार ने उचित पुरुषों के द्वारा उचित नीति से भारत के राजनैतिक टुकड़ों को एकत्र करके काँगरेस खोला। उस समय सुरेन्द्र नाथ बनर्जी राजनीति में कुशल समझे जाते थे। उन्होंने राजनैतिक बिचारों का प्रचार करने के लिये २६ जुलाई १८७६ ई० में कलकत्ते में इंडियन एसोसियेशन' कायम किया। बा० श्यामा चरण सरकार उसके अध्यक्ष और बा० आनन्द मोहन बोस उसके मंत्री हुये। इसी अवसर पर लार्ड सेलेसबरी ने सिविल सर्विस की परीक्षा के लिये २१ वरस के वजाय १९ वर्ष की आयु की क़ैद कर दी थी। इस पर मि० बनर्जी ने घोर बिरोध किया। काशी में रावल पिण्ड तक आन्दोलन मचाया। सर सैयद अहमद खाँ, मि० तैलंग जस्टिस रानाडे ने आपका साथ दिया अन्त में लाल मोहन घोष इंगलैंड को कामन्स सभा में इसी उद्देश्य से गये और सुधार करा लिया। १८८२ ई० में एलबर्ट बिल कौंसिल में पेश हुआ जिसका मतलब था कि गोरे मुजरिम का फैसला भी हिन्दोस्तानी मजिस्ट्रेट कर सकें। एंग्लो इंडियन में भारी तूफान आया। शिक्षित हिन्दोस्तानियों में यह भाव जागृति हुआ कि गोरे हिन्दोस्तानियों को नीच समझते हैं। सरकार ने सिविल सर्विस में आयु घटा कर, और एलबर्ट बिल का आन्दोलन करके इसकी परीक्षा करनी चाही थी कि भारतीयों ने अँग्रेजी राज्य से कुछ लाभ प्राप्त किया कि नहीं। राजनैतिक भावों तथा समानता का

भाव इनमें आया कि नहीं। मालूम हुआ कि कुछ अंश में शिक्षितों में आ गया है। सन् १८८४ ई० में जितेन्द्र मोहन ठाकुर ने नेशनल लीग की संस्थापना की, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी व्याख्यान देने के हेतु भारत का दौरा करने लगे। १८८५ ई० में बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसियेशन स्थापित हुआ। मि० फिरोजशाह मेहता, तैलंग, दीनशावाचा संयुक्त सिक्रेट्री नियुक्त हुए। सरकार ने देखा कि राजनैतिक भाव जागृत हुआ किन्तु भारतीय पुरुष अपने फूट के कारण एक संस्था न खोल कर अलग२ खोलने लगे, इससे कोई लाभ नहीं। फिर इनका उद्देश्य राजनैतिक नहीं बल्कि सामाजिक है। अतएव वह इन सब उपरोक्त संस्थाओं को मिला कर एक कर देने का सुअवसर ढूंढने लगी। उसी समय मि० ग्लेडस्टन प्रधान मंत्री ने सुअवसर जान कर लार्ड रिपन को भारत का वायसराय नियुक्त किया। उन्होंने भारत में आ कर भारतीयों के लिए राजनीति का शान्त वातावरण उत्पन्न किया। सन् १८७८ ई० के देशी अखबारों के नियंत्रण सम्बन्धी कानून को रद्द कर दिया, डिस्ट्रिक्टबोर्ड और म्युनिस्पिल बोर्ड खोला। इन दोनों सुधारों के कारण भारतीयों में राजनैतिक भाव की नींव जमी और आगे बढ़ने लगे। सरकार को एक उचित पुरुष उक्त कार्य के लिये मिलगये, वह थे मि० ह्यूम। इन्होंने सन् १८५७ का गदर देखा था। उन दिनों इटावा के कलेक्टर थे, इसके बाद भारत सचिव रहे। इस प्रकार वे भारत के रंग व रेशा से पूर्ण रूपेण परिचित थे। उन्होंने सन् १८८४ ई० में देश के सब संस्थाओं को एक करने के उद्देश्य से 'इण्डियन नेशनल यूनियन'

संस्थापना की की । सन् १८८५ ई० में मि० ह्यूम ने इसको सामाजिक संस्था बनाना चाहा किन्तु लार्ड रिपन ने कहा कि "इसको सामाजिक संस्था बनाने से कोई लाभ नहीं, इसको राजनैतिक संस्था बनाओ, तब शासन सूत्रधार की हैसियत से मुझे लोगों की वास्तविक इच्छा जानने में बड़ी सुविधा होगी। सन् १८८५ ई० में मि० ह्यूम और वायसराय से इस संबंध में शिमला में बातचीत हुई। उसमें वायसराय ने यह भी कहा कि "इस संस्था में किसी प्रान्त का गवरनर अध्यक्ष न रहे वरन् जनता को तुरन्त शक हो जायगा।" और फिर यह भी कहा "उनका नाम इस संबंध में तब तक न प्रगट किया जाय जब तक वह भारत में रहें।"

इसके बाद ह्यूम साहेब बिलायत गये और वहाँ लार्ड डलहौजी, वैक्सटन एम. पी, आर. टी. रेड, एम० पी० आदि नेताओं से भेंट किया। उनको कांगरेस खोलने का अभिप्राय समझा दिया, जिससे पार्लियामेंट में कोई गलत फहमी न होने पावे। यह निश्चय करके वह उसी साल नवम्बर मास में भारत आये। इधर कुछ प्रतिष्ठित मनुष्यों को तैयार कर गये थे कि वे तब तक कांगरेस खोलने की तैयारी करते रहें। इस उद्देश्य से १७ आदमी मद्रास में दीवान बहादुर रघुनाथ राव के घर पर एकत्रित हुये। उनके नाम ये हैं:— मद्रास से— सुवरमन्य अय्यर हाईकोर्ट जज, रंगिया नायडू, आनन्द चारलू। बंगाल से— नरेन्द्र नाथ सेन, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, यम. घोष, चारु चन्द्र मित्र। बम्बई से—बी. एन. मण्डलीक, के. टी. टेलाँग, हाईकोर्ट जज

दादा भाई नौरोजी—

पूना से—विजयरग मुदालियर, पंडुरंग गोपाल। यू० पी०—सरदार दयालसिंह, बा० हरिश्चन्द्र (प्रयाग) बा० काशीप्रसाद पं० लक्ष्मीनारायण, बा० श्रीराम (लखनऊ) इन महानुभावों द्वारा काँग्रेस की संस्थापना की गई। सन् १८८५ से सन् १९०५ तक काँग्रेस केवल परमुखापेक्षी था। अपनी आवश्यकताओं और अभियोगों के सम्बन्ध में कुछ प्रस्ताव पास कर लेना और एक प्रार्थना पत्र के साथ उसकी नक़ल सरकार की सेवा में भेज देना बस यही काँग्रेस का काम था। बड़े दिन की छुट्टियों में इसका अधिवेशन हो जाता और कुछ अंग्रेज़ी पढ़े लिखे लोग वहाँ जाकर अपनी वाग्मिता (Oratory) का परिचय दे आया करते थे। सरकार भी उनकी प्रार्थनाओं और प्रस्तावों के लिए एक 'प्राप्ति-स्वीकार' लिखकर भेज देती थी। इस प्रकार दोनों ही अपने कर्त्तव्यों का पालन कर निश्चिन्त हो जाते थे।

सन् १९०५ ई० में काँग्रेस में दो दल हो गये एक नरम दल गरम दल। इन दोनों दलों का वास्तविक कार्य यह था। नरम दल का काम सरकार की खैरख्वाही अथवा ब्रिटिश साम्राज्य को आपदाओं से बचाना और गरम दल का काम षड्यंत्र कारियों से मिलकर (जो छिप २ के काम करते थे) सरकार को भारत से निकाल देने को था। सन् १९०५ से लाहौर काँग्रेस तक काँग्रेस बराबर इन्हीं दोनों दलों के कार्यों का क्षेत्र था। गरम दल काँग्रेस को नरम दल (सरकारी खैरख्वाहों) से छीन कर सरकार के

विरुद्ध सन् १८५७ की ग़दर की भाँति देश व्यापी आन्दोलन करना चाहता था और नरम दल सरकार की सहायता से इस गरम दल को काँग्रेस में घुसने नहीं देता था।

अब यह मालूम हो गया कि भारत की काँग्रेस संस्था अंग्रेज़ों के दाम नीति की उपज और एक प्रधान अंग है। इसके बाद यह देखना है कि यह जाल किस हद तक लोगों के फंसाने में कामयाब रहा। अंग्रेज़ों की ओर से मि० ह्यूम भारत के सच्चे राष्ट्रीय नेता के भेष में, लगभग २५ साल तक यह देखते रहे कि जिस उद्देश्य से कांग्रेस खोला गया है उसकी पूर्ति होती है कि नहीं। हिन्दोस्तानी नेता लगभग १९१५ ई० तक (बंगभंग आन्दोलन छोड़ कर) अंग्रेज़ों के गुणों का प्रचार करते रहे और उसके पारितोषिक स्वरूप, उन्हें कौंसिल की मेम्बरी, न्याय विभाग की जजी और उपाधियाँ मिलती रहीं। इस काल के नेताओंके व्याख्यानों से इस बात की पुष्टि होती है। जो संक्षेप में डा० पट्टाभि सीतारमैया के कांगरेस का इतिहास के आधार पर लिखा जाता है—"उनके व्याख्यानों का विषय यह होता था कि अंगरेज़ लोग वस्तुतः न्यायी और ईमानदार हैं। अगर उनको उचित रूप से सुलझाया या समझाया जाय तो सच्चाई अथवा न्याय से मुख नहीं मोड़ सकते। यह कि यह आन्दोलन अंगरेज़ों और हिन्दोस्तानियों के लिए है न कि अंगेरेजी लोगों के विरुद्ध, यह कि अंगरेजी शासन प्रणाली दोष युक्त है न कि अंगरेजी जाति। यह कि काँगरेस वास्तव में ब्रिटिश राज का भक्त है, यह सिर्फ राज कर्मचारियों से नाखुश है। अंगरेजी शासन

विधान प्रजा सत्तात्मक आधार पर बनाया गया है। और अंगरेजी पार्लियामेंट सारे संसार के प्रजा सत्तात्मक राज्य की जननी है। यह कि अंगरेजी शासन विधान सर्वश्रेष्ठ विधान है। यह कि कांगरेस राज्य-द्रोही संस्था नहीं है। यह कि भारतीय नेता राजा और प्रजा के मध्य स्वभावतः दोभाषिए का काम करते हैं।" आदि कतिपय खैर ख्वाही की बातें ही उनके प्रचार के विषय होते थे।

इनमें वे सब लोग शामिल थे, जो १९१९ में गांधी जी द्वारा काँग्रेस के लखनवी अहदीखाने में आग लगाने से भागे और बाहर आकर लिबरल फिडरेशन नामक संस्था स्थापित किया। जिसे आज कल की शिष्ट भाषा में नरम दल कहते हैं। वे लोग समय २ पर अपने इस सफल जाली काम के लिए पुरस्कृत होते थे। सरकार ने इस कार्य्य के लिये न्याय विभाग को चुना। सर सुवर मन्य अय्यर जो पहिली कांगरेस। में शामिल थे। मि० कृष्ण स्वामी अय्यर जिन्होंने १९०८ ई० में कांगरेस का 'प्रबन्ध किया था। और मद्रास के गवरनर सर आर्थर लाके, ने कांगरेस के इस्तेमाल के लिए अपना निजी तम्बू खेमा दिया था। सर शंकरन नैयर, अमरावती कांगरेस के प्रेसीडेन्ट थे, मि० रामेशम मि० टी. बी. शेषाद्रि अय्यर जो सन् १९१०के काँगरेस में शामिल थे। मि० पी. आर. सुन्दर अय्यर जो सन् १९०८ ई० के कांगरेस में सर कृष्ण स्वामी अय्यर के दाहिने हाथ थे ये सब छहो मद्रास हाईकोर्ट के जज बनाये गये। उनमें से दो इक्जिक्यूटिव कौंसिल के मेम्बर बनाये गये। सर मुहमम्द हबीबुल्लाह जो १८९८ के

कांगरेस में शामिल थे। मद्रास सरकार तथा दिल्ली सरकार के मेम्बर नियुक्त हुये। सर कृष्णा नैय्यर, सर के० वी० रेंडी भी सरकारी ओहदों पर नियुक्त किये गये। सर रामचन्द्र राव सरकार के मेम्बर बनाये गये मि० जी० ए० नेटसन टैरिफ बोर्ड के मेम्बर बनाये गये। सर आर० के० सन्भुखम् कोचीन राज्य के दीवान करा दिये गये। मि० सी० जम्बू लिंगम मुदालियर, सिटी सिविल कोर्ट जज, तैय्यव जी, चन्द्रावरकर जो १८८७ और १९०० ई० के कांगरेस के प्रेसीडेन्ट थे और मि० तेलंग, बम्बई हाईकोर्ट के जज। मि० एन०एम० समर्थ तथा मि० बी०एन० बासू सिक्रेट्री आफ़ स्टेट कौंसिल के मेम्बर सर चिमन लाल सीतलबाद बम्बई सरकार के मेम्बर नियुक्त हुये।

कलकत्ता में मि० चौधरी जिन्होंने बंग भंग आन्दोलन में प्रमुख भाग लिया था। कलकत्ता हाईकोर्ट के जज हुए, सर आशुतोष मुकर्जी का नाम ला-मेम्बरी के लिये तजबीज हुआ। मि० एस० पी० सिनहा जो १९१५ ई० के कांग्रेस के प्रेसीडेन्ट हुए थे सरकार के ऐसे बिश्वास पात्र बने कि वह सरकार के प्रत्येक अप्राप्य पदों को विभूषित करते हुए अन्त में लार्ड सिनहा और बिहार के गवरनर नियुक्त हुये। ऐसा पद आज तक किसी भी हिन्दोस्तानी को नहीं मिला। मि० बी० एन० सरमा, एस० आरदास, सर पी०सी० मित्र, सर तेज बहादुर सपरू जो कांगरेस संस्था के गण्य-मान्य नेता थे। सरकार के ऊँचे ऊँचे पदों पर नियुक्त हुए।

इस प्रकार से भारत के बड़े २ विद्वान, चुने हुए दिमाग

जिनसे भारत माता को बहुत कुछ उम्मीद थी, अँगरेज़ों के दाम नीति के शिकार हुये और आज भी ये नरम दल के कहे जाने वाले नेता जो जीवित हैं इसी जाल में पड़े हैं। सन् १९१४ ई० में तो यह हाल था कि "कांगरेस का अधिवेशन मद्रास में हो रहा था, लार्ड पेंटलेंड मद्रास के गवरनर ने कांगरेस पण्डाल के अन्दर प्रवेश किया, वहाँ सब काँगरेस वालों तथा उपस्थित जन समुदाय ने लाट साहेब को खड़े हो कर सलाम किया, और उनका स्वागत किया और भाग्य को सराहा। इतना ही नहीं गवरनर के प्रवेश के समय मि० ए० पी० पेटरो, इण्डियन इक्स-पेडीशनरी फोर्स के प्रस्ताव पर बोल रहे थे, उन्हें तुरन्त रोक दिया गया और बाग्मी सुरेन्द्र नाथ बनर्जी से कहा गया कि वह "काँगरेस सरकार की राजभक्त है" का प्रस्ताव रक्खे जिसको उन्होंने बड़ी सुन्दरता से किया।

सन् १९१६ ई० में लखनऊ में काँगरेस अधिवेशन हो रहा था, तात्कालिक गवरनर मि० सर जेम्स मेस्टन पण्डाल के अन्दर आए तो सब लोगों ने उठ कर उनका अदब से स्वागत किया।

सन् १९१८ ई० में काँगरेस-जर्मन युद्ध के सफलता पूर्वक खतम होने पर अपने राजभक्ति का सन्देश सरकार को भेजा और यह कहा कि संसार के लोगों को गुलामी से मुक्त करने और उन्हें आजाद करने के लिये अङ्गरेजों को लड़ना पड़ा था जिसमें वे लोग बड़ी बहादुरी से लड़े। निष्कर्ष काँगरेस सन् १९१८ तक अङ्गरेज़ों के इसी माया जाल में पड़ी रही।

———

अङ्गरेजों की दण्ड नीति

जर्मन युद्ध के बाद भारतीय हिन्दू मुसलमान षड्यंत्र कारियों ने इस बात की चेष्टा की थी कि तात्कालिक परिस्थितियों से लाभ उठा कर भारत में अँगरेज़ी राज्य का अन्त कर दें। यह समय अङ्गरेज़ों के लिए आपदा का समय था। २० जनवरी सन् १९१९ के डेली मेल (पेरिस), सण्डे इक्सप्रेस तथा माडर्न रिव्यू में एक उद्धरण इस प्रकार छपा था कि "जर्मन युद्ध के समाप्त होने के तुरन्त बाद ही सन् १९११ के बसन्त ऋतु में क्रान्तिकारी और भारत की अन्य ब्रिटिश—विरोधिनी संस्थाओं ने, ब्रिटिश राज्य के उलट देने के अन्तिम उद्योग के उद्देश्य से सब संगठित हो गये थे। क्योंकि उन सभों को यह धारणा थी कि अङ्गरेज़ी राज्य की नींव, जर्मन युद्ध के बाद हिल गई है।"

आर्थिक संकट

जर्मन युद्ध के कारण भारत की आर्थिक दशा अत्यन्त शोचनीय हो रही थी, मध्य श्रेणी के लोग तथा ग़रीब लोग भूखों मरने लगे थे, खाने पीने की चीजें बहुत मंहगी हो गई थीं। सूखा पड़ने तथा नाम मात्र के वर्षा ने भारत में आथिक विपत्ति उत्पन्न कर दी थी। भारत में अन्दर २ हाहाकार मच रहा था चूँकि भारत के लोग आदि काल से अपने दुख का कारण अपने राजा को समझती आ रही है. इसलिये इस समय के संकट का कारण भी सरकार को ही समझने लगी। प्रजा सरकार से असन्तुष्ट थी। इसके परिणाम स्वरूप

सन् १९१९ ई० में श्रमजीवी लोगों की संस्थाएँ स्थापित होने लगीं। मद्रास में लेवर यूनियन्स स्थापित किए गए, और नेताओं के नेतृत्व में उनकी बैठकें हुईं। इस समय चिट्ठीरसा, तारवालों, रेलवे वालों, कारखाने वालों और अन्य श्रमजीवी लोगों ने अधिकार प्राप्त करने के लिए अपनी २ संस्थायें स्थापित किये। उसी समय कारखानों में काम करने वालों ने हड़तालें करके अपना असन्तोष प्रकट किया, और इस कारण समय २ पर कारखानों का काम बन्द होता रहा, रेल वालों ने कई बड़ी २ लाइनों पर तनख्वाह बढ़वाने के लिये काम छोड़ दिये। कलकत्ता में चिट्ठीरसाओं ने हड़ताल की। कानपुर के कारखाने वालों ने १५००० की तादाद में हड़ताल किया, और यही कहा कि मंहगी से उनको बहुत कष्ट है, उनकी मजदूरी कम है।

युद्ध से लौटे सिपाही

जर्मन युद्ध में यूरोप और भारत का सम्पर्क पहिले से अधिक बढ़ा यूरोपीय और भारतीय सैनिकों में वहाँ अनेकों बार मुठभेड़ें हुईं। कभी ये जीतते थे कभी वे। यूरोप वैज्ञानिक साधनों का दोनों ओर प्रयोग किया जाता था। रात दिन वायुयान आस्मान पर घूमते थे। अङ्गरेजी तथा भारतीय सैनिक साथ २ रहते थे, साथ २ लड़ते थे। अस्पतालों में गोरे डाक्टर थे, सेवा सुश्रूषा के लिए गोरी नर्सें थीं, और अफसर प्रायः गोरे ही थे। अपना स्वार्थ साधने के लिए अङ्गरेज तथा फ्रेन्च लोग भारतीय सिपाहियों के साथ अच्छा बर्त्ताव करते थे, इस सम्पर्क से भारतीय सैनिकों का ज्ञान और अनुभव बढ़ा और अङ्गरेजी जाति का जो आतंक

और रोब था, वह बिल्कुल ही नष्ट हो गया। उनके साथ सदैव रहते २ भारतीय सैनिकों ने उनके वैभव, स्वातंत्र्य और शक्ति देखा, साथ ही वहाँ के अनाचार, निर्बलता से भी परिचित हुए। पेरिस आदि की गलियों में इन लोगों ने स्वच्छन्द बिचरण किया, और अपने विजेताओं के घर की आन्तरिक दशा भली भाँति देखी। इन सैनिकों में जो लोग भाग्यवश भारत ज़िन्दा लौटे, उन्होंने अपने अनुभव देशवासियों को सुनाए। बहुसंख्यक लोग अङ्गरेज़ों को असली रूप में जानने लगे। उनमें उन्नति शक्ति और आज़ाद होने की अभिलाषा और भी प्रबल हो गई थी।

मुस्लिम राष्ट्र

भारतीय मुसल्मान नहीं वरन लगभग संसार के मुसल्मान 'खिलाफ़त' के प्रश्न के कारण अङ्गरेज़ों के विरुद्ध थे। जो लोग मुहम्मद साहेब के उत्तराधिकारी हुये वे सब खलीफा कहलाये मुसल्मानी मजहब में इनका सबसे ऊँचा पद था। इसलामी फौज के प्रधान सेनापति भी खलीफा ही होते थे। इस प्रकार मुसल्मानी दीन और दुनियाँ के रक्षक ख़लीफ़ा ही थे। कहने का अर्थ यह है कि खलीफा मुसल्मानों का सर्वेसर्वा होता था, इसलिये उसको मिटते देख संसार के कुल मुसल्मानों का उत्तेजित हो जाना स्वाभाविक था। ऐसी समस्या उपस्थित होने का अवसर इस प्रकार आया कि जर्मन युद्ध में टर्की के खलीफा ने जर्मनी का साथ दिया था किन्तु जर्मनी जब हार गया तो मित्र राष्ट्र तुर्की साम्राज्य को छिन्न भिन्न करने में लग गये। ख़लीफा के साम्राज्य को टुकड़े २ होते देख संसार भर के मुसल्मानों

का जोश उबल पड़ा, विशेषतः अंग्रेज़ों के विरुद्ध हिन्द में भी मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अली की अध्यक्षता में ख़िलाफ़त आन्दोलन शुरू हुआ और आन्दोलन यहाँ तक बढ़ा कि ख़िलाफ़त की मांग भारत की राष्ट्रीय माँग हो गई। संक्षेप में ख़िलाफ़त की माँग इस प्रकार थी। (१) मक्का मदीना और यरुशलम के पवित्र स्थानों पर ख़लीफ़ा का अधिकार होना चाहिये। (२) जज़ीरुतुल अरब जिसमें अरब, सीरिया, पैलेस्टाइन और ईराक भी शामिल थे, पर ख़लीफ़ा का शाही अधिकार रहे। इस प्रश्न का अर्थ यह है कि उस समय लगभग कुल मुसल्मान अङ्गरेज़ों के विरुद्ध थे, और विशेषता यह थी कि हिन्दुओं के साथ दूध पानी हो रहे थे और अगर भारत उस समय अङ्गरेज़ों के विरुद्ध उठता तो इनकी 'विभाजित करके शासन करो' (Divide and Rule) की नीति प्रायः असफल सिद्ध होती।

क्रान्तिकारियों की चेष्टा

भारत में क्रान्तिकारी दल उस वक्त तक ब्रिटिश राज्य को अपने बुद्धि के अनुसार नाश कर देने में सफ़ल समझ रहे थे। और केवल अवसर की ताक में थे। वह अवसर युद्ध के बाद स्वतः उपस्थित हो गया। क्रान्तिकारियों के इस ओर चेष्टा पर ध्यान देने के बजाय उनका इतिहास सूक्ष्म रूप से ज्ञात हो जाय तो इस दल के संगठन का महत्व भली भाँति स्पष्ट हो जाय।

क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास

महाराज शिवा जी के पोते ने सितारा (बम्बई) में एक राज्य

स्थापित किया। जिसके प्रधान मंत्री चितपावन ब्राह्मण थे, जो अन्त में मरहठों से छीन कर पेशवा की उपाधि धारण करके स्वयं उस राज्य के अधिकारी हो गये। अंगरेजों ने इन्हीं पेशवाओं से सितारा की रियासत ली थी। इसलिये स्वभावतः पेशवा लोग अथवा चितपावन ब्राह्मण अँगरेजों से इस कार्य का बदला लेने के लिये उनके विरुद्ध अन्दर अन्दर षड़यंत्र के साधन एकत्रित करने लगे। और यहीं से भारतीय षड़यंत्र का सूत्रपात होता है।

विप्लवकारियों का प्रथम चिन्ह सब से पहिले पश्चिमी भारत में 'गणपति जी' तथा मरहठा नेता 'शिवाजी' के उत्सव के सम्बन्ध में मिलता है। सन् १८९३ ई० में बम्बई में हिन्दू मुस्लिम दंगा हो गया था, इसलिये हिन्दुओं ने मुसलमानों के विरोध में 'गणपति' उत्सव मनाने की अयोजना की थी। सन् १८९४ ई० में गणपति उत्सव के समय हिन्दुओं ने सार्वजनिक गणपति का मेला लगाने का संगठन किया। लोकमान्य तिलक प्रारंभ से ही देश को जाग्रत करने की चेष्टा में थे। इसके लिये उन्होंने 'केसरी' और 'मराठा' नामक दो समाचार पत्र निकाले। इसके अतिरिक्त सन् १८९५ में उन्होंने 'शिवाजी' उत्सव मनाने का आयोजना किया। और पूना निवासी श्री दामोदर चापेकर और श्री बालकृष्ण चापेकर नाम के दो उत्साही युवकों ने 'चापेकर सघ' नाम की एक संस्था खोली, जिसका उद्देश्य दो श्लोकों से प्रकट है। (१) शिवाजी श्लोक (२) गणपति श्लोक।

शिवाजी श्लोक

"शिवाजी के किस्सों को कहने मात्र से स्वतंत्रता नहीं मिल

सकती, इसके लिये शिवाजी और बाजीराव की भाँति कठिन तप की आवश्यकता है। इतना समझ कर ये नवजवानो तुम्हें अब तलवार उठा लेनी चाहिये, हम लोग शत्रुओं के असंख्य शिरों को काट डालेंगे। सुनो। हम लोग राष्ट्रीय युद्ध क्षेत्र में अपने प्राण त्याग देंगे। हम लोग अपने धार्मिक शत्रुओं को नष्ट कर देंगे। हम लोग मरकर ही मरेंगे, और तुम लोग स्त्रियों की की तरह हम लोगों के किस्से सुना करोगे"।

गणपति श्लोक

शोक तुम्हें गुलाम बने रहने में लज्जा नही आती, इससे अच्छा है कि तुम लोग आत्म-हत्या कर लो दुराचारी कसाई, की तरह गायों और उनके बच्चों का बध करते हैं, इसलिये उनको इस कष्ट से बचाओ मर जाओ किन्तु अंगरेजों को मार डालो। पृथ्वी के भार स्वरूप अकर्मण्य होकर मत बैठो।। यह हिन्दोस्तान कहलाता है। यह क्या बात है कि अंगरेज लोग यहाँ शासन करें।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिये इन संस्थाओं का जन्म हुआ था। देश के युवकों के शरीर और हृदय को देश सेवा के उपयुक्त बनाना, इसके साधन रक्खे गये थे। व्यायाम चर्चा द्वारा शरीर की तथा श्री शिवाजी की कीर्तियों के मनन और अनुशीलन द्वारा मन की उन्नति करना। तिलक जी इस संघ के प्रधान संचालक थे। शिवाजी उत्सव के उपलक्ष में तिलक जी ने अपने पत्र में एक वीरता पूर्ण कविता छापी थी, और एक वक्ता ने खुली सभा में घोषणा की थी कि हम लोग अपनी खोई हुई स्वाधीनता

का पुनरुद्धार करना चाहते हैं। हम इसके लिये यथा संभव तैयार हैं और उसे प्राप्त करेंगे।

उस समय पूना में प्लेग फैला हुआ था। सरकारी कर्मचारियों ने नगर को इस भीषण प्लेग से सुरक्षित रखने की भरसक कोशिश करते थे। किन्तु नगर निवासियों के लिये यह कार्य दुखदायी प्रतीत हुआ। श्री दामोदर चापेकर ने इन कार्यों से उत्तेजित होकर प्लेग निवारक कर्मचारी मि० रैंड और उसके सहकारी एरिस्ट को जान से मार डाला। तिलक जी इन दिनों बड़ी निर्भीकता पूर्वक स्वतंत्रता मंत्र का प्रचार कर रहे थे। वह राजद्रोह के अपराध में १८ माह के लिये जेल भेज दिये गये। इससे जनता में बड़ी सनसनी फैल गई, और कॉंग्रेस में दो दल 'नरम' और गरम के नाम से उत्पन्न हो गये। इन विप्लववादियों का प्रचार शनैः २ अन्दर ही अन्दर जोर पकड़ने लगा।

बिदेश में प्रचार

प्लेग काण्ड के समय पूने में जो हत्या हुई थी, उसके सम्ब्रन्ध में नाटू भाई की आख्या से प्रसिद्ध महाराष्ट्र युवकों को देशान्तर की सज़ा दी गई थी। इससे श्याम जी कृष्ण वर्मा नाम के एक गुर्जर नवयुवक के मन पर बिचित्र प्रभाव पड़ा। ये महर्षि दयानन्द के शिष्य थे। क्रान्ति के लहर से इनका हृदय ओत प्रोत था। पूना के प्लेग कर्मचारियों की हत्या के कारण जिस भयानक अत्याचार की सृष्टि हुई थी, उसके प्रतिकार की चेष्टा के लिये वर्मा जी इंगलैंड चले गये। स्वतंत्रता प्रेमी वर्मा जी फिर भारत नहीं आये और वहीं रहकर विप्लव का

प्रचार करने लगे। इन्होंने 'इंडियन होमरूल सोसायटी' नाम की एक संस्था स्थापित किया। और 'इंडियन सोशलिस्ट' नाम का एक पत्र भी निकाला। इस पत्र द्वारा उन्होंने घोषणा की कि भारतवासियों में आज़ादी के भावों का प्रचार करने के लिये वे ऐसे ६ मनुष्य चाहते हैं, जो विदेश में जाकर इस सम्बन्ध में शिक्षा प्राप्त करें। इस कार्य के लिये उन्हें एक हज़ार रुपये की वृत्ति भी प्रदान करेंगे। इस घोषणा को पढ़ कर कई भारतीय नवयुवक उनके साथी हुए जिनमें नासिक के श्री विनायक दामोदर सावरकर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन्होंने भारतीय नवयुवकों के दिलों में देशात्मबोध की जाग्रति के लिये 'मित्र मेल' नाम की एक संस्था खोली। परन्तु उस संस्था का कार्य भार अपने छोटे भाई श्री गणेश दामोदर सावरकर को सौंप कर वे लन्दन चले गये। सावरकर जैसा उत्साही साथी पाकर वर्मा जी ने तुरन्त 'इण्डिया हाउस' नामक एक संस्था खोली और प्रवासी भारतीय नवयुवकों को विप्लव मन्त्र की दीक्षा देने लगे। इधर भारतवर्ष विशेषतः बंगाल में चापेकर संघ की तरह समितियों की स्थापना होने लगी। युवकों ने बड़े उत्साह से लाठी, तलवार और छूरी चलाने का अभ्यास आरंभ कर दिया। कुछ दिनों के बाद कई बड़ी २ समितियों का सम्बन्ध लन्दन के इण्डिया हाउस के साथ स्थापित होगया।

बंगाल विप्लव संगठन

बंगाल प्रान्त में विप्लव का जन्मदाता बारीन्द्र कुमार घोष जो अरविन्द घोष के छोटे भाई हैं। बारीन्द्र १८८० ई० में

इंगलैंड में पैदा हुये थे, वहाँ से वह बड़ौदा में अपने बड़े भाई (अरविन्द घोष) के साथ रहते थे। वह १९०२ ई० में बड़ौदा से कलकत्ता आये बारीन्द्र के कलकत्ते आने का उद्देश्य, जैसा कि उन्होंने स्वयं न्यायाधीश के सामने स्वीकार किया था—विप्लव द्वारा अङ्गरेजी राज्य को नष्ट करना था। इस कार्य के पूर्ति के लिये बड़ी तपस्या तथा षड़यंत्र रचने की ज़रूरत थी, इसलिये उन्होंने अङ्गरेजी शिक्षित समाज में विप्लव के विचारों का प्रचार आरम्भ किया। हम पहिले ही बता चुके हैं कि चापेकर-संघ के प्रचार के कारण बंगाल में भी कई सँस्थायें इस प्रकार की पहिले ही स्थापित हो चुकी थीं, जिसमें शस्त्र प्रयोग की कला सिखाई जाती थी। यह सब साधन होते हुये भी बारीन्द्र विप्लव-प्रचार के कार्य में असफल रहे। किन्तु इन्होंने पुनः एक बार प्रयत्न किया, और इस बार उन्होंने सोचा कि केवल राजनैतिक आन्दोलन से यह कार्य सफलीभूत न होगा, उन्होंने तात्कालिक धार्मिक धारा को पकड़ा। उस समय परमहंस रामकृष्ण ने धर्म क्षेत्र में बड़ी उत्तेजना पैदा करदी थी, और उसके बाद उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द ने इस उत्तेजना को और भी पुष्ट किया, बल्कि उनका कार्य किसी हद तक राजनैतिक जाग्रति पैदा करना था। स्वामी विवेकानन्द के चाहे राष्ट्रीय चाहे सामाजिक और चाहे धार्मिक कार्यों का अध्ययन कीजिये तो उनके अक्षर अक्षर में नवीन भारत के प्रति सन्देश है। भारतीय राष्ट्र निर्माण की प्रबल आकांक्षा है। वाक्य २ में उन्होंने नव्य भारत से यही प्रार्थना की है— उत्तिष्ठत, जागृत प्राप्य वरान्निबोधत—उठो, जागो और

अपने मातृ-भूमि की सेवा करो। इसके अतिरिक्त राजा राम मोहनराय द्वारा संस्थापित ब्रह्मसमाज, बंकिम चन्द्र के बन्देमातरम से बंगाल में बड़ी जागृति हो रही थी। वारीन्द्र ने इन सब धाराओं को केन्द्रित करके अङ्गरेजों के विरुद्ध कर देने की चेष्टा में संलग्न हो गये। इन सब बातों के अतिरिक्त उस समय 'जापान का रूस को हरा देने' के भाव ने वारीन्द्र के काम में बड़ा उत्साह प्रदान किया। उसी समय लार्ड कर्जन वायसराय ने 'यूनिवर्सिटी बिल' का प्रवेश किया, जिससे शिक्षित समाज ने समझा कि सरकार अङ्गरेजी शिक्षितों की संख्या कम करना चाहती है, और इस तरह राष्ट्रीय जागृति को रोकना चाहती है। निष्कर्ष यह कि उपरोक्त कारणों से बंगाल प्रान्त में गाँव २ नगर २ में अङ्गरेजों के विरुद्ध आन्दोलन करने का समुचित साधन पैदा हो गया था। वारीन्द्र ने अपने आन्दोलन द्वारा इस असन्तोष को और भी पुष्ट कर दिया, और अपने साथियों से मिल कर 'अनुशीलन समिति' द्वारा इसका और अधिक प्रचार किया।

पंजाब में प्रचार

विप्लव वादियों का प्रचार उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया और अन्त में पंजाब में भी यह अग्निचिंगारी पहुंच गई। पंजाब में विप्लव का जन्म चुनाब नदी के किनारे के उपनिवेश के कारण हुआ था। इस आन्दोलन के नेता लाला लाजपत राय और सरदार अजीत सिंह थे इसके अतिरिक्त सरदार अजीत सिंह के छोटे भाई सरदार किशन सिंह (सरदार भगत सिंह के पिता) और कविवर लालचन्द फलक ने भी इस आन्दोलन को खूब बढ़ाया। इन सब

क्रान्तिकारियों में लाला हरदयाल सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं।

सरकारी दल तथा क्रान्तिकारियों का संघर्ष

सन् १८८५ ई० से लेकर सन् १९०५ तक कांग्रेस की बागडोर सरकारी ख़ैरख्वाहों के हाथ में था, और भारत में किसी विचार के प्रचार के लिए काँग्रेस ही उस समय तक एक मात्र साधन था, इसलिए विप्लववादी काँग्रेस की बागडोर अपने हाथ में लेना चाहते थे, क्योंकि काँग्रेस 'देश जाग्रति' की आड़ में विप्लववादियों के कार्य में बड़ी बाधा उपस्थित करते थे। इन दोनों दलों का संघर्ष बंगभंग से आरम्भ होता है। ३ दिसम्बर १९०३ ई० को सरकार ने घोषित किया कि राज्य कार्य के सुविधा के लिए बंगाल दो भागों में विभाजित कर दिया जायगा। बंगालियों ने इसका विरोध किया, परन्तु सरकार ने एक न सुनी और १६ अक्टूबर १९०६ ई० का यह घोषणा कार्य रूप में परणित कर दी गई, बंगाल का बंटवारा हो गया। क्रान्तिकरियों ने काँग्रेस को अपने आधीन कर लेने का शुभअवसर समझा। और अपना कार्यसुचारु रूप से संचालित किया। वंकिम बाबू के 'बन्देमातरम' मन्त्र का प्रचार पहिले ही हो चुका था, बंगालियों का यह नवीन जागरण देख कर मानों उसकी चिंगारियाँ कायरता जान लेकर भागी राजद्रोह, सम्राट के विरुद्ध युद्ध की तैयारी और गुप्त षड़यंत्रों के मामलों की रिपोर्टों से समाचार पत्रों के पृष्ठ के पृष्ठ भर गये। सरकारी सिडिशन सरक्युलरों के मारे सभा सिमितियाँ त्राहि २ पुकारने लगी। शान्त भारत अशान्ति का घर बन गया। करागार दण्ड, अर्थदण्ड, बेंताघात, द्वीपान्तर और फाँसी का कार्य एक खेल

प्रतीत होने लगा।

इधर काँग्रेस में दो दलों की सृष्टि तो तिलक जी के प्रथम कारावास से ही हो चुकी थी। विप्लववादियों का ढंग देख कर बेचारे सरकारी खैरख्वाहों (नरम दल वालों) का कलेजा दहल उठा, उन्होंने काँगरेस से शनैः २ किनाराकशी आरंभ कर दिया, परन्तु विप्लववादियों के मार्ग में बाधा उपस्थित करने से बाज़ नहीं आये।

काँगरेस का २२ वाँ अधिवेशन सन् १९०६ में कलकत्ते में हुआ। नरम दल वालों (खैरख़्वाहों) की हिम्मत काँगरेस में जाने की नहीं होती थी। क्योंकि सारे देश में विशेषतः बंगाल में एक आग सी लगी हुई थी। इनके वेग में बाधा उपस्थित करने के लिए दादा भाई नौरोजी जो नरम और गरम दोनों थे, विलायत से बुलाये गए कि ऐसे आग के समय वे काँगरेस के सभापति हों। विप्लववादियों ने अपने सर्वमान्य नेता तिलक जी को ही सभापति बनाना चाहा था, किन्तु खैरख्वाह लोग तो उनके नाम से भयभीत होते थे। उन लोगों ने इस प्रस्ताव को गिरा कर नौरोजी को सभापति बनाया। इन सब बाधाओं के होते हुए भी काँगरेस का यह अधिवेशन अत्यन्त उत्साह पूर्ण था। अन्त में विजय भी क्रान्तिकारियों की ही हुई। काँगरेस ने विदेशी वस्तु बहिष्कार सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकार करा लिया। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत रह कर औपनिवेशिक स्वराज्य लाभ करना काँगरेस का अब ध्येय स्वीकार किया गया। सभापति महोदय अपने भाषण में 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग करने के लिए बाध्य हुये। सन् १९०६

की काँगरेस के बाद नौकरशाही ने इस राष्ट्रीय जागरण को कुचल डालने का विचार किया। लाला लाजपतराय और सरदार अजीतसिंह बिना बिचार के ही कैद करके माण्डले भेज दिये गये। इन दोनों नेताओं की गिरफ्तारी में सरकार का उतना दोष नहीं जितना कि कुछ भारतीयों का। जैसा कि निम्नांकित बात से सिद्ध होता है।

२३ नवम्बर १९३३ ई० के 'लीडर अखबार' में लाला लाजपत राय जी की जीवनी लिखते हुये प्रो० रुचीराम साहनी लिखते हैं "कि जिस समय लालाजी पकड़े गए मैंने अपने एक अंग्रेज़ दोस्त प्रो० जी० ए० वाथेन से कहा था कि "सरकार लालाजी को ६ माह के अन्दर ही छोड़ देने के लिए मजबूर होगी, क्योंकि वह इतने भयानक नहीं हैं जितना कि वह समझे गये हैं"। इसके उत्तर में उक्त प्रोफेसर साहेब ने कहा "सरकार ने यह कार्य लगभग आधे दर्जन हिन्दोस्तानियों की सलाह से किया है।" इस कथन के उद्धरण का तात्पर्य यह है कि लालाजी को हिन्दोस्तानियों ने पकड़वाया। यह कार्य इसलिये किया गया था कि लालाजी के उपस्थित रहने पर सन् १९०७ ई० के कांग्रेस में खैरख्वाहों के कार्य में बाधा उपस्थित होने की संभावना थी।

सन् १९०७ में कांग्रेस का अधिवेशन नागपुर में होने वाला था। गोकि पिछले कांग्रेस में क्रान्तिकारियों की विजय हुई थी, किन्तु कांग्रेस की बागडोर खैरख्वाहों के हाथ में थी। वे नागपुर में कांग्रेस करने को तैयार नहीं हुये, क्योंकि वहाँ तिलक दल का विशेष प्रभाव था। इसलिये प्रसिद्ध खैरख्वाह सर फिरोज़शाह

मेहता ने सूरत में कांगरेस के अधिवेशन करने का आयोजन किया। मेहता महोदय के इस कुटिल चाल से गरम दल वाले अप्रसन्न हुए। उन्होंने कांगरेस को छोड़ कर अपनी पृथक संस्था कायम करने का बिचार किया, किन्तु तिलक जी इसके लिये तैयार नहीं हुये, वे संस्थापित कांगरेस को खैरख्वाहों से छीन लेने के पक्षपाती थे। लालाजी माण्डले से लौट आए थे, इसलिए गरम दल वाले उन्हीं को काँगरेस का सभापति बनाना चाहते थे। किन्तु खैरख्वाहों को भय था कि उनके सभापति होने से सरकार अप्रसन्न होगी, इसलिए उन्होंने वंगाल के सर राशविहारी घोष को सभापति चुना, और इसके साथ खैरख्वाहों ने यह भी घोषणा किया कि विदेशी वहिष्कार और 'जातीय शिक्षा' सम्बन्धी प्रस्तावों की आलोचना कांगरेस में नहीं हो सकेगी।

गरम दल वाले उनके इस कार्य से बहुत ही क्षुब्ध हुये। उन्होंने सूरत में अरबिन्द घोष के सभापतित्व में एक सभा की। निश्चय हुआ कि भीरुता और दुर्बलता को आश्रय प्रदान करके काँगरेस की मर्यादा को न बिगड़ने दिया जाय। तिलक जी ने श्री रास बिहारी घोष से मिल कर उन प्रस्तावों को ग्रहण करने के लिए अनुरोध किया। परन्तु उन्होंने ऐसा करने से साफ़ इनकार किया। गरम दल वाले हताश हो कर लौट आये और निश्चय किया कि काँगरेस के खुले अधिवेशन में ये प्रस्ताव रक्खे जांय और घोष महाशय के सभापतित्व का घोर विरोध किया जाय। खैरख्वाह दल भी खूब तैयार था। अधिवेशन आरम्भ हुआ।

तिलक जी कुछ कहने को उठे, इतने में किसी बदमाश ने उन पर एक जूता फेंका, जो उनको न लग कर सुरेन्द्र नाथ बनर्जी को लगा। काँगरेस में प्रलय मच गया, कुर्सियाँ चलीं, डंडे चले, हाथा पाई हुई और अन्त में काँगरेस की कारवाई बन्द कर दी गई।

कुछ खैरख्वाहों ने मिलकर काँग्रेस के १९०६ ई० के गरम कारवाई को नष्ट करने के लिये एक नया विधान बनाया ताकि कांगरेस में गरम दल वाले प्रवेश ही न कर सके उसके लिये कुछ शर्तें बनाईं, बिना इन शर्तों को हस्ताक्षर द्वारा स्वीकार किये हुये कोई कांगरेस का सदस्य ही न हो सके। इन सब कुटिल नीति द्वारा सुरक्षित होकर खैरख्वाहों ने स्थगित कांगरेस के अधिवेशन को सन् १९०८ में मद्रास में किया। इन खैरख्वाहों से मार्ग में बाधाओं के दूर करने के लिये तिलक जी को ६ साल की सज़ा दे दी गई। बंगाल के नवरत्न श्यामसुन्दर चक्रवर्ती, श्रीकृष्ण कुमार मित्र, शचीन्द्र प्रसाद घोष, अश्विनी कुमार दत्त सतीशचन्द्र चटर्जी, राजा सुबोध चन्द्र मल्लिक, मनोरंजन गुह, पुलिन बिहारी दास और भूपेन्द्र नाथ नाग सन् १८१८ के तीसरे रेगुलेशन के अनुसार बिना बिचार के ही निर्वासित किये गये। इस घटना ने देश भर में एक अद्भुत सनसनी फैला दी थी, किन्तु इससे होता क्या है। खैरख्वाहों के लिये मैदान साफ़ था। सन् १९०८ के काँगरेस अधिवेशन के प्रेसीडेन्ट वही राशविहारी जी घोष चुने गये। कांगरेस पुनः खैरख्वाहों के हाथ आगई। विप्लववादी अपने कार्य को प्रचरित

करने के लिये देश में जगह २ षड़यंत्र करने लगे। किन्तु काँगरेस सन् १९१९ तक (जर्मन युद्ध के अन्त तक) खैरख्वाहों के अधीन रही। सन् १९२० से काँगरेस गाँधी जी के हाथ आई।

जर्मन युद्ध के समय के षड़यंत्र

सन् १९१५ के अगस्त मास में फ्रेञ्च पुलिस ने अँङ्गरेज सरकार को खबर दी कि यूरोप में रहने वाले हिन्दोस्तानी क्रान्तिकारियों का यह विश्वास है कि भारत में शीघ्र ही भीषण विप्लव होने वाला है। और इस विप्लव के भड़काने में जर्मनी अपनी पूरी शक्ति से सहायता देगा। फ्रेंच पुलिस से यह सूचना मिलते ही अङ्गरेज सरकार के कान खड़े हो गये, क्योंकि उस समय तक अङ्गरेज सरकार इस विप्लव से विल्कुल बेखबर थी। निम्नलिखित घटनाओं से उस षड़यंत्र का भेद मालूम होगा।

सन् १९१४ के नवम्बर मास में अमेरिका से दो क्रान्तिकारी पिंगले (मराठा) और सत्येन्द्र सेन कलकत्ते आये। पिंगले उत्तर भारत में बिद्रोह का संगठन करने चला गया, और सत्येन्द्र सेन कलकत्ते में ठहर गया। सन् १९१४ ई० के दिसम्बर मास में पुलिस को खबर मिली कि एक स्वदेशी वस्त्र की दूकान में रामचन्द्र मजूमदार और अमरेन्द्र चटर्जी कई अन्य बंगालियों के साथ बहुत अधिक संख्या में अस्त्र शस्त्र संचित कर रहे हैं। सन् १९१५ के आरम्भ में बंगाल के क्रान्तिकारियों ने सलाह करके भारत में ठीक संगठित रूप से क्रान्ति करने का निश्चित किया। इसमें जर्मनी की भी पूरी सहायता रहेगी। इस क्रान्ति में श्याम देश तथा बंगाल के विभिन्न स्थानों के क्रान्तिकारी भी

सम्मिलित रहेंगे। तब तक क्रान्तिकारी लोग डाके डालकर धन संग्रह करेंगे, ऐसा ही निश्चय हुआ था। इसके बाद बेलियाघाटा और गार्डन रीच में डाके डाले गये और क्रान्तकारियों को चालीस हज़ार रुपये मिले। बेंगकाक (श्याम देश में) के क्रान्तिकारियों से सम्बन्ध रखने के लिये भोलानाथ चटर्जी रवाना हुआ। उन्हीं दिनों यतीन्द्र नाथ लहरी यूरोप से बम्बई आया और उसने बंगाल के क्रान्तिकारियों को यह समाचार दिया कि जर्मन सहायता करने के लिये तैयार हैं, किन्तु उनसे मिलाने के के लिये एक दूत बटेविया (जावा का बन्दरगाह) भेजो। और उनका नेता बालेश्वर में छिपकर रहने लगा, क्योंकि गार्डन-रीच के डाके के सम्बन्ध में पुलिस उसे खोज रही थी। उसी महीने में 'मेवरिक' नामक जहाज़ कैलिफोर्निया के सेनपेड्रो बन्दर से रवाना हुआ। मार्टिनर (नरेन्द्र) जब बटेविया पहुँचा तो वहाँ रहने वाले जर्मन राजदूत ने उसकी भेंट एक अन्य जर्मन थियोडर हेल्फरिश से कराई। मार्टिन (नरेन्द्र) जब बटेविया पहुँचा तो वहाँ रहने वाले जर्मन राजदूत ने उसकी भेंट एक अन्य थियोडर हेल्फरिश से कराई उस जर्मन ने मार्टिन से कहा कि भारतीय क्रन्तिकारियों की सहायता के लिये एक जहाज़ शस्त्रों से लदा हुआ कराची रवाना हुआ। मार्टिन ने कहा कि उस जहाज़ को बंगाल भेजिये इसके बाद मार्टिन उस जहाज़ से शस्त्र उतारने के लिये लौट आया। मेवरिक जहाज़ सुन्दरबन के बन्दर में उतरने वाला था। इस जहाज़ में प्रायः तीस हज़ार बन्दूकें चालीस हज़ार गोलियाँ और दो लाख रुपये थे। इस बीच में

मार्टिन ने कलकत्ते की एक नकली दूकान "हेरी एण्ड सन्स" को तार दिया कि 'व्यापार अच्छा चल रहा है।' जून मास में 'हेरी एण्ड सन्स,' ने मार्टिन को रुपये के लिये लिखा और फिर बटेविया से जर्मन हेल्फरिश ने प्रायः ४३०००) हेरी एण्ड सन्स के नाम भेजे जिसमें ३३०००) उसे मिले पर अब अङ्गरेज अधिकारियो को भी इसका पता लग गया। मेवरिक जहाज़ अमेरिका से लाला हरदयाल तथा जर्मन राजदूत वान त्रिङ्कन का भेजा हुआ था।

कोमाता गारु

कनाडा में बहुत से सिक्ख रहते थे। कनाडा सरकार ने एक कानून बनाया जो सिक्खों के विरुद्ध पड़ता था। उसके निराकरण के लिये पंजाब से बाबा गुरुदत्तासिह ने सिक्खों के एक दल के साथ कनाडा जाने का विचार किया। उन्होंने हाँगकाँग के 'कोमाता गारु' नाम का एक जहाज भाड़े पर लिया और शंघाई तथा याकोहामा के बहुत से भारतीय यात्री लेकर सन् १९१४ को वैंकोवर पहुंचे वहाँ अधिकारियों ने उन्हें उतरने नहीं दिया।

फलतः यात्रियों तथा पुलिस में मुठभेड़ हुई। पुलिस ने सिक्खों को मार भगाया। इससे उनमें भयकर असन्तोष हुआ जिस समय वह जहाज़ लौट रहा था, उस समय जर्मन युद्ध छिड़ चुका था। सरकार ने उन्हें अपने आधीनस्थ बन्दरगाहों में उतरने नहीं दिया। अन्त में वह जहाज़ कलकत्ते के बजबज नाम के बन्दरगाह पर पहुंचा। सरकार चाहती थी कि वे लोग तुरन्त स्पेशल ट्रेन से पंजाब चले जायं, किन्तु वे लोग इस पर राज़ी

नहीं हुये। दोनों ओर से गरमा गरमी हुई अन्त में दोनों ओर से गोली वर्षा होने लगी। इस घटना के कारण विदेशों से लौटे हुये सिक्खों में तीव्र असन्तोष का संचार हुआ। कनाडा, अमेरिका हाँगकांग फिलिपाइन, जापान और चीन से बहुत से भारतवासियों ने आकर इस षड़यंत्र में योग दिया।

इन सब षड़यंत्रों के अतिरिक्त भारत के कोने २ में इस बिद्रोह की चर्चा फैल चुकी थी, जैसे कि उस समय, बिहार उड़ीसा, बनारस, मद्रास, यू० पी, वर्मा आदि के षड़यंत्रों से (जो बाद में प्रगट हुये) ज्ञात होता है।

षड़यंत्र का अवसर

अब तक उपरोक्त घटनाओं से यह सिद्ध होता है कि भारत विप्लववादी शक्तियों की सहायता से सरकार को नष्ट कर देने की चेष्टा में था। इसके दबाने के लिये सरकार ने कई कानून 'डिफेन्स आफ इण्डिया एक्ट' आदि बनाये, जिसमें सरकार कुछ हद तक सफ़ल रही, किन्तु जर्मन युद्ध के समय षड़यंत्रकारियों ने सिर नहीं उठाया, उसका कारण सरकार के कानूनों का भय नहीं था बल्कि उस समय भारत सरकार के मदद में तल्लीन था और काँग्रेस भी सरकार के पक्ष में थी, इसलिये षड़यंत्रकारियों को क्राँति करने की हिम्मत नहीं पड़ी।

जर्मन युद्ध के बाद सरकार ने क्रान्तिकारियों को समूल नष्ट कर देने के लिये एसेम्बली में एक 'रौलेटबिल' पेश किया। येही समय बिप्लववादियों और सरकार के बीच युद्ध हो जाने का था, किन्तु जैसे बंग भंग के समय बूढ़े दादा भाई नौरोजी ने

इनको गरम-नरम नीति से शान्त किया वैसे ही इस रौलेट एक्ट के समय महात्मा गाँधी सरकार के कर्णधार हो गये।

डिफेन्स आफ इंण्डिया एक्ट के पास होने पर उसके आश्रय से जो कानून बनाये गए, उनसे विप्लवकारियों के कार्य में बाधाएँ डाली गईं जिससे विप्लवकारी जुरमों में बहुत कमी हो गई। रौलेट कमेटी ने इस कानून के अच्छे असर से यह परिणाम निकाला कि साधारण कानून को सदा के लिये पुष्ट करने की आवश्यकता है, इसलिये सरकार ने दो कानून उसी साल बनाने का निश्चय किया। एक कानून अस्थायी था जिसका प्रयोग आवश्यकतानुसार संधि के ६ माह के बाद की स्थिति में किया जाना निश्चय किया गया था। यह कह देना उचित है कि यदि यह कानून न बनाया जाता तो सरकार को बहुत से भयंकर विप्लवकारियों को तत्पर छोड़ देना पड़ता, और विश्वास किया जाता था कि ये लोग अपने कामों को करने के लिये अवसर देख रहे हैं। इसलिये पहिला कानून बनाया कि बिप्लवकारियों का बिचार ३ हाईकोर्ट जजों के सामने शीघ्रता से किया जावे और उसकी अपील न हो सके। यह कार्रवाइ तभी की जा सकती है जब गवरनर जनरल को यह विश्वास हो जाया कि राजद्रोही जुर्म होने वाले हैं। जब गवरनर जनरल को यह विश्वास हो जाय कि ऐसा आंदोलन हो रहा है, जिससे राज्य में क्रान्तिकारक अपराध अधिकता से होंगे तब और अधिकारों का भी प्रयोग किया जा सकता है। ऐसे क्षेत्र में जहाँ ये बातें पाई जाएं स्थानीय सरकार को अधिकार है कि वह ऐसे जुर्म करने वाले लोगों से जमानत

माँगे या उनको किसी निश्चित स्थान में रहने का हुक्म दें अथवा किसी विशेष कार्य को करने से रोक दें। इस बात के निश्चित करने के लिये सरकार अपना अधिकार अनुचित रीति से प्रयोग न करे। यह कहा गया कि एक बिचार करने वाली कमेटी बनाई जाय जो उस साक्षी की जाँच करे जिसके आधार पर हुक्म दिया जायगा, इत्यादि बातें पहिले अस्थायी कानून का बिषय थी।

दूसरे रौलेट बिल का यह उद्देश्य था कि देश के कानून में सदा के लिये एक परिवर्तन करे। कोई राजद्रोही लेख किसी के पास छापने या बितरित करने के नियत से होने पर उसको कारागार का दण्ड दिया जा सकता है। ज़िला मैजिस्ट्रेट कुछ जुर्मों की जाँच पुलिस से करवा सकते हैं। जिनकी बाबत बिना स्थानीय सरकार की स्वीकृति के मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। जिसे राजद्रोह के कारण सज़ा हो अदालत उसको छूटने के बाद दो वर्ष के लिये नेकचलनी की ज़मानत देने का भी हुक्म दे सकती है।

इन सब बातों से सिद्ध होता है कि सरकार असहयोग आन्दोलन के पूर्व बड़ी कठिनाई में थी। जिसके निराकरण का कोई अचूक उपाय दृष्टिगोचर नहीं होता था, क्योंकि, खिलाफत का प्रश्न, युद्ध से लौटे हुये सिपाही, आर्थिक संकट तथा षड्यंत्रकारी लोग सरकार को उलट देने पर तत्पर थे। और इन कठिनाइयों से बचने के लिए सरकार ने जो कानून उस वक्त बनाये थे। उन कानूनों से कठिनाइयों में कमी होने के बजाय और बढ़ जाने की सम्भावना थी।

विरोध दमन का प्रयत्न

क्रान्तिकारी, खिलाफत, अर्थिक संकट तथा युद्ध से लौटे हुए सैनिकों की अंग्रेज विरोधिनी प्रगति को रोकने के लिये अंगरेजों ने साम, दाम, दण्ड और भेद नीति का आश्रय लिया। साम तथा दाम नीति के अन्तर्गत उन्होंने सन् १९१९ का इण्डिया एक्ट पेश किया, और स्वय बादशाह से इसकी घोषणा करवाई, ताकि भारतीय जनता प्रसन्न हो जाय, और क्रान्तिकारी तथा सुधार बादी नेता कॉंगरेसमैन इस एक्ट के जाल में फंस जाँय। दण्ड नीति के अन्तर्गत रौलेट एक्ट पास किया। भेद नीति के अन्तर्गत खिलाफ़त का प्रश्न उत्पन्न कर दिया, जिससे हिन्दू मुसल्मान दो प्रधान जातियों को अलग करने का मौका मिल जाय। गाँधी जी ने अंगरेज़ों के इन चारों नीतियों का सचमुच उत्तर अपने सात्विक नीतियों से ऐसा दिया कि अंगरेजों की वह चाल निष्फल सिद्ध हुई।

साम तथा दाम नीति

अंगरेज़ों ने हिन्दोस्तानियों को खुश करने तथा प्रगतिशील सुधारकों को वैधानिक जाल में जाने के लिये सन् १९१९ का सुधार दिया। सम्राट ने २ अगस्त १९१९ ई० में अमृतसर कॉंग्रेस अधिवेशन के पहिले ही साम, दाम नीति के अनुसार इस सुधार की घोषणा किया।

गाँधी द्वारा निराकरण

अंगरेज़ों ने इस घोषणा को भारत में अपने साम-दाम नीति की सफलता का साधन समझा। गाँधी जी ने अपने एक ही पत्र

द्वारा इनके साम के जादू का असर उड़ा दिया।

सन् १९२० ई० में 'भारत में प्रत्येक अङ्गरेज़ के नाम खुली चिट्ठी' लिखते हुये महात्मा जी लिखते हैं "लगातार तीस साल से मैंने अङ्गरेजी सरकार की जो सहायता की है, वैसा किसी भारतवासी ने नहीं की है। और ऐसी परिस्थिति में मैंने सहायता की है कि मेरे बजाय उस परिस्थिति में अगर कोई दूसरा मनुष्य होता तो ब्रिटिश सरकार का बाग़ी हो जाता। मेरे इस कथन पर आप लोग विश्वास करें कि उक्त सहायता मैं इसलिये नहीं करता था कि मैं अङ्गरेजी सरकार से डरता हूँ, या कोई और निजी स्वार्थ रखता हूँ, बल्कि मैं जान बूझ कर इस उद्देश्य से सहायता करता था कि अङ्गरेजी राज्य से भारत को लाभ है। साम्राज्य की रक्षा के लिए चार बार मैं अपने जीवन को संकट में डाल चुका हूँ। पहिला बुअर युद्ध, दूसरा जूलू युद्ध, तीसरा गत जर्मन युद्ध के आरंभ में 'एम्बुलेंस कोर' के संगठित करने में मुझे इतना परिश्रम करना पड़ा कि मुझे एक भयंकर रोग का शिकार बनना पड़ा। चौथा दिल्ली के युद्ध कान्फ्रेंस में वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड से सहायता दिलाने का बचन देने के कारण मैंने खैरा प्रान्त में इतने जोरों से लोगों को युद्ध में लड़ने जाने के लिये उत्साहित किया कि मुझे पुनः अन्य भयंकर तथा साङ्घातिक रोग ने ग्रस लिया, जिसमें मेरे जीने की कोई आशा न थी। अभी गत दिसम्बर में खिलाफत वालों और पंजाबियों को सरकार से सहयोग करने के लिये मैंने ही उत्साहित किया था" (२७ अक्टूबर १९२० के यंग इंडिया से उद्धृत)।

गाँधी जी के उपरोक्त पत्र का दोहरा अर्थ हुआ। इस पत्र द्वारा गाँधी जी ने अङ्गरेज़ों को यह संकेत किया कि अब तक मैं आपका अकाट्य राजभक्त था। किन्तु मैं आपके इस दण्ड नीति का हृदय से विरोधी हूँ। मेरे विरोध का स्पष्ट अर्थ यह होगा कि भारत में अब आपका कोई हार्दिक राजभक्त न रह जायगा। जनता ने इस पत्र का यह अर्थ समझा कि अङ्गरेज़ों की राज-भक्ति से कोई लाभ नहीं। अंग्रेजों की कुटिल नीति और स्वार्थ के विरुद्ध भावनायें बनने में इस पत्र ने आशातीत प्रभाव डाला। इस तरह इनके सम्मोहक सामनीति का परदा फट गया।

सम्राट द्वारा शासन सुधार की घोषणा से जो कुछ प्रभाव भारतीयों पर पड़ा, उसके लिये गाँधी जी ने कहा कि यह केवल जाल है। इस सुधार की जगह अगर बलिदान करने पर भारत तैयार हो जाय तो मैं भारत में एक साल में स्वराज्य स्थापित करा दूं। जनता ने गाँधी की ओर मुँह कर दिया और इनके आज्ञाओं की प्रतीक्षा करने लगी। इस प्रकार से अंगरेजों की दाम-नीति असफल सिद्ध हुई। अगरेजों की दाम-नीति की सफलता (फँसाने वाली नीति) सन् १९१८ तक के अङ्गरेजी छाप कांग्रेस से होती थी। उसको गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन के आँचने गला कर गाँधी छाप कर दिया। काँग्रेस को गाँधी जी ने अपने हाथ में ले कर ऐसा परिवर्तित कर दिया जैसा कि निम्नाँकित शब्दों से गट है। अब यह कांग्रेस भट्टी के नीचे की आग है, जिसमें दासता, गुलामी और आडम्बर के प्राचीन विचार उबाले जाकर आत्म निर्भरता और आत्मानुभूति का सत निकाला जाता है। कांग्रेस

एक भारी पहनावे के तहों में रक्खी हुई कस्तूरी का कण है जो अपनी सुरम्य सुगंधि को समस्त कपड़ों में परिव्याप्त रखती है। काँग्रेस बिजली का डाइनमो है जो हवा और पेट्रोल के मिश्रण को स्फोटित करने वाली लुत्ती उत्पन्न करती है और भारतीय राष्ट्रीयता के मशीन को चलित करती है। एक शब्द में काँग्रेस वट का बीज है जो समय पाकर अंकुरित होता है और भावी वृक्ष के रूप में हो जाता है जहाँ पशु और पक्षियों को समान रूप से आश्रय मिलता है। काँग्रेस एक राजनैतिक दल नहीं है जिसका काम कुछ शिकायतों के लिये आवाज उठाना है। और न सामाजिक सुधार का संगठन है जिसका उद्देश्य समाज के रीति रिवाजों को परिवर्त्तन करना है, और न यह आर्थिक पुनर्रचना संघ है जिसका उद्देश्य खपत के लिये बड़े पैमाने पर उत्पादन कराना है, और न यह कोई मजहबी जमैयत है जिसका लक्ष्य लोगों में एक ईश्वर के प्रति विश्वास स्थापित कराना और उस ईश्वर की आराधना सत्य रूप में कराना है।

अब काँग्रेस यह सब कुछ है, और उससे अधिक भी, यह राष्ट्रीय शक्तियों का सर्वाङ्ग और व्यापक संगठन है जो अपने संयुक्त प्रयत्न द्वारा भारतीय संस्कृति को पुनः खोजने और पुनः अखण्ड बनाने की इच्छा रखते हैं। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये भारत को विदेशी शासन हटाना पड़ेगा। सामाजिक ढांचे का पुनरनिर्माण करना पड़ेगा। आर्थिक प्रगति को व्यवस्थित करना होगा। सत्य और अहिंसा के उच्च आसन पर मानवता के एक देव की, त्याग और सेवा से पूजा किये जाने वाले एक नये

धर्म, देशभक्ति के धर्म की स्थापना करनी होगी।"

दण्ड नीति

युद्ध का अन्त होते ही, सुलह के शर्तनामा लिखने वाली कलम की स्याही सूखने भी न पाई थी कि अंग्रेज़ों ने अपने दण्ड नीति को सफल बनाने के लिए पुलिस के 'अख्तियारात बहुत बढ़ा दिए। क्रान्तिकारी, विप्लवकारियों को गिरफ्तार कराना, और सज़ा देना शुरू किया। राजद्रोही कार्य्यों के लिए नज़रबन्दी, ज़ब्ती और जुर्माना का नंगा नाच देश में होने लगा। केवल क्रान्तिकारियों को ही सज़ा देने के लिए एक अलग कोर्ट खोला गया जिसके निर्णय की कोई अपील नहीं थी। इसी गरम वातावरण में रौलट बिल, देश के विरोध के विरुद्ध कानून बना दिया गया।

रौलट बिल से सरकार का इरादा राजनीतिक आन्दोलन को कुचलने का था। कानून की किताब में १२४ दफ़ा राजद्रोह का दफ़ा है। उसमें रौलट बिल के अनुसार इतना और बढ़ाया गया कि जिसके पास राजद्रोहात्मक काग़ज़ पत्र भी पाये जायेंगे, वह भी राजद्रोह के कानून के फन्दे में आजायगा। एक कानून यह भी जोड़ा गया कि राजद्रोह में जिसे सज़ा मिल चुकी हो, उसके पास अपनी इच्छा से बैठने वाला भी अपराधी समझा जायगा। इसी तरह के और भी कई कानून ऐसे बढ़ाये गये जिससे पुलिस जब जिसे चाहती तंगकर सकती थी, और कानून की हद के अन्दर घसीट के सज़ा दिला सकती थी। यही सब सोचकर कौंसिल के गैर सरकारी मेम्बरों ने इस बिल का विरोध किया। मेम्बरों में नरम गरम दोनों थे। सरकार की ओर से कहा

गया कि यह बिल सिर्फ तीन साल के लिए है। और यह भी आशा दिलाई गई कि बिल सिर्फ कानून की किताबों में ही लिखा रहेगा, उसे कभी काम में लाने की ज़रूरत न पड़ेगी। लेकिन सरकार इसके पहिले अपने कई वादे तोड़ चुकी थी। इसलिए हिन्दोस्तानियों ने सरकार की बातों पर विश्वास नहीं किया।

हिन्दोस्तान अगर रौलट बिल को मंजूर कर लेता या डर कर चुप रह जाता तो यह उसके लिये बड़ी नामर्दी की बात होती। ऐसा समझा जाता कि देश भर में एक भी मर्द नहीं है। रौलट बिल पास करके अंग्रेजों ने भारत की शक्ति अथवा बल की नाड़ी टटोली थी।

दण्ड नीति का सात्विक विरोध

गांधी जी ने इस नीति का उचित उत्तर दिया कि सरकार को चेतावनी दी गई कि जब तक वह रौलट बिल को रद न करेगी तब तक उसके दूसरे कानून तोड़े जाँयगे। पहिली मार्च १९१९ को गाँधी जी, बी. जी. पटेल आदि कई पुरुषों और श्रीमती गाँधी आदि कुछ स्त्रियों के हस्ताक्षर से नीचे लिखा प्रतिज्ञा पत्र प्रकाशित किया गया।

"हमारी समझ में रौलट बिल न्याय विरुद्ध स्वाधीनता और न्याय्यता के सिद्धान्त के विरुद्ध है और उन मनुष्यों के जन्म सिद्ध अधिकारों का खून करने वाले हैं, जिन पर समस्त जन समाज और खुद सरकार की रक्षा निर्भर करती है। इसलिये हम प्रतिज्ञा करते हैं कि यदि ये बिल कानून बन जाँयगे तो जब तक वे रद्द न किये जाँयगे। उन्हें हम न मानेंगे और उन कानूनों को भी

न मानेंगे, जिन कानूनों का न मानना इसके बाद नियुक्त होने वाली हमारी कमेटी द्वारा उचित समझा जायगा। इसके साथ हम यह भी प्रतिज्ञा करते हैं कि हम सच्चाई के साथ सत्य का ही अनुसरण करेंगे और किसी के जान या माल पर हाथ नहीं डालेंगे।

गांधी जी की प्रतिज्ञा सुनकर लार्ड चेम्सफोर्ड ने उन्हें मिलने के लिये बुलाया। आपस में समझौते की बहुत सी बातें हुईं। लेकिन कुछ ठीक ठाक न हुआ। गाँधी जी ने बम्बई लौट कर सत्याग्रह का अस्त्र बड़े ज़ोर से उठाया।

उन्होंने कहा—सरकार को फिर से दोबारा चेतावनी दिया कि—सरकार को लोकमत का सम्मान करना चाहिये। लोकमत के विरुद्ध कोई राजा एक दिन भी राज्य नहीं कर सकता। यही सिद्ध करना मैंने अपने जीवन का प्रधान कार्य्य समझ लिया है।

गाँधी जी के इशारा की आवश्यकता थी, सारे भारत में एक महीने में ही सत्याग्रह कमेटियाँ तैयार हो गईं। गाँधी जी ने पहला प्रेस एक्ट कानून तोड़ा भी। लेकिन सरकार सन्नाटे में रही। ६ अप्रेल १९१९ को मातम का दिन मनाया गया। ऐसा दिन हिन्दोस्तान के इतिहास में कभी नहीं आया। इस दिन हिन्दोस्तान के सब प्रसिद्ध शहरों में और गांवों तक में भी सब कारबार बन्द रहे। लोगों ने उपवास किया। मन्दिरों और मस्जिदों में प्रार्थनायें हुईं। हिन्दू और मुसलमान दोनों इस मातम में जी जान से शामिल हुये। ६ अप्रेल को देखकर भारत सरकार के कान खड़े होगये। वह अपने क्रोध को काबू में न रख

सकी। उसने अपने खिलाफ कभी ऐसे दिन स्वप्न में भी नहीं देखा था। बस अपनी हूकूमत शाही की शान की रक्षा के लिये येन केन प्रकारेण दण्ड पर उतारू हो गई।

दण्ड पर उतारू सरकार

नाड़ी ज्ञान का दण्ड

दोनों ओर से 'गांधी जी और सरकार—एक दूसरे का नब्ज टटोलने वाली क्रियाएँ की गई। गाँधी जी ने कानून भंग करके यह जानना चाहा कि सरकार दण्ड के लिये किस हद तक तैयार है। और इसके विरुद्ध सरकार ने गोलियां चलाकर यह बतलाया कि कानून की तनिक भी अवज्ञा असहनीय होगी। हलका युद्ध छिड़ गया। गांधी जी ने ७ अप्रेल को जब्त की हुई पुस्तकें बेच कर प्रेस एक्ट का गर्व चूर्ण कर दिया। ८ अप्रेल को अहमदाबाद में भी वैसी ही पुस्तकें बेची गईं। सरकार टुक टुक दीदम, दम न कशीदम (टुक टुक) देखती रही। गांधी जी पंजाब के लिये रवाना हुये। सरकार ने वहां जाने से रोका, नहीं माने, गिरफ्तार किया और बम्बई लाकर छोड़ दिया। गांधी जी की गिरफ्तारी सुनकर दिल्ली में हड़ताल होगई। कलकत्ता, लाहौर, बम्बई, अमृतसर अहमदाबाद में भी हड़ताल हुई। सरकार ने लाहौर और अमृतसर में गोलियां चलाईं। बहुत से मरे और बहुत से घायल हुये। अहमदाबाद में गालियाँ चली।

दण्ड का नग्न चित्र

जलियान वाला बाग़

अमृतसर स्थित जलियान वाला एक बाग़ है। जो चारों तरफ ऊँची दीवारों से घिरा हुआ है दीवार के चारों तरफ लोगों के मकानात हैं। भीतर जाने के लिये केवल एक ओर वह भी बहुत छोटा रास्ता है। १३ अप्रेल को उस बाग में २०००० जनता की एक सभा हुई। उस समय जनरल डायर १०० हिन्दोस्तानी और ५० अंग्रेज सिपाहियों को लेकर सभा में आ गया। और गोली चलाने का हुक्म दे दिया। कहा जाता है कि १६०० राउन्ड गोली चलाई गई। जनरल डायर ने अपने बयान में कहा "मैंने पहिले ही डुग्गी पिटवा दी थी कि शहर में कोई भी सभा नहीं हो सकती। फिर भी लोगों ने मेरी आज्ञा का उल्लङ्घन किया। इसके लिये उनको सबक सिखा देना चाहता था, जिसके बाद वे मेरे ऊपर हँस न सकें। मैं गोली चलाता ही जाता, लेकिन मैं मजबूर हो गया। मेरे पास गोलियाँ रह ही नहीं गईं। मैं अपने साथ आर्मडकार भी ले गया था, लेकिन उसे पीछे से छोड़ देना पड़ा।"

अमृतसर में पानी और बिजली के कनक्शन काट दिये गये। चौराहों पर सरे आम कोड़ों से पिटवाया गया। लोगों को पेट के बल रेंगवाया गया। तीसरे दरजे का रेलवे का टिकट बन्द कर दिया गया। दो आदमियों का साथ चलना बन्द हो गया। सब की साइकिलें छीन ली गईं। जबरदस्ती दूकानें खुलवाई

गईं। गाड़ियाँ जब्त कर ली गईं। शहर भर में कोड़ा मारने के लिये टिकटियाँ बनवाई गई और मार्शल ला कमीशन के सामने पेश करके फाँसी, काला पानी, कम से कम दस साल की सजायें दी गईं।

कसूर, रावलपिण्डी आदि स्थानों पर कर्नल जान्सन, वासवेल स्मिथ, कर्नल औब्रायन तथा दूसरे अफ़सरों ने जघन्य अत्याचार किये। लाहौर में मार्शल-ला बड़ी कड़ाई से वर्त्ता गया। ८ बजे रात को बाहर निकलने पर गोली मारी जा सकती थी। कोड़े बरसाये जा सकते थे। दूकान न खोलने पर गोली मारी जा सकती थी। दूकानों का माल लूट लेना और लुटा देना, आये दिन हर रोज की चीज़ हो गई। मोटर साइकिल और अन्य सवारियाँ छीन ली गईं। बिजली का कनेक्शन काट दिया गया। वकीलों प्रोफेसरों और दूसरे शिक्षित औसत दर्जे के लोगों को क्रान्तिकारी होने के भय से सजायें दी गईं।

गुजरान वाला में बमों की बर्षा की गई और मशीन गन चलाई गई। लेफ्टिनेंट डाडकिन्स ने किसानों पर हवाई जहाज़ से गोली चलाई। मेजर कार्बी ने अपने बयान में बताया कि "भीड़ भागी जा रही थी, उसको तितर बितर करने के लिये मैंने गोली चलाई। जब भीड़ छँट गई तब मैंने गाँव पर ही मशीन गन द्वारा गोला बारी करना शुरू कर दी। मेरा अनुमान है कि कुछ घरों में गोलियां लगी होगीं। मैं दोषी निर्दोषी का भेद नहीं कर सकता था। मैं केवल २०० फीट ऊपर था और आसानी से जो कुछ कह रहा था देख सकता था। गोली इसलिये नहीं चलाई

गई कि नुकसान न हो, गोली तो गाँव वालों को भलाई के लिये चलाई गई थी।"

कसूर—में भी अत्याचार कम नहीं हुआ। आम जगहों में फाँसी के अड्डे बनाये गये। जिससे कि लोग डर जांय। रेलवे के पास लोहे का पिंजड़ा बनवाया गया जिसमें एक साथ १५० आदमी बन्द किए जा सकते थे। यह पिंजड़ा जनता के सामने नुमायश के लिये आदमियों को भर कर रक्खा जाता था। खुले आम कोड़े लगवाए जाते थे।

शेखूपूरा—में इन सब अत्याचारों के साथ ही एक और भी विशेष बात हुई। यहाँ छोटे२ निरपराध बच्चों को भी नहीं छोड़ा गया। बच्चोंयह कहने के लिये मजबूर किया जाता था कि मैंने कोई जुर्म नहीं किया। मैं कोई जुर्म नहीं करूँगा। मुझे पछतावा है। पंजाब के बाहर इसी समय अहमदाबाद, वीरगाँव, नदियाद, कलकत्ता आदि स्थानों में बेचैनी फैली थी। करीब करीब इन सब जगहों में जनता और पुलिस से मुठभेड़ हुई। जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप पुलिस और फौज ने भीषण, निर्दय, नृशंस और नीचता पूर्ण ढँग धारणकिया। जनता की हिंसात्मक भावना देख कर अपने प्रतिज्ञा पत्रके अनुसार सत्याग्रह बन्द कर दिया। सरकार की ओर से जाँचके लिए हण्टर कमेटी नियुक्त हुई। हण्टर कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित हुई। सारा देश विक्षुब्ध हो उठा। सरकार ने मान ली कि मार्शल ला ठीक था। और जेनरल डायर ने अपनी ड्यूटी की हालाँ कि उसने ज़रूरत से ज्यादा सख्ती की। दोनों साफ़ छोड़ दिए गये।

पहिले समझदार हिन्दोस्तानियों को आशा थी कि विलायत की पार्लियामेंट इस मामले में न्याय करेगी। लेकिन उसमें भी मार्शल ला जारी करने वाली हिन्दोस्तानी सरकार की ही तूती बोली। इससे हिन्दोस्तान के दिल पर एक बड़ी चोट लगी। मुसलमान तो इस पर इतने उत्तेजित हुये कि लगभग १८०० आदमी भारत छोड़कर अफगानिस्तान जाने के लिये तैयार हो गए।

गांधी राज्य की संस्थापना

असहयोग आन्दोलन

अँग्रेजों के इस उद्दण्ड दण्ड नीति के उत्तर में अकेले गांधी जी ने उनसे भारत का शासन छीन लिया और गांधी राज्य स्थापित किया। राज्य संस्थापन का अर्थ है कि इसके बाद दो तीन साल तक जो कुछ गाँधी जी हुक्म देते थे सारा भारत उसी को प्रसन्नता पूर्वक शिरोधार्य्य करता और अक्षरशः पालन करता था। अँग्रेजी राज्य समाप्त हो गया और प्रजा उनकी आज्ञाओं का खुल्लम खुल्ला निर्भीक उल्लंघन करती रही। अकेले गाँधी का अर्थ है कि शुरू में इस काम में उनका कोई साथी नहीं था। काँग्रेस भी उन नेताओं के हाथ में थी जो अँग्रेजों की दाम नीति के जाल में नाक तक डूबे हुए थे। गाँधी जी का विरोध करते थे। किन्तु सबके सब गाँधी जी के सामने निस्तेज हो गये। और मजबूरन काँग्रेस की सम्पूर्ण बागडोर उनके

हाथ में सौंप कर अँग्रेजी छाप काँग्रेस से अलग होने विवश हुये।

अब से ६० बरस पूर्व ही अवस्था स्पष्ट रूप से प्रगट कर गई थी कि जिसकी उपस्थिति पर भारत अंग्रेजों से स्वतंत्रता कर सकता है और जो गांधी जी के अहिंसात्मक असहयोग कारण सम्पूर्ण अंशों में भारत में आ उपस्थित हुई। डा० सरजान सिली एंगलैंड के उच्चकोटिके इतिहासवेत्ता हैं। वे इस विषय पर Expansion of England नामक अपनी पुस्तक में लिखकर अंगरेजों को चेतावनी देदी थी कि "भारत में राष्ट्रीयता का कोई वैसा आन्दोलन उठ खड़ा हो जैसा कि हम इटली में देख चुके हैं तो अंगरेजी राज्य उतना भी सामना नहीं कर सकती जितना आस्ट्रिया ने इटली में किया था। बल्कि तुरन्त उसका अन्त हो जायगा। कारण यह कि उस इंगलैंड के पास कौन सा साधन २५ करोड़ प्रजा का सामना करने के लिये हो सकता है। जो एक सैनिक राज्य भी नहीं है। क्या आप कहेंगे कि जैसे हमने उन्हें पहिले जीता था; वैसे ही फिर जीत सकते हैं। परन्तु मैं सिद्ध कर चुका हूँ कि हमने उन्हें जीता नहीं था। मैंने आपको दिखा दिया है कि जिन सेनाओं से विजय प्राप्त हुई है, उनमें पाँच में चार भाग देशी सैनिक थे। भारत में लड़ने के लिए उन देशी सिपाहियों को हम नौकर रख सके। इसका यही कारण था कि राष्ट्रीयता का भाव उनमें विद्यमान नहीं था, अब यदि वहाँ थोड़ा भी राष्ट्रीयता का भाव पैदा हो जाय—यदि यह भाव विदेशियों को देश से बाहर खदेड़ देने की प्रबल अभिलाषा न पैदा कर केवल,

यही विचार पैदा कर दे कि उन्हें उनका राज्य बनाये रखने में मदद देना शर्म की बात है—तो प्रायः उसी दिन से हमारा साम्राज्य न रह जायगा। क्योंकि वहाँ जो सेना रक्खी गई है उसका दो तिहाई देशी सिपाहियों का है। (पृष्ट ९३-९४)

इसके पश्चात् ९९ पृष्ठ पर लिखते हैं—"अब मैंने यह कहा कि यदि हमारे देशी सैनिक बलवा करदें, या बलवे से भी कम असन्तोष प्रगट करें तो वह हमारे साम्राज्य के लिये तुरन्त नाशक सिद्ध होगा। इससे आप के दिल में यह बात उठ सकती है कि ऐसा बलवा तो १८५७ ई० में भी हुआ था, किन्तु तो भी हमारा साम्राज्य अभी तक फूला फला है। परन्तु आपको ध्यान रखना चाहिये कि मैंने ऐसे बलवे की बात कही थी, जो जनता में राष्ट्रीयता का आन्दोलन फैलने के कारण पैदा हो। और अन्त में वह सेना तक फैल जाय। १८५७ का बलवा इस तरह का नहीं था।"

इसके बाद पृष्ठ १०२ पर लिखते हैं—"आपने देख लिया कि १८५७ का बलवा बहुत करके भारत की जातियों को एक दूसरे के विरुद्ध लड़ाकर दबाया गया। जब तक ऐसा किया जा सकता है। और जब तक जनता में अपनी सरकार की समालोचना करने और उसके विरुद्ध बलवा करने का स्वभाव नहीं पैदा होगा। तब तक इंगलैंड से भारत का शासन होना सम्भव है और इसमें कोई अलौकिक बात नहीं है। परन्तु जैसा मैंने कहा है कि यदि यह अवस्था बदल जाय, यदि किसी उपाय से जनता में ऐक्य पैदा होकर वह एक राष्ट्र बन जाय और

हमारा उसका थोड़े ही अंश में उसके समान सम्बन्ध हो जाय जो आस्ट्रिया का इटली के साथ था तो मैं यह नहीं कह सकता हूँ कि हमें अपने शासन के लिये भय करना प्रारम्भ करना चाहिये। मैं तो यह कहता हूँ कि तब हमें उसके लिये आशा ही करना छोड़ देना चाहिये!

पृष्ठ १०३, १०४ पर लिखते हैं "किन्तु इसके विरुद्ध यदि ऐसा भाव कभी पैदा हो जाय और भारत एक राष्ट्र के समान साँस लेने लगे—और यह सम्भव करने के लिये कदाचित हमारा शासन पहिले के अन्य सब शासनों से अधिक काम कर रहा है—तब निराश के कारण पैदा होने वाले बलवे की आवश्यकता न होगी। चाहे उसके लिये कारण भी हो। कारण यह कि उस अवस्था में राष्ट्रीयता का वह भाव देशी सैनिकों में ी फैल जायगा और देशी सेना ही हमारा अन्तिम आधार है। १८५७ का बलवा यद्यपि भयंकर था, किन्तु हम उसे दबा सके थे। क्योंकि वह सेना के एक ही भाग में फैला था। और जनता ने क्रियात्मक रूप से उसके साथ सहानुभूति नहीं दिखाई। और क्योंकि ऐसी भारतीय जातियों को मिलाना सम्भव था। जो हमारे पक्ष में होकर लड़ना चाहती थी। किन्तु जिस क्षण बलवे की सम्भावना मात्र उपस्थित हो जो केवल बलवा न होगा बल्कि राष्ट्रीयता के सार्वजनिक भाव का प्रकाशन होगा। उसी क्षण हमारे साम्राज्य बनाये रखने की सर्व अभिलाषा का अन्त हो जाना चाहिये। कारण यह कि हम वास्तव में भारत को जीतने वाले नहीं हैं। और न विजयी की

भाँति उसका हम शासन कर सकते हैं । यदि हम बिजयी की भाँति उसका शासन करने चलें तो यह प्रश्न पूँछने की आवश्यकता नहीं है कि हमें सफलता होगी या नहीं। कारण यह कि वैसे शासन का प्रयत्न मात्र से, निश्चय ही आर्थिक दृष्टि से हम बर्बाद हो जाँयगे।"

आज से ६० बरस पहिले इंगलैंड के एक इतिहासवेत्ता को भी पता चल गया था कि भारतवासियों को स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये हथियार लेकर ग़दर करने की आवश्यकता न होगी। जिस समय जनता में राष्ट्रीयता का भाव फैल कर वह भारतीय सेना तक पहुंच जायगा उस समय वह आप ही स्वतंत्रता प्राप्त कर लेंगे । गाँधी जी द्वारा असहयोग आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य ऐसी ही राष्ट्रीयता द्वारा दासता से मुक्ति पाने और अपने राज्य स्थापन करने का है

अंग्रेज जाति, ज्ञान-बल-धन तीनों गुणों से युक्त है। इसको हटाने का कोई उपाय सिवाय असहयोग के नहीं है। इसीलिये गाँधी जी ने दुर्योधन के कमजोर जंघे पर ही गदा प्रहार किया, क्योंकि इसके अतिरिक्त शरीर का और सब अंग बज्र का है।

असहयोग ही क्यों

गाँधी जी में प्रत्येक निहित शक्तियों के होते हुये भी उन्होंने भारत को आजाद करने के लिये 'असहयोग ही का प्रयोग क्यों किया ?' इसका कारण है कि जैसा मर्ज वैसी औषधि, जैसा पात्र वैसा व्यवहार । पर्लियामेंट की माँ कहलाने वाली अंग्रेज़ी पार्लिया-मेंट एक बाँझ और वेश्या के बराबर है। ये दोनों शब्द कठोर

अवश्य हैं किन्तु मिसाल बिल्कुल ठीक है। इस पार्लियामेंट ने आज तक अपने मन से कोई अच्छा काम नहीं किया। इसलिये बाँझ है। उसका संगठन ही ऐसा हुआ है कि बिना बाहरी दबाव के वह कोई काम कर ही नहीं सकती। और चूँकि वह मंत्रियों के हुकूमत में रहती है जो बराबर बदला करते हैं इसलिये वह वेश्या है। ऐसी पार्लियामेंट को प्रार्थना पत्र और अर्ज़ियों के चाबुक की आवश्यकता न रहना चाहिये। लेकिन सच बात तो यह है कि सब लोग इन मेम्बरों को बेईमान और स्वार्थी समझते हैं। प्रत्येक सदस्य अपने ही मतलब की फिक्र में रहता है। सब काम डर से होता है। आज कोई बात तय हो जाय तो कल वह रद्द भी हो सकतो है। एक भी प्रमाण नहीं मिलेगा जिससे यह कहा जा सके कि फ़लाँ काम हमेशा के लिये तै हुआ है। जब भारत सम्बन्धी बड़े आवश्यक विषय पर बहस हो रही है। ऐसे समय में भी देखा गया है कि मेम्बर टाँगें फैला कर आराम करते हैं, या शराब की प्याले पर प्याले चढ़ाते हैं। कभी कभी मेम्बर इतना वाहियत बकते हैं कि सुनने वालों के नाक में दम आ जाता है। इसीलिये कार्लाइल ने इस पार्लियामेंट को 'संसार की बकवाद की दूकान' कहा है। मेंम्बर बिना सोचे समझे अपनी गुट की ओर से राय दे देता है। अगर कोई मेम्बर छठे छमास अपनी सच्ची राय दे देता है तो वह आवारा समझा जाता है। पार्लियामेंट क्या है? राष्ट्र का एक कीमती खिलौना है। एक मेम्बर ने इसी पार्लियामेंट के एक अधिवेशन में कहा था कि "कोई सच्चा ईसाई इसका मेम्बर हो नहीं सकता"। प्रधान मंत्री अपने गुट की

संख्या बढ़ाने ही में अपनी सारी शक्ति का उपयोग करता है। उसे पार्लियामेंट की भलाई की अपेक्षा अपने अधिकार का अधिक खयाल रहता है। यथार्थ में पार्लियामेंट का कोई मालिक नहीं।

इसीलिये अंग्रेज लोग अपने विचार बदलते रहते हैं। ऐसा कहा जाता है कि वे हर पाँचवें बरस विचार का काया कल्प करते रहते हैं। घड़ी के लटकन को तरह वे इधर उधर झोंका खाया करते हैं। कोई अच्छा बोलने वाला हुआ या भोज देने वाला हुआ तो लोग उसे ही अपना नेता मान लेते हैं। जैसे लोग है वैसे ही उनकी पार्लियामेंट है। लेकिन एक गुण उनमें खूब है।। वे अपने अथवा अपने आधीनस्थ मुल्क को कभी दूसरे के हाथ में नहीं जाने देंगे। गाँधी जी ने ऐसे ही स्वार्थी और अकर्मण्य बाँझ और वेश्या पार्लियामेंट की ज़ंजीर की गुरिया गुरिया को झकझोर देने के लिये असहयोग आन्दोलन ही उनके विरुद्ध उपयुक्त समझा।

गाँधी जी की आज्ञा

गाँधी जी ने २६ नवम्बर १९२० ई. को काशी जी में जो व्याख्यान के रूप में कहा था, वही शासक सम्बन्धी उनकी आज्ञा है।"हमारी सलतनत राक्षसी सलतनत है। हमारा फ़र्ज़ है कि इसको या तो दुरुस्त करें या मिटा दें; हमारी हालत बड़ी खराब है। आज तक हमने सिर्फ बातों से काम लिया है। अब हर एक स्त्री पुरुष का फ़र्ज है कि काम करे। आप लोग क्या कर सकते हैं। अगर आप लोग इस सलतनत को राक्षसी सलतनत नहीं समझते तो हम उसका कोई सुबूत नहीं दे सकते। हम इसको इतना बुरा समझते हैं कि इस

सलतनत को मिटा डालें या साफ बनावें। अगर इसने पश्चाताप नहीं किया। अगर पंजाब से न्याय नहीं किया। अगर खिलाफत से इन्साफ नहीं किया तो हम इसका साथ नहीं दे सकते। इसको हम लोग कैसे दुरुस्त कर सकते हैं। हमारी कांग्रेस, मुस्लिम लीग, सिक्ख लीग, सबों ने इसको दुरुस्त करने का तरीका बतला दिया है। यह तरीका असहयोग का है अर्थात न सरकार से मदद लें और न सरकार को मदद दें। पहिले खिताब को हम छोड़ दें। हमारे लिये खिताब हराम है। फिर हमें अदालतें छोड़नी चाहिये। वकीलों को वकालत छोड़ देनी चाहिए। अगर उनसे हो सके तो छोड़ने के बाद देश की सेवा करें। माँ बाप को चाहिए कि मदरसों से अपने सब लड़कों को हटा लें। उनसे कहना चाहिए कि तुम इनमें न पढ़ो। ऐसी जगह तुम्हें तालीम लेनी चाहिये जहाँ तुम आज़ाद रह सको।

जो कपड़ा यहाँ पैदा हो उसी को इस्तेमाल करना चाहिए। हमारी माताओं को अपने घरों में चरखा दाखिल करना चाहिए। जोलाहों से बुनवा कर कपड़े पहिनना चाहिए। खद्दर पहिनो। यही सब करना असहयोग है। तलवार मत खींचो, उसको म्यान में रक्खो। तलवार से हमारा ही गला कटेगा। हिन्दू मुसलमानों में ज़बान की नहीं हार्दिक एकता होनी चाहिये। अगर ऐसा हो तो एक साल में हम स्वराज्य की स्थापना कर सकते हैं।"

पक्षी और विपक्षी को चेतावनी

काँग्रेस में जब गांधी जी का असहयोग सम्बन्धी प्रस्ताव

एक हजार अधिक वोटों से पास हो गया तो गाँधी जी ने अपने पक्षी और विपक्षी दल वालों से जो कहा था वही उनकी ओर से सारे राष्ट्र को चेतावनी थी। अपने पक्ष वालों को चेतावनी इस प्रकार दी। "अत्यन्त विजय अत्यन्त नम्रता का समय होता है। हमारे पक्षवालों ने अपने कन्धों पर एक बड़ी भारी जवाबदेही ले ली है। जिस किसी ने मेरे प्रस्ताव के अनुकूल मत दिया है उसने यदि वह माता या पिता है तो अपने लड़कों को उन स्कूलों से जो सरकारी देख रेख में चलाये जाते हैं, हटा लेने के लिए अपने तईं निश्चय ही बाँध लिया है। जिस किसी वकीलों ने वोट दिया है, वह भी भरसक शीघ्र अपनी वकालत बन्द करने के लिये और खानगी पंचायतों द्वारा मुकदमों का निपटारा करने के लिए बाध्य है। कौंसिल के जिन जिन उम्मीदवारों ने वोट दिया है, वे अपनी उम्मीदवारी वापस करने के लिए बँध गये हैं। और ऐसा प्रत्येक मतदाता चुनाव के लिये मत न देने पर बाध्य है। प्रत्येक प्रतिनिधि जिसने प्रस्ताव के अनुकूल वोट दिया है अपने को हाथ से सूत कातने और कपड़ा बुनने के कार्य्य को उत्तेजना देने तथा स्वयं सिर्फ़ हाथ का बुना कपड़ा व्यवहार में लाने के लिये बांध लिया है। बहुमत के प्रत्येक व्यक्ति ने असहयोग के विषय में अहिंसात्मक त्याग और नियमबद्धता के सिद्धान्त को स्वीकार करके अपने तईं अल्प मत वालों के साथ आदर और शिष्टता पूर्वक बर्त्ताव करने के लिए बाध्य कर लिया है। हमें उनके साथ शारीरिक अथवा शाब्दिक उपद्रव न करना चाहिए। हमें अपने घने अभ्यास और नीति युक्त सन्मान्य उपायों के द्वारा उन्हें

अपने पक्ष में लाने का प्रयत्न करना चाहिए जिन लोगों ने अल्प-मत के अनुकूल मत दिए हैं वे या तो दुर्बल थे या तैयार नहीं थे। उदाहरण के लिए कुछ थोड़े से लोगों ने कहा है कि स्कूलों से अपने लड़कों को हटा लेना उचित नहीं, परन्तु ज्योंही वे देखेंगे कि स्कूल खाली हो रहे हैं, वकील लोग वकालत छोड़ रहे हैं, और फिर भी भूखों नहीं मर रहे हैं। और कम से कम राष्ट्रीय दल के लोग कौंसिलों को त्याग रहे हैं तब वही लोग इस कार्य-क्रम पर विश्वास करने लगेंगे, उनकी कमज़ोरी हटने लगेगी और वे स्वयं उसे ग्रहण करने लगेंगे। अतएव हमें अल्पमत वालों के लिये अधीर न होना चाहिये महज इस बात के लिये कि इनका हमारा मत राई रत्ती नहीं मिलता।"

अल्पमतवालों "(विपक्षी लोगों) से मैं निवेदन करूँगा कि वे इस सत-युद्ध में हार गये। यदि उनकी अन्तरात्मा न चाहती हो तो बात दूसरी है, वरना बड़े उत्साह के साथ उन्हें असहयोग के प्रोग्राम के अनुसार काम करने के लिये आगे बढ़ना चाहिए। जो यह ख्याल करते हैं कि बहुमत वालों ने बड़ी भारी ग़लती की है उन्हें बेशक अधिकार है कि वह बहुमत वालों के विचारों को अपने अनुकूल परिवर्तित करने का प्रयत्न आरम्भ करें। अधिकाँश अल्प मतवालों ने बड़ी दूर तक पंचायती अदालतें और राष्ट्रीय पाठशालायें स्थापित करने का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया है। सिर्फ कौंसिलों के वहिष्कार के विचार को आगे पर टालना चाहते थे। अब मैं उनसे निवेदन करता हूँ कि जब कि बहुमत से 'शीघ्र गति' के पक्ष में निर्णय हो चुका है तब उन्हें

इस फैसले को स्वीकार करना चाहिए और इस कार्य्यक्रम को सफल बनाने में सहायता देनी चाहिए।

अक्षरशः आज्ञा पालन

गाँधी जी के इस हुक्म के साथ भारत का सारा जनसमुदाय इनके पीछे पागल हो गया। भारत का कोना कोना, चप्पा चप्पा 'गाँधी जी की जय' के नारे से गूँज उठा। सारे भारत से अंग्रेजी राज्य का प्रभाव 'गधे के सिर से सींग' की भाँति उड़ गया। भारत में पूर्ण रूप से स्वराज्य स्थापित हो गया। गाँधी जी की आज्ञा की ही प्रतीक्षा उस समय भारत करता था। दो साल के लिए भारत में गाँधी राज्य हो गया था। उस समय के भारत पिता महामना मालवीय जी, भारत माता एनीबिसेन्ट ऐसे पूज्य नेता, सर तेज बहादुर सपरू, माननीय चिन्तामणि, केलकर, जयकर शीतलवाद, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी आदि उद्भट राजनीतिज्ञ तथा विद्वानों ने भरहीक विरोध किया, किन्तु वही हुआ जो जान बूझ कर पत्थर से सिर लड़ाने से होता है। गाँधी जी का प्रोग्राम दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगा, जादू हो गया। और विरोधी नतमस्तक और निस्तेज हो गये।

भारत के समक्ष नया कार्य क्रम आया। उसे नये प्रकार का नेता मिला था। इसलिए नये साहस और जोश के साथ जनता ने असहयोग आन्दोलन में भाग लिया। देश के पूरब पच्छिम उत्तर दक्खिन स्वतंत्रता की लहर दौड़ गई। 'एक साल में स्वराज्य मिलेगा' की आवाज हर कान में पहुंची अमीर, गरीब, हिन्दू मुसल्मान ने इस मंत्र का जाप किया।। सहस्रों विद्यार्थियों

ने सरकारी स्कूलों और कालेजों को खाली कर करा दिया। अँग्रेज़ी अध्यापकों और आचार्य्यों ने विद्यालयों को सदा के लिये तिलांजलि देदी, वकीलों ने वकालत छोड़ी। सरकारी अफ़सरों ने बड़े बड़े पदों से इस्तीफा दे दिया। विदेशी कपड़ों की होलिका जली और खद्दर का इस्तेमाल शुरू हुआ। जनता के रहन सहन में सादगी आई और सब को नवजीवन, नवपरिवर्त्तन और नये सरकार का अनुभव हुआ। म्युनिस्पिल बोर्ड, डिस्ट्रिक बोर्ड और कौंसिलों का वायकाट तो ऐसा हुआ कि निर्वाचन क्षेत्रों के लिये उम्मीदवार न मिले और जो मिले भी तो वह लुक छिप। वैलेट वाक्स बिल्कुल खाली गये। और चुने हुए मेम्बरों की दशा 'टोडी बच्चा हाय हाय' के कारण घर से बाहर निकलना मुश्किल हो गया।

सैकड़ों की संख्या में राष्ट्रीय विद्यालय खुले। कलकत्ते और पटने में नेशनल कालेज और विद्यापीठ, अलीगढ़ में नेशनल मुस्लिम युनिवर्सिटी, बंगाल में नेशनल युनिवर्सिटी, बनारस में काशीविद्यापीठ, गुजरात में गुजरात विद्यापीठ, महाराष्ट्र में तिलक विद्यापीठ, आन्ध्र प्रदेश में राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना हुई। इनके अतिरिक्त लगभग प्रत्येक बड़े शहरों में किसी न किसी प्रकार के राष्ट्रीय विद्यालय खुले। शिक्षा का माध्यम हिन्दोस्तानी था, कताई, बुनाई शिक्षा का अंग था। हिन्दुओं को इसलाम धर्म की भी शिक्षा दी जाती थी, और मुसलमान गीता का अध्ययन करते थे। दोनों सम्प्रदायों के लोग परस्पर एक दूसरे के धर्मों की इज्जत करने लगे। मन्दिरों में मुल्ला और हाफिजों ने भाषण दिये

और मस्जिदों में हिन्दू नेताओं ने व्याख्यान दिये। कट्टर आर्य समाजी, बाद में मुसलमानों द्वारा कत्ल किये जाने वाले स्वामी श्रद्धानन्द ने दिल्ली के जामा मस्जिद से तकरीर की और मुसलमानों ने उनका उचित सत्कार किया। जुलूसों में बन्देमातरम और अल्लाहो अकबर के नारे साथ ही साथ लगाये जाते थे।

सरकारी कचहरियों का सर्वांग वायकाट हुआ। गाँव गाँव पंचायतें स्थापित हुईं। और वहां के मुकदमें वहीं फैसल होने लगे। मुद्दई और मुद्दाअलेह दोनों ने पंचायती फैसले को खुशी २ स्वीकार किया, अपील की भावना ही उठ गई। शहरों में भी पंचायतों की धूम वैसी ही रही। इन पंचायती फैसलों की मान्यता और स्वीकृति से ही सिद्ध होता है कि अंग्रेजी सरकार की सत्ता नैतिक दृष्टि से समाप्त होगई थी। प्रमाण के लिये दो तीन मिसालें बस होंगीं।

बनारस शहर का जिक्र है कि वहाँ सुपुरिन्टेन्डेन्ट पुलिस ने अपने नौकर को बिना किसी अपराध के मार दिया। उसने सीधे आकर काँग्रेस अदालत में दरख्वास्त दिया। काँग्रेस अदालत ने पुलिस आफिसर के पास हाजिर होने के लिये सम्मन भेजा। उसने आने से इनकार कर दिया। फैसला एक तरफा कर दिया। पुलिस अफसर पर १५) जुर्माना ठोंक दिया। अफसर ने रुपया देने से इनकार कर दिया। अफसर के तमाम नौकरों ने काम करना छोड़ दिया। मजबूरन अफसर ने जुर्माने के १५) अदा किया।

ठीक इसी तरह चौक थाने के थानेदार ने एक मकान का

किराया नहीं अदा किया। मकान छोड़ने से भी इनकार किया। काँग्रेस अदालत में मुकदमा चला और थानेदार को उसका फैसला स्वीकार करना पड़ा। एक आदमी ने बनारस के सरकारी अदालत में इसी पर सत्तर हज़ार रुपये का दावा किया। अदालत में उस आदमी की डिग्री हो गई। हारे हुये आदमी ने काँग्रेस अदालत में अपील की। काँग्रेस अदालत ने दोनों में सुलह करा दिया और सब मामला तय हो गया। इस तरह कीसैकड़ों मिसालें मिल सकती हैं जब कि हजारों रुपये के मुकदमें काँगरेस अदालत ने बिना किसी खर्च के तय करा दिये और दोनों पक्षों को काँगरेस अदालत के फैसले से सन्तोष हुआ।

सबसे अधिक जोर स्वदेशी आन्दोलन ने पकड़ा। विदेशी कपड़ों की होलियाँ जलीं। चरखे का प्रचार तेज़ी से हुये और गाँव गाँव में जुलाहों ने कपड़े बुनना आरम्भ कर दिया। गाँधी राज्य के कर स्वरूप लगभग डेढ़ करोड़ रुपया 'तिलक स्वराज्य फण्ड' के नाम से वसूल हुआ। २० लाख चरखे बन गये। गाँधी जी की आज्ञानुसार, मलमल, चिकन, रेशम, कीमखाब और धूप छाँह का रग उड़ गया और खद्दर और गाढ़े का रंग गाढ़ा और निखर आया। मिल मालिकों को विवश होकर विदेशों का आर्डर पूरा करना बन्द करना पड़ा। इसके फल स्वरूप आज सैकड़ों मिल सिर्फ़ स्वदेशी कपड़ा बनाती हैं।

पुलिस और फौज की नौकरी से वायकाट करना भी जनता का एक अधिकार समझा गया। पुलिस वाले और उनके सैकड़ों अफसरों ने "सरकार ने जनता का विश्वास खो दिया" का

इलज़ाम सरकार पर लगा कर नौकरियों से स्तीफ़ा दे दिया।

धरना देकर और लोगों को समझा बुझाकर नशे की चीज़ों का बायकाट कराया गया। इसके फल स्वरूप धारवार, मातियन, गुन्टूर, चिराला, पेराला, केराला, सीमान्त प्रदेश आदि कतिपय शहरों में सरकार ने जुल्म किया। पुलिस से मुठभेड़ हुई किन्तु कार्य्य में सफलता हुई।

गांधी राज्य-सत्ता

ऐसे ही कुअवसर पर अंग्रेजों की ओर से एक अराजनैतिक बात यह हुई कि उन्होंने प्रिन्स आफ वेल्स, साम्राज्य के भावी सम्राट को भारत में लाने की चेष्टा किया और जान बूझ कर उन्हें अपमानित कराया। कारण कुछ भी हो, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि वह शाहज़ादा जिसका वायकाट भारत ने १९२१ ई० में किया, वह गद्दी का हक़दार होते हुये भी, अकारण ही गद्दी पर बैठे बैठाये गद्दी से उतार दिया गया। महात्मा गाँधी द्वारा बहिष्कृत शाहज़ादा गद्दी पर न बैठ सका। क्या इसमें कुछ दैवी कारण नहीं है? अवश्य है। उनके वायकाट के लिये गाँधी जी कितने लाग में थे यह उनके उस पत्र से सिद्ध होता है जो उन्होंने तात्कालिक वायसराय को लिखा था।

"यदि मैं अकेला रह जाऊँ तो भी भारत में उनका स्वागत न होने दूँगा। यदि मैं प्रिन्स के इस आगमन का स्वागत न करने देने के लिये सारे देश को तैयार न कर सका तो मैं अकेला ही अपने अधिकार की सारी शक्ति के साथ प्रिन्स के आगमन का बहिष्कार करूँगा। यही कारण है जो मैं आपके सामने खड़े होकर इस

धार्मिक युद्ध के लिये पुकार रहा हूँ। लड़ाई की यह प्रेरणा आप को किसी कल्पना मस्त या साधू को ओर से नहीं हो रही है। मैं कल्पना मस्त या मनमौजी होने से इनकार करता हूँ मैं साधुता का दावा नहीं मंजूर करता। मैं आप ही की तरह, नहीं बल्कि आपसे भी अधिक, दुनियावी, दुनियादार और मामूली आदमी हूँ। जितनी कमज़ोरियों के आगे आप झुके हुए हैं, उतना मैं भी हूँ। परन्तु मैं दुनिया देख चुका हूँ। मैं अपनी आँखों को खुला रख कर दुनिया में रहा हूँ। मनुष्य पर जो कठिन से कठिन संकट आये हैं उनकी अग्नि परीक्षाओं में मैं तप चुका हूँ। मैं ऐसे अनुशासन का अनुभव रखता हूँ। मैं अपने पवित्र हिन्दू धर्म का रहस्य जान चुका हूँ। मैंने यह उपदेश सीखा है कि असहयोग केवल साधुओं का ही कर्त्तव्य नहीं है। बल्कि हर एक साधारण नागरिक का भी धर्म है। जो अधिक जानता बूझता नहीं। जो अधिक जानने बूझने की परवाह भी नहीं करता।"

वायकाट का परिणाम

गांधी जी की इतनी चेतावनी के बाद भी अंग्रेज़ों ने हठपूर्वक अपनी सत्ता को पुनर्जीवित करने के लिए महाराज कुमार को भारत लाये और जिस दिन बम्बई में पदार्पण किया, स्वागत तो लेश मात्र न हुआ, उल्टा ४० भारतीयों का बलि चढ़ गया और लगभग ४०० व्यक्ति मरते मरते बचे। परिणाम यह हुआ कि तब से भारत के सम्राट होने के प्रमाण स्वरूप दिल्ली में जो ताज पोशी होती थी वह सदा के लिए बन्द हो गयी और वह शाहजादा तो अधिकारी होते हुये भी गद्दी पर न बैठ सका। घर

के ही लोग उसके विरुद्ध हो गये। अंगरेजी इतिहास में यह एक अनोखी घटना है। जिसमें दैव का हाथ मालूम होता है।

भेद नीति द्वारा दण्ड

अंग्रेजों ने खिलाफ़त का प्रश्न उठाकर भारत के हिन्दू मुसलमानों में एक स्थायी मनमुटाव उत्पन्न करने की एक बहुत गम्भीर नीति सोची थी। किन्तु इसका प्रभाव गांधीजी ने बिल्कुल उल्टा कर दिया। उन्होंने दोनों जातियों को जो संसार में ३६ का अंक— संदैव विमुख रहने वाली— कहे जाते थे, खिलाफ़त के प्रश्न का आश्रय लेकर इनको ६३ का अंक (सदैव सन्मुख रहने वाली) बना दिया। दोनों को एक धार बहा दिया। मुसलमान कुरान और हिन्दू पुरान भूल गया। दोनों की मनोवृत्ति आदर्श और उद्देश्यों में एक्यता स्थापित कर दिया।

इस प्रकार गाँधी जी ने अंगरेजों को साम नीति का उत्तर उनका भण्डा फोड़ करके दिया, उनकी दाम नीति का उत्तर असहयोग से दिया, और उनकी दण्ड नीति का उत्तर लाखों भारतीयों की छाती गोलियों का सामना अहिंसात्मक भाव से खुलवा कर दिया, इनका जेल भारत के भद्रपुरुषों से ठसा ठस भर गया। इसके अतिरिक्त भारतीयों को दण्ड देने के बदले में गाँधी जी ने अँगरेजो के भारत का राज्य ही छीन लिया।

अन्तिम धक्का

गाँधी जी ने भारत में स्वराज्य कायम कर दिया। अंगरेजों की पूरी सत्ता मिटाने के लिये उन्होंने लगान बन्दी का अन्तिम उपाय सोचा। अगर गाँधी जी की नीति के अनुसार लगान बन्दी

का आन्दोलन भारत में सफल हो जाता तो अंगरेजी राज्य सन् १९२२ ही में समाप्त हो जाता और आज भारत का नकशा ही बदल गया होता।

गाँधी जो ने लगान बन्दी के लिये बारदोली ताल्लुका चुना उनकी मंशा यह थी कि सारा भारत इस लगान बन्दी के प्रयोग को देखे। क्योंकि इस काम के करने के लिये वह अकेले ही समर्थ थे। वह तो यह चाहते थे की सारा भारत जो स्वराज्य का इच्छुक था उनकी हिदायतों पर अमल करे और कुछ नहीं। यही कारण था कि उन्होंने बारदोली के अतिरिक्त और कहीं लगान बन्दी आन्दोलन शुरू करने की राय नहीं दी। यह निश्चय हुआ कि बड़े पटेल की अध्यक्षता में सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू किया जाय। बारदोली खास तौर से इसलिए चुना गया कि वहाँ के निवासियों ने काँग्रेस की सारी शर्तों को कुबूल कर लिया था। किन्तु अभाग्य वश चौरा चौरी की घटना हो गई। यहाँ जनता पुलिस से बिगड़ गई, और आपस में मुठभेड़ हो गई पुलिस थाने में आग लगने के कारण २१ कान्स्टेबुल और थानेदार की हत्या होगई।

इधर मद्रास और बम्बई में महाराज कुमार के आगमन के कारण दंगा हो ही चुका था जिसमें ५१ व्यक्ति मरे और लगभग ४० जख्मी हुए थे। देश में हिंसा का वायु मण्डल छा गया था। जन साधारण पर नियंत्रण नहीं रह गया था, कहीं कहीं लूटमार की आवाज़ भी आने लगी थी। गाँधी जी ने आन्दोलन

एक दम रोक दिया। एक दम तेज़ी से चलते हुये इंजन को अचानक रोक देने से जो परिणाम होता है वही फल काँगरेस कैम्प में हुआ। पं. मोती लाल नेहरू, लाला लाजपत राय, डा० मुँजे तथा बाबूहरदयाल नाग, स्वामी सत्यदेव आदि कतिपय नेता नाराज हो गये औरनाराज हुये गाँधोजी से। बस यहीं से अंग्रेजों को अपनो भेद नीति का प्रयोग करने के लिये पृष्ठ भूमि मिल गई। और स्वराज्य का बना बनाया किला अरर धम हो गया।

भारत की असमर्थता

गाँधी जी ने दो साल तक स्वराज्य कायम रक्खा, किन्तु भारत अपने असमर्थता के कारण उस स्वराज्य को कायम न रख सका। नहीं तो विदेशी राज्य का वहीं अन्त था। देश की इस असमर्थता पर और प्राप्त किये हुए स्वतंत्रता के खो जाने पर स्वयं गाँधी जी ने कहा था।

"मैं यह दावे के साथ कहता हूँ कि मेरी शर्तों के अनुसार चले बिना वास्तविक स्वराज का प्राप्त होना बिलकुल असम्भव है। स्वराज्य का अर्थ है कि हम अँग्रेज के मौजूद होते हुये अपने अस्तित्व को बिलकुल अलग कायम रख सकें। और अगर हम तथा अंग्रेजी लोग साथ साथ रहें तो उसी समय तक, जब तक हमारी या उनकी इच्छा साथ साथ रहने की है। जब तक हम अंग्रेज के बराबर न हो जाँय, या होने की भावना न पैदा हो जाय, तब तक स्वराज्य प्राप्त होना असम्भव है। आज हम अनुभव करते हैं कि हम अपनी आन्तरिक रक्षा के लिये, तथा विदेशियों के आक्रमण से अपनी हिफाजत करने के वास्ते अग्रेंज

पर निर्भर हैं। आज हम अनुभव करते हैं कि हिन्दू और मुसलमानों में शस्त्र के जोर से मेल बनाये रखने के लिए, अपनी शिक्षा ये लिये, अपनी प्रत्येक दिन की आवश्यकताओं के लिये, नहीं, नहीं, अपने धार्मिक झगड़ों के निर्णय के लिये भी हम अङ्गरेजों पर निर्भर हैं। राजा लोग अपनी शक्ति के लिये अङ्गरेजों पर निर्भर हैं। करोड़पति अपने धन के लिये अङ्गरेजों पर निर्भर हैं। अङ्गरेज लोग हमारी असहाय अवस्था अच्छी तरह जानते हैं। स्वराज्य का अर्थ है अपनी असहाय अवस्था से छुट्टी पा जाना। एक कहानी मशहूर है कि एक शेर बकरों में पाला गया था। उसके लिये यह असम्भव था कि वह यह अनुभव कर सके कि मैं शेर हूँ। हिन्दोस्तानी भी असहाय अवस्था बराबर अनुभव कर रहे हैं। अङ्गरेजों से इस बात की आशा नहीं की जा सकती कि वे हमें इस असहाय अवस्था से छुटकारा देंगे। इसके प्रतिकूल ये लोग हमको यह बराबर बताते रहेंगे कि क्रमशः शासन की शिक्षा पाने के बाद ही हम स्वराज्य के योग्य हो सकेंगे।"

अंग्रेजों की भेद नीति

भेद नीति की पृष्ठि भूमि सदा से भारत में साम्प्रदायिक निर्वाचन रहा है। असहयोग आन्दोलन के बाद गया काँग्रेसमैनों में फूट ने भेद नीति की पृष्ठि भूमि को और अधिक दृढ़ कर दिया। काँग्रेस के भीतर जो नई शाखायें विभिन्न दल तथा विचार वाले आज दिखाई दे रहे हैं उनके जन्म की पृष्ठिभूमि इसी काल में तैयार

मृत्युञ्जय सुभाष बोस



मौनी राज्य की प्रजा आपके प्रत्यक्ष
दर्शन के लिए बिकल है

हुई थी। अँग्रेजों ने गाँधी जी को गिरफ्तार कर लिया। काँगरेस में पं० मोतीलाल, सी. आर. दास श्री विट्ठल भाई पटेल, श्री निवास आयंगर आदि कतिपय नेताओं ने जिन पर असहयोग आन्दोलन बहुत कुछ निर्भर था, अपना कंधा हटा लिया। देश में चारों तरफ फूट दिखाई पड़ने लगी। स्वराज्य पार्टी का जन्म हुआ, कौंसिल प्रवेश का प्रोग्राम सामने आया। खिलाफत का मामला खतम हो चुका था। अली भाइयों ने अपना चोला बदल दिया। यह युग १९२२ ई० से १९२९ तक कहा जा सकता है।

गाँधी द्वारा भेद का निराकण

सन् १९२२ से १९२९ ई० तक काँग्रेस में बड़ी विभिन्नता थी। और इसके जिम्मेदार दास, नेहरू, पटेल तथा आयंगर थे। और काँग्रेस के बाहर पं० मदनमोहन मालवीय तथा लाला लाजपतराय थे। इस ८ साल के बीच में दास और लाला जी मर चुके थे। पटेल, आयंगर और नेहरू जी अपनी तार्किकबुद्धि से थक कर गांधी जी के शरणार्थी हुये। गाँधी जी ने काँग्रेस की डोर फिर हाथ में लिया। इस बार मोतीलाल नेहरू को काबू में रखने के लिये, पं. जवाहिर लाल नेहरू को, बड़े पटेल को काबू में रखने के लिये, सरदार पटेल को, दास के प्रभाव में रहने वाले बंगाल को काबू में रखने के लिये सुभाष बोस को, आयंगर से प्रभावित्त मद्रास प्रान्त को अपने प्रभाव में लाने के लिये, श्री राजगोपालाचार्य्य को अपनाया। और बिहार के गाँधी राजेन्द्र बाबू तो उनके हाथ में थे ही। प्रान्त के बड़े २ नेताओं का एक गुट्ट बना कर

काँगरेस पर फ़िर कब्जा करके गाँधी जी ने काँगरेस के अन्दर से फूट निकाल कर ऐसा अभेद्य बनाया कि आज तक अंगरेज़ों की भेद नीति उस संस्था में कारगर न हो सकी और न आगे सम्भावना है। गाँधी जी ने भारत को एक राष्ट्रीय इकाई बनाया, विभिन्न सम्प्रदायों को एक सूत्र में बाँधा, और सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन में सामञ्जस्य पैदा किया। हिन्दू सभा और उनके संचालक सब निस्तेज हो गये। नरम दल कहलाने वाले अपने अपने काम धन्धों में लग गये। हिन्दुओं और उनके अन्तर्गत ९ करोड़ अछूतों के बीच मन मुटाव मिटा दिया।

आज भारत की सब जातियाँ हिन्दू, छूत, अछूत, ईसाई, जैन, पारसी, बौद्ध आदि गाँधी जी के अनुयायी हैं। वही सब जातियों के एक मात्र नेता हैं। अब सिर्फ मुसल्मान ही ऐसे हैं जो गाँधी, काँग्रेस अथवा आजादी के विरुद्ध हैं। मुसल्मान जाति अंगरेजों की राजनैतिक शतरंज का वह मुहरा है जो अंगरेजों की मरज़ी के अनुसार कहीं भी, और किसी के भी खिलाफ़ लड़ाया जा सकता है। मुसल्मान सदा से अंगरेजों की भेद नीति के साधन रहे हैं। भारत ने जब कभी भी आजादी के लिए क्रान्ति किया, अंगरेज अब तक इन्हीं मुसल्मानों को, आन्दोलन से अलहदा करके, आन्दोलन के खिलाफ़ खड़ा करके आज़ादी की सब कोशिशें व्यर्थ करते रहे हैं। इस आज़ादी और आजादी के वाधकों के मुस्लिम आन्दोलनों को ४ भाग में विभाजित कर सकते हैं।

सैयद द्वारा भेद

काँगरेस पहिले पहल अद्यार (मद्रास) में सन् १८८५ ई०

में स्थापित किया गया। इसमें एक भी मुसल्मान शामिल नहीं था।

इस समय मुसल्मानों के नेता सर सैयद अहमद ख़ाँ ने इस बात की कोशिश किया कि काँगरेस स्थापित हो न होने पावे। इस संस्था के खिलाफ़ आवाज़ बुलन्द किया कि कोई मुसल्मान इस राजनैतिक संस्था में सम्मिलित न हो। तात्कालिक मुसल्मान उनके इस बात के अनुयायी हो गये और काँगरेस में भाग नहीं लिया। बल्कि मुसल्मानों को अंगरेज़ी शिक्षा प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित किया, जिसके फल स्वरूप अलीगढ़ विश्वविद्यालय की नींव डाली गई। और मुसल्मानों की कुल शक्ति—धन और जन—इस ओर फेर दी।

सर सैयद अहमद खाँ को प्रायः गवरनर जनरल की कौंसिल में निमंत्रित किया जाता था। और यह पब्लिक पालिसी पर बहुत अधिक प्रभाव रखते थे। किन्तु वह राष्ट्रीय आन्दोलन से बचते और मुसल्मानों को बचाते रहे। कांग्रेस के सम्बन्ध में उनकी यह सम्मति थी कि वह देश के लिए हानिकारक और स्वयं उनके लिए अप्रिय है, क्योंकि इससे इनके आचार व्यवहार और मानसिक विकास में रुकावट पैदा होने की आशंका है। और केवल यही आवश्यकतायें इनके समीप महत्व रखती हैं। परन्तु जब काँग्रेस ने अंग्रेज़ी शासन सम्बन्धी आलोचना आरम्भ की और पश्चिमीय स्वतंत्रता के नमूने पर भारत के लिये प्रतिनिधि संस्थाओं की माँग की, उस समय उनका आन्दोलन इसके विरुद्ध और तीव्र होगया। २८ दिसम्बर १८८७ ई० में जब कि कांग्रेस मद्रास में हो रही थी तो सर सैयद अहमद खाँ

मुसल्मानों को बहुमत की हुकूमत की हानियों और राष्ट्रीय आन्दोलन के भयंकर परिणामों से सचेत करते रहे। उन्होंने अपने श्रोताओं से कहा कि वर्त्तमान साम्प्रदायिक खींच तान में मुसल्मान सदा मुसल्मान के लिए राय देंगे, और हिन्दू उम्मीदवार की सहायता करेंगे और चूँकि हिन्दू अधिक हैं इसलिये हिन्दू राज्य कायम हो जायगा। सर सैयद अपने इस सन्देश में पूर्ण रूप से सफल हुए। जिन राष्ट्रीय मतों से उन्होंने मतभेद किया था, उनमें कोई कमी नहीं हुई। इसका फल यह हुआ कि मुसल्मान कांङ्ग्रेस से अलग रहे और पृथक चुनाव पर जोर दिया जाने लगा।

मुस्लिम लीग की संस्थापना

आगा खाँ द्वारा भेद

सन् १९०६ से १९१८ ई० तक राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचल देने के लिये तात्कालिक वायसराय लार्ड कर्जन ने बंगाल को विभाजित कर दिया, जो बंग भंग के नाम से प्रसिद्ध है। इस बंग भंग के विरुद्ध बंगाली हिन्दुओं के अन्दर बहुत क्रोधी भाव पैदा हुए, किन्तु इसी के विरुद्ध मुसलमानों ने इसका स्वागत किया। कांङ्ग्रेस ने इस बँग भँग के बिरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया मुसल्मानों को फिर सरकार की खैरख्वाही तथा कुछ अपने अधिकारों को विस्तृत कराने का अवसर मिल गया। क्योंकि इनके लिए बिल्कुल नई आशायें अंङ्गरेजों ने भीतर ही

भीतर पैदा कर दी थी। मुसल्मानों ने 'अंङ्गरेजी माल वायकाट' में जिसको कांङ्गरेस ने पास किया था—कोई भाग नहीं लिया। बल्कि उसके विरुद्ध उन्होंने हिन्दुओं की नीति पर खेद प्रकट किया। और इसी वजह से मई १९०७ ई० में मेमनसिंह में भयानक साम्प्रदायिक झगड़ा हुआ। और इस दंगे ने हिन्दू जिमीन्दारों और साहूकारों के विरुद्ध मुसल्मान किसानों के विद्रोह का रूप धारण कर लिया। वंग भंग के विरुद्ध कांङ्गरेस के काम में बाधा डालने के लिए ही आगा खाँ साहेब ने नवाब क़ासिम बाजार (वंगाल) की सहायता से मुस्लिम लीग की संस्थापना सन् १९०६ ई० में की।

लीग का उद्देश्य

लीग की संस्थापना के उद्देश्य के विषय में सर स्टेनली अपने १९२७ ई० के इण्डियन ईयर बुक (Indian year Book) में लिखते हैं कि "मुस्लिम लीग १९०६ई० में मुसल्मान जाति के साम्प्रदायिक स्वार्थों को सुरक्षित रखने के लिये जो उस समय के कुल मुसल्मानों की राय थी; स्थापित की गई। और मार्ले मिण्टो रिफार्म में जिस पर उस वक्त विचार हो रहा था। कौंसिल, एसेम्बली, म्युनिस्पिल और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में पृथक चुनाव की माँग रखने के लिये यह लीग कायम की गई। मुसल्मान लोगों ने जो अब तक राजनीति से बाहर थे, लीग कायम किया। लीग का वास्तविक उद्देश्य ब्रिटिश सरकार की खैरख्वाही करनी थी।" इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मुसल्मान लोग तात्कालिक वायसराय की सेवा में वफ़द (Deputation) ले गये, और उनसे प्रार्थना किया

कि यदि इस प्रकार की हुकूमत (प्रतिनिधि संस्था) भारत को दी जावे तो मुसल्मानों की रक्षा विशेष साधनों द्वारा की जावे। उन्होंने पृथक चुनाव की माँग पर बहुत अधिक बल दिया। जिसका अर्थ यह था कि स्थानीय बोर्डों तथा कौंसिलों के लिये अपने प्रतिनिधि स्वयं चुनने का अधिकार मुसल्मानों को दिये जाँय। लार्ड मिण्टो ने इस सिद्धान्त से सहानुभूति प्रगट किया।

इन मांगों तथा अधिकारों के विरुद्ध काँग्रेसी राजनीतिज्ञों ने प्रयत्न किया, परन्तु भारत सरकार, भारत मंत्री, और पार्लियामेंट ने इन्हें उचित स्वीकार किया। १ अप्रेल सन् १९०९ ई० को मि० टी० आर० वकायन भारत के उप-मंत्री ने कहा—

"इसके अतिरिक्त विशेषतया मुसल्मानों को हम पर बहुत ज्यादा अधिकार है। ऐसे लोगों ने जो हमारी ओर से बोलने का पूरा अधिकार रखते हैं, उनसे पक्के वादे किये हैं कि उनको (मुसल्मानों को) उतनी ही मात्रा में उसी प्रकार की नयाबत दी जायगी, जो उनकी इच्छाओं के अनुसार होगी। यह वादा लार्ड मिण्टो ने खास तौर से १९०६ ई० में किया था। और इस वायदे को भारत मंत्री ने इंगलैंड में एक वफद के सामने और अन्य स्थान पर किया था, हम उस वायदे से पीछे नहीं हट सकते, न हमें पीछे हटना चाहिये। न हम पीछे हटेंगे।"

इस प्रकार जो वायदे मुसल्मानों से अंग्रेज़ी अफ़सरों ने बंग भंग आन्दोलन के विरुद्ध अड़ंगा डालने के लिए किया था, स्वीकार किया गया, और सन् १९०९ ई० में मार्ले मिण्टो के

सुधार को जब कानून का रूप दिया गया तो मुसलमानों को इस कानून के अन्दर सन्तुष्ट कर दिया गया।

यह नीति सन् १९१९ ई० के सुधार अर्थात इण्डिया एक्ट के समय तक कामियाब रहा। अंगरेजों की भेद नीति ने स्तम्भ का काम किया। और मुसलमानों का अलहदा चुनाव सन् १९१६ ई० लखनऊ की काँगरेस ने स्वीकार कर लिया। और जो कुछ काँगरेस और मुस्लिम लीग ने लखनऊ पेक्ट से आपस में तै किया वही सब चीज़ सन् १९१९ ई० के इण्डिया एक्ट में शामिल कर दिया गया। काँगरेस की यह पहिली गलती थी जिसके कारण आज तक पृथक निर्वाचन न हटाया जा सका।

गाँधी द्वारा निराकरण

अङ्गरेज़ों की इस भेद नीति का यह प्रभाव पड़ा कि मुसलमानों ने एक पृथक नैतिक संस्था खोली, हिन्दुओं से घृणा करने लगे, और हर बात में सरकार का मुँह जोहने लगे। सरकार अपनी इस नीति में सन् १९१९ तक बिल्कुल कामियाब रही। गाँधी जी राजनैतिक भारतीय रंगमंच पर सन् १९१९ ई० में आए, तब से इनका सब करा कराया भेद नीति निर्मूल हो गया। इन्होंने खिलाफत आन्दोलन अपने हाथ में लिया। हिन्दू मुसल्मानों को नैतिक दृष्टि से एक किया और आदर्श, उद्देश्य में, भी करीब करीब एकता उत्पन्न कर दी। घृणा की जगह पर पारस्परिक प्रेम पैदा करने के लिये मुसलमानों और हिन्दुओं के त्योहारों में एक दूसरे के हृदय से मिलने और सहयोग देने का भाव पैदा किया। मुहर्रम, ईद हिन्दू मनाने लगे, इसके विरुद्ध

मुसल्मान दशहरा मनाने लगे, दोनों अपने २ त्योहारों का महत्व तक भूल गये। खिलाफत कमेटी खोल कर हिन्दू मुसल्मानों में भेद पैदा करने वाली संस्था मुस्लिम लीग को समाप्त कर दिया। सन् १९१९ से १९२३ ई० तक मुस्लिम लीग का नाम ही मिट गया था। सन् १९२३ ई० में मुस्लिम लीग की बैठक मि० भूगुरी की अध्यक्षता में हुई, लेकिन कोरम न पूरा होने की वजह से बरखास्त कर दी गई। अङ्गरेजों ने जिन मुसल्मानों को हिन्दुओं के खिलाफ कर दिया था, गांधी ने उन्हीं मुसल्मानों को अङ्गरेजों का अब खुल्लम खुल्ला शत्रु बना दिया। मुस्लिम लीग ने अपने उद्देश्य में स्वराज्य प्राप्त करना भी शामिल कर लिया। काँगरेस और खिलाफत कमेटी का जिसमें सब मुसल्मान शामिल थे अधिवेशन एक ही जगह, एक ही पण्डाल और एक ही खर्चे से होने लगा।

मस्जिद के समाने बाजा

हसन निज़ामी द्वारा भेद

गांधी जी ने जब १९१९ से सन् १९२२ तक भारत में अस्थायी स्वराज्य स्थापित कर दिया और हिन्दू मुसल्मानों तथा अन्य अल्प संख्यक जातियों ने इसको स्वीकार कर लिया, तो अंग्रेज़ों ने इस अभेद्यता में भेद पैदा करने के लिए ख्वाजा हसन निजामी के द्वारा 'मस्जिद के सामने बाजे' का न सुलझने वाला प्रश्न हिन्दुओं के सामने खड़ा कर दिया। दोनों जातियों में मत-

भेद हुआ। हसन निजामी साहेब ने तनज़ीम और तबलीग का झण्डा ऊँचा कर दिया। हिन्दुओं को मुसल्मान बनाया जाने लगा। मस्जिद के सामने हिन्दुओं को बाजा न बजाने देने के लिए मुसल्मानों ने हिन्दुओं का बध और कत्ल किया। इधर पं. मदन मोहन मालवीय, स्वामी श्रद्धानन्द, तथा लाला लाजपत राय ने हिन्दू सभा खोल कर कांग्रेस का मुकाबिला किया। उसको छिन्न भिन्न कर दिया, और शुद्धि संगठन का बिगुल सारे भारत में बजा दिया। उधर गांधी जी सन् १९२३ से सन् १९२९ ई० तक कांग्रेस से बिल्कुल अलग रहे। सब हिन्दू मुसल्मानों में मार काट मच गई। साम्प्रदायिक समस्या दिन पर दिन उलझती गई। कलकत्ता, दिल्ली, इलाहाबाद आदि में भयानक दंगे हुये। स्वामी श्रद्धानन्द को गोली से किसी मुसल्मान ने मारा। इन सब का एक मात्र कारण था तात्कालिक दोनों जातियों के नेताओं की चुनाव लिप्सा। निष्कर्ष इस सफल नीति से हिन्दू मुसल्मान एक दूसरे के शत्रु हो गए।

गाँधी द्वारा निराकरण

साइमन कमीशन के बायकाट द्वारा उत्पन्न आप ही आप संगठन की परिस्थिति से लाभ उठाकर सन् १९३० में गांधी जी ने अपनी अकर्मण्यता छोड़, जवाहिर, छोटे पटेल और सुभाष बाबू को ले कर एक दम आज़ादी का सूर फूँक दिया। सारा भारत स्तम्भित हो गया। अंगरेज़ खिलवाड़ समझते थे। मुसल्मान अवाक् रह गये। हिन्दू मुस्लिम का झगड़ा, मस्जिद के सामने बाजा का प्रश्न, शुद्धि संगठन, तनजीम, तबलीग, चुनाव का झगड़ा भारत से काफूर

हो गया। अब लड़ाई गांधी और अंग्रेजी सम्राट के बीच प्रत्यक्षी हो गई। गाँधी जी ने झण्डा ऊँचा करके बलिदानों द्वारा, कारागार भोग द्वारा, और फाँसी के तख्तों के द्वारा सारे देश को आजादी के सर्वथा योग्य बना दिया। अब अंग्रेजों ने गांधी जी के कार्य्य और उसके प्रभाव को मिटाने के लिए नये भेद नीति का प्रयोग किया, यह समय सन् १९३० से १९४२ ई० तक कहा जा सकता है।

जिन्ना द्वारा भेद

आज़ादी के मतवाले हाथियों के लिए गोलमेज़ कान्फ्रेन्स का जाल फैलाया गया। सरकार ने अपनी मनमानी भारत के विभिन्न सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों को आमंत्रित करके सन् १९३५ ई० का इण्डिया ऐक्ट बनवाया, जिसके अनुसार हिन्दू और मुसल्मानों का भेद और भी विस्तृत हो गया। इस विधान के अनुसार, वर्मा, हिन्दोस्तान से अलग कर दिया गया। बृटिश हिन्द को ११ सूबों में बाँटा, जिसका विभाजन अवैज्ञानिक ढंग से हुआ। जिसका आधार न तो संस्कृति थी और न भाषा था। संघ के हलके से अलग हो जाने का हक इनको पूरा पूरा है। विदेशी राष्ट्रों से किसी भी प्रकार भारत स्वतंत्र सम्बन्ध नहीं स्थापित कर सकता, साथ ही विरोधी वर्गों, हितों तथा संस्थाओं और देशी नरेशों को आवश्यकता से अधिक मताधिकार देकर केन्द्रीय व्यवस्थापक सभा को लुंज कर दिया गया। इस विधान में साम्प्रदायिकता पर ज़ोर दिया गया।

इधर जिन्ना साहेब ने मरे हुए मुस्लिम लीग को सन् १९२४ ई० में जिन्दा किया और गोलमेज कान्फ्रेन्स की बैठक होते होते, मुसलिम लोग को अंगरेजों की मदद से इतना शक्तिशाली बना लिया कि अपनी १४ शर्तों को पेश करके आज़ादी के काम में पूरा पूरा रोड़ा अटका दिया। गोलमेज् कान्फ्रेन्स में महात्मा गांधी द्वारा कोरा चेक देने पर भी अपने हठ से न हटे और न अन्य मुसलिम नेताओं को हटने दिया, जिसके फल स्वरूप अङ्गरेजों को १९३५ ई० वाले एक्ट को बनाकर दोनों जातियों में स्थायी फूट पैदा कर देने का शुभवसर प्राप्त होगया।

पाकिस्तान

सन् १९४० ई० में लाहौर में जहाँ से गाँधी जी ने आजादी की आवाज् उठाई थी—मि० जिन्ना ने पाकिस्तान की घर फोड़वा आवाज़ एक प्रस्ताव द्वारा उठाया। प्रस्ताव इस प्रकार है—"इस देश में ऐसा कोई विधान कार्य्यान्वित न हो सकेगा, अथवा मुसलमानों को स्वीकार न होगा, जिसमें निम्नलिखित बुनियादी सिद्धान्त भौगोलिक आधार पर आपस में बिल्कुल अविभाज्य इकाइयों के खण्ड बना दिया जाय। जिसका विधान ऐसा हो और जो इस प्रकार के पुनर्वितरण के आधार पर बने हों, जिससे कि जिस क्षेत्रों में मुसलमान संख्या की दृष्टि से बहुमत में हों यानी, भारत के उत्तर पश्चिम और पूर्वी हिस्से—वे आपस में मिलकर स्वतंत्र स्टेट बना सकें। ऐसा राज्य जिसमें शामिल होने वाली इकाइयाँ स्वतन्त्रता और स्वाधीन पूर्ण हों—स्वीकृत न किया गया हो"।

"यह कि, इन इकाइयों के भीतर रहने वाली अल्प संख्यक जातियों को ऐसे संरक्षण दिये जाँय, जिनसे उनके धार्मिक, सांस्कृतिक आर्थिक, राजनैतिक तथा शासन सम्बन्धी अधिकारों और हितों की रक्षा के सम्बन्ध में उनसे राय लेकर प्रबन्ध हो। हिन्दोस्तान के उन हिस्सों में जहाँ मुसलमान अल्प संख्या में हैं, अथवा जहाँ कहीं भी दूसरे अल्पमत वाले रहते हों, उनके लिए विधान में ऐसे काफ़ी, ज़ोरदार आवश्यक संरक्षण हों, जिनसे उनको धार्मिक, सस्कृति, आर्थिक, राजनैतिक शासन सम्बन्धो अधिकारों और हितों की रक्षा उनकी सम्मति से हो"।

मुस्लिम लीग के इसी प्रस्ताव ने समय पाकर आज का "पाकिस्तान" का रूप ले लिया। इस जमाने में पाकिस्तान की आवाज बड़े जोरों से सुनाई पड़ रही है। इस पाकिस्तान की बिवेचना पर अनेक सन्देहात्मक प्रश्न उठते हैं, जिनका वैज्ञानिक और सन्तोष जनक उत्तर जिन्ना साहेब आज तक नहीं दे पाये।

किन्तु यह सब असफलता होते हुये भो मुसलमानों की राजनीति इसी मांग के इर्द गिर्द चक्कर काट रही है। इस आवाज़ के बुलन्द करने के बाद लीग ने मुस्लिम जनता में यह भाव भी फैलाया कि अब मुस्लिम लीग ही भारतीय मुसलमानों की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था है। यह उनकी सारी अभिलाषाओं का प्रतीक है। पाकिस्तान की आवाज़ में अँग्रेजों की भेद नीति रूह बनकर कार्य्य सम्पादित कर रही है। शरीर और उद्योग भले ही मुसलमानों का हो।

गांधी द्वारा निराकरण

गाँधी जी ने मि० जिन्ना को इस अच्छे कार्य्य के लिये 'कायदे आज़म' का खिताब दिया। और बार बार उनको प्रसन्न करने वाली गति और पथ का आश्रय लिया। हिन्दू मुसलमान एकता के सम्बन्ध में गाँधी जी ने अन्त में कहा, "मेरा पक्का विश्वास है कि जब तक तीसरी शक्ति यहाँ रहेगी। एकता सम्भव नहीं। इस तीसरी शक्ति ने हमारे बीच बनावटी फूट डाल दी है। वह इस फूट को पाल पोस रही है। जब तक यह शक्ति यहाँ बनी रहेगी। हिन्दू और मुसलमान इसी की ओर अपनी आँखें लगाये रहेंगे"। इसलिए गाँधी जी ने 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पास कराया, जिसके सम्बन्ध में गाँधी जी खुद कहते हैं "इसकी सुन्दरता और आवश्यकता इसी बात में है कि यह काम फौरन हो। हम दोनों इस समय (सन् १९४२ ई० में) आग की लपटों के बीच हैं। अगर वे चले जाँय तो इस बात की सम्भावना है कि हम दोनों बच जाँय। अगर वे नहीं जाते तो भगवान जाने क्या होगा। हो सकता है कि उनके चले जाने से आपसी एकता कायम हो जाय। यह भी संभव है कि सारे देश में बदअमनी (जैसा कि आजकल है) फैल जाय। यह भी खतरा है कि कोई दूसरी शक्ति इस मौके से लाभ उठावे और रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील हो। फिर भी अँग्रेज शान्तिपूर्वक, स्वेच्छा से चले जाँय तो इससे उनका नैतिक स्वर ही ऊँचा न होगा, उनको एक विशाल राष्ट्र की स्वेच्छापूर्ण सहायता भी प्राप्त हो जायगी।"

"मैं कहा करता था कि मेरा नैतिक समर्थन बिल्कुल अँग्रेज को है। मुझे यह स्वीकार करते हुए दुख होता है कि मेरा मस्तिष्क अब उन्हें वह समर्थन देने को तैयार नहीं है। भारत के प्रति अँग्रेजों के व्यवहार ने मुझे बहुत दुख दिया है। मैं एमरी साहेब की कलाबाजियों के लिये तैयार न था। न स्टैफर्ड क्रिप्स के लिये। मेरे अनुसार इन चीजों ने अँग्रेजों को नैतिक दृष्टि से आपदपूर्ण स्थिति में डाल दिया है।"

गाँधी जी सन् १९४२ ई० से अँगरेजों को भारत छोड़ देने के लिये मजबूर कर रहे हैं। और उनके मुसलमान मुहरों के पाकिस्तान की मांग को व्यवहारिक रूप में निष्प्राण बना रहे हैं।

चर्चिल-गांधी युद्ध

जिस प्रकार गांधी जी अँग्रेजों के शत्रु नहीं हैं, उसी प्रकार आमतौर से अँग्रेज भी इनके शत्रु नहीं हैं। अँङ्गरेजी जाति में अनुदार दल एक ऐसा राजनैतिक दल है जो गांधी जी तथा उनके उद्देश्यों के विरुद्ध है और इस दल के नेता मि० चर्चिल हैं, उस समय उनके सहायक एमरी तथा भारत के बड़े लाट लिनलिथगो। थे जब गाँधी जी ने अँगरेजों के लिये भारत छोड़ो (Quit India) का प्रस्ताव पास कराया, तो चर्चिल साहब ने अपनी पूरी शक्ति के साथ गाँधी जी का विरोध किया। गाँधी जी और उनके हाई कमाँड सब एक ही वक्त में गिरफ्तार कर लिये गये। और सब लोग अज्ञात जगह में रखे गये। ऐसी परिस्थिति से भारत की जनता

व्याकुल होकर अँग्रेजों के विरुद्ध बिना नेता के विद्रोह कर दिया, जिसको सन् १९४२ का बलवा कहा जाता है। भारतीय जनता में तरह तरह की अफवाह फैलने लगी। लोगों का ऐसा दृढ़ विश्वास होगया कि काँगरेस के बड़े २ नेता या तो मार डाले जायेंगे या समुद्र पार भेज दिये जाँयगे जहाँ से उनका लौटना कभी न होगा। नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार सारे भारत में बिजली की तरह फैल गया।

९ अगस्त को गाँधी जी के साथ ही देश के सारे नेता पकड़ लिए गए। काँगरेस हाउस पर पुलिस का अधिकार हो गया। सभी जगहों के फोन काट दिये गये। ग्वालिया टैंक पर एकत्रित दो लाख जनता पर लाठियों, गोलियों और आँसू-गैस का प्रयोग किया गया। फौरन ही बम्बई शहर में श्रीमती कस्तूरबा, तथा कुमारी मृदुला सारा भाई (कांगरेस की वर्त्तमान प्रधान मंत्राणी) पर पुलिस की सख्ती से हल चल मचगई। बस, ट्राम फूँक दिये गये। डाकखाने जला दिये गये। स्टेशन फूँका गया। पुलिस का मुकाबिला आमने सामने किया गया।

बम्बई में ऐसी दशा होते ही, शीघ्र ही, यू. पी, बिहार, बंगाल, मद्रास और मध्य प्रान्त में भी विद्रोह की आग भड़क उठी। सिन्ध, आसाम और उड़ीसा भी इससे अछूता न बचा। विद्रोह शहरों की हद को पार करके सुदूर देहातों में फैल गया। आन्दोलन के दो प्रोग्राम खास थे। (१) थाने, रेलवें, स्कूलों कचहरियों, अस्पतालों आदि पर झण्डा फहराना (२) जहाँ

कहीं भी अवसर मिले अधिकारियों को अशक्त करना, शासन व्यवस्था बन्द करने का प्रयत्न करना, स्वयं पंचायती शासन की व्यवस्था करना आदि। बलिया तो भारत में सबसे आगे था, वहाँ तो कई दिनों तक स्वराज्य की अमलदारी थी। जेल और कचहरियों पर अधिकार कर लिया गया। गाज़ीपुर, आजमगढ़ बनारस, जौनपुर इलाहाबाद आदि में ऐसा ही हुआ। इस आन्दोलन में विद्यार्थियों ने प्रमुख भाग लिया। दस दिन तक अंग्रेजी राज्य भारत से काफूर हो गया था, उसकी पुलिस और फौज इस आन्दोलन का मुकाबिला करने के लिए असमर्थ सिद्ध हुई।

दमन का आश्रय

अंगरेज़ों ने दमन की चक्की ज़ोर से चलानी शुरू की। एमरी और लिनलिथगो ने तो भारतीय जनता पर बाघ की तरह हमला किया। जिस प्रकार हमला हुआ, कट्टरता, नृशंसता और कायरता के साथ दमन किया गया, उन सबका वर्णन असम्भव है। बम्बई, गुजरात में, बंगाल (कौटाई, बेलूर घाट) में गोलियों की वर्षा की गई। महाकोशल, विहार, यू. पी. में आदमी पेड़ों से लटकाकर मारे गये। कोड़ों से पीटे गये। स्त्रियों के गहने छीने गये और उन पर बलात्कार हुआ। बच्चों की टाँगे चीरी गईं। लोगों को हर प्रकार से अपमानित किया गया। किन्तु जनता ने जो विशेषतायें दिखलाईं वह किसी भी देश को गर्व तथा प्रशंसा का पात्र बना सकता है। अगस्त आन्दोलन दिसम्बर सन् १९४२

में प्रायः समाप्त हो गया। देश की आर्थिक दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई थी।

गांधी द्वारा निराकरण

सन् १९४२ ई० में जनता ने पहिली बार उठकर अंगरेजों का मुकाबिला किया। इस बार सत्याग्रह और अहिंसा का मार्ग छोड़ कर जनता ने रेल, तार आदि हुकूमत के साधनों को निरर्थक कर दिया। बृटिश शासन के प्रति विद्वेष और प्रतिशोध की भावना चरम सीमा तक पहुंच गई। सरकार को निश्चय हो गया कि भारत अब सदा के लिये हाथ से निकल चुका। गाँधी जी ने सरकार के सारे प्रयत्न एक ही दाँव में विफल कर दिया। अचानक ९ फर्वरी को जेल ही में २१ दिन का उपवास शुरू कर दिया। सारे भारत को यह जान कर कि गांधी जी. जवाहिर लाल जी आदि प्रभृति नेता भारत के ही जेल में सुरक्षित हैं. बहुत खुशी हुई। किन्तु उपवास की खबर के साथ २ उदासी भी छागई। क्योंकि गांधी जी का अमूल्य जीवन खतरे में था। तेरहवें दिन गाँधी जी की दशा शोचनीय हो गई। डाक्टरों तथा नेताओं ने उनके जीवन से हाथ धो लेने का निश्चय प्रगट कर दिया। किन्तु गाँधी जी जीवित रह गये और उपवास की पूरी पूरी अवधि कुशल मंगल से बीत गई।

२३ सितम्बर १९४२ ई० को गाँधी जी ने एक पत्र सरकार को लिखा कि "लगता है कि तमाम नेताओं की गिरफ्तारी के कारण जनता गुस्से से पागल हो गई है। यहां तक कि उसका आत्म-नियंत्रण भी छूट गया है। मैं समझता हूँ कि जो कुछ

बिनाशकारी कार्य्य हो रहा है, इसके लिए कांगरेस नहीं सरकार जिम्मेदार है।

"मेरे अनुसार सही रास्ता सिर्फ यह है कि सरकार सभी कांगरेस नेताओं को फौरन रिहा कर दे। सब दमनकारी कानूनों को वापिस ले ले। और समझौते के रास्ते ढूँढ निकाले। बेशक सरकार के पास इतनी शक्ति है कि हिंसात्मक कार्य्यों को फौरन दबा सकती है। दमन से असन्तोष और घृणा का ही सृजन हो सकता है।"

जेल से गांधी जी का यह पत्र, प्रार्थना नहीं, आज्ञा थी। इसी पत्र के अक्षर २ का पालन सरकार को करना पड़ा और इस पत्र का प्रभाव यह भी हुआ कि जो लोग तोड़ फोड़ आन्दोलन चलाने के लिये कॉङ्गरेस का नाम इस्तेमाल कर रहे थे, उनके लिये ऐसा करना असम्भव सा होगया। साथ ही आन्दोलन के नाम पर जो तरह तरह के अनाचारी कार्य्य, चोरी, डाके आदि देश में हो रहे थे, उनमें कमी आने लगी, क्योंकि जनता के सामने भी कॉङ्गरेस की नीति का सही सही रूप रेखा आने लगा।

सरकार ने मजबूर होकर सब नेताओं को बिना शर्त रिहा कर दिया। जनता ने छुटे हुये नेताओं का शाही स्वागत किया। अब सरकार भी धुरी राष्ट्र के नाशकारी युद्ध से सुरक्षित बच कर निकल आई। सरकार के जीत का श्रेय केवल चर्चिल को ही है। इस युद्ध के बाद चर्चिल को सारे संसार में पुज जाना चाहिए था, क्योंकि दुर्दान्त हिटलर और अजेय मुसोलिनी और

टोजो को पराजित किया था। असम्भव को सम्भव कर दिखाया था। किन्तु बंगाल में जान बूझकर चर्चिल सरकार तथा मुस्लिम लीगी मंत्रियों ने लगभग ३० लाख निरोह प्राणियों को भूख की क्षुधा से तड़पा कर मारा था। उसके पाप और गांधी के शाप ने चर्चिल को सारे संसार में निस्तेज कर दिया। यही क्यों, अपने घर इंगलैंड में ही जो दस दिन पहिले त्राता तथा संकटमोचन कहलाते थे, अपमानित हुये और अपने साथ इगलैंड के अनुदार दल को सदा के लिये पार्लियामेंन्ट से अधिकार युक्त सत्ता विहीन किया। उनकी जगह मि० एटली प्रधान मंत्री हुए और अनुदार दल की जगह मजदूर दल पार्लियामेंन्ट का सर्वेसर्वा हो गया। जो गांधी जी के मत के कमोवेश कद्रदान हैं।

समझौते का वातावरण

भारतीय अभिलाषाओं के बाधक चर्चिल महाशय और उनके हमदर्द मि० जिन्ना थे। दोनों व्यक्ति अब निस्तेज हो चुके थे इसलिये समझौते का वातावरण अपने आप तैयार हो गया। गाँधी जी ६ मई १९४४ को रिहा कर दिए गये। गाँधी जी ने कहा है कि "सरकार ने जिस धागे को सन् १९४२ में तोड़ दिया, वहीं से मुझे फिर शुरू करना है। मुझे अब सत्याग्रह आन्दोलन नहीं चलाना है। मुझे देश को सन् १९४२ तक वापस नहीं ले जाना है। इतिहास की पुनरावृत्ति कभी नहीं हो

सकती। काँग्रेस मुझे अधिकार न दे तो भी जनता में मेरा इतना असर है कि मैं आन्दोलन शुरू कर सकता हूँ। लेकिन ऐसा करने से ब्रिटिश हुकूमत की परेशानी ही बढ़ेगी। इसलिये मैं ऐसा करना नहीं चाहता"। गाँधी जी के इन शब्दों में अधिक गम्भीरता थी। अङ्गरेजों ने समझा कि गाँधी जी के द्वारा भविष्य में पहिले से अधिक भयानक आँधी आने वाली है।

नौकर शाही की सहायता तथा उसके परोक्ष समर्थन से मुस्लिम लीग गत ४० बरसों से भारतीय जनता में साम्प्रदायिकता का विष बोने तथा भारतीय स्वाधीनता के मार्ग में रोड़े अटकाने का अनवरत प्रयत्न करती रही। लीग अङ्गरेजों की कुटिल इच्छा की पूर्ति में बहुत बड़ी सहायक रही। किन्तु द्वितीय महाभारत युद्ध के बाद ब्रिटेन ने यह महसूस किया कि जब तक उसे अपने उपनिवेशों का सक्रिय सहयोग नहीं प्राप्त होता तब तक विश्व के महान राष्ट्रों की पंक्ति में अपना स्थान बनाए रखना तो दूर रहा स्वयं आत्म रक्षा भी उसके लिये मुश्किल हो जायगी। इसीलिए उसने उपनिवेशों से समझौते की वार्ता प्रारम्भ की। चूँकि भारत ब्रिटेन का सबसे बड़ा उपनिवेश एवं उसकी शक्ति का सबसे बड़ा स्रोत है। इसलिये भारतीय समस्या का समाधान उसने सर्व प्रथम आवश्यक कार्य समझा। इसलिये केबिनट मिशन भारत में सुलह के लिये आया। पार्लियामेन्ट की ओर से घोषित किया गया कि ब्रिटिश केबिनट भारत की राजनैतिक खिंच समाप्त करने के लिए भेजा जा रहा है। देश में चुनाव हुआ। भारत के दो प्रधान राजनैतिक

दलों—काँगरेस और मुस्लिम लीग की पूरी विजय हुई। देश की अन्य सब पार्टियाँ चुनाव में ही लत गर्द गईं। अब देश में दो पार्टी रह गई। (१) कांग्रेस जो देश से अंग्रेजों को हटा कर आजाद करना चाहता है। और जिसमें देश की सब पार्टियाँ, जातियाँ उपजातियाँ शामिल है। दूसरे मुस्लिम लीग जिसमें सिर्फ पुराने ढंग के खैरख्वाह मुसल्मान ही शामिल हैं। सब मुसल्मान भी नहीं, जिनका केवल ध्येय भारत में अंगरेजी राज्य कायम रखना ही है। गाँधी जी के लिये लड़ाई का मार्ग सुगम हो गया। क्योंकि आजादो के शत्रु अब इतने स्पष्ट हो गये थे कि जन साधारण अब उनका नंगा चित्र देख सकती थी।

इस सिलसिले में ब्रिटेन ने यह भी अनुभव किया कि सयुक्त और शक्तिशाली भारत उसके लिये जितना उपयोगी हो सकता है उतना उपयोगी विभाजित, शक्तिहीन और घरेलू झगड़ों में उलझा हुआ भारत कदापि नहीं। इसीलिये उसे पाकिस्तान और हिन्दोस्तान में भारत के विभाजन के लिये मुस्लिम लीग की मांग अस्वीकार करने के लिये बाध्य होना पड़ा। इस प्रकार, जो ब्रिटेन अपने स्वार्थों के वशीभूत होकर सदा मुस्लिम लीग की ग़लत माँगों का समर्थन करता था और उसे अनुचित बढ़ावा देता था, उसी ब्रिटेन ने फिर अपने स्वार्थों के कारण ही मुस्लिम लीग की घोर उपेक्षा की और लीग की करारी कौटिनीतिक पराजय हुई।

———

गांधी जी ने क्या किया

इस प्रश्न का एक सीधा सा उत्तर है अवतार जो कुछ करने आता है वही गाँधी जी ने अब तक किया। वह कोई नई चीज़ करने नहीं आये हैं और न किया। वह स्वयं कहते हैं "मैं कोई नया सिद्धान्त लेकर नहीं आया हूँ। हमारे देश में प्राचीन काल से जो संस्कृति चली आई है उसी का संशुद्ध और परिवर्धित स्वरूप जनता में फैला देखना चाहता हूँ। जो चीज हमारे पास परम्परा से आई है और जो कल तक जीवित थी उसी को मैं फिर से संजीवन करना चाहता हूँ। जो सिद्धान्त व्यक्ति गत जीवन में और कौटुम्बिक जीवन में पाले जाते हैं उन्हीं का व्यवहार राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जीवन में भी किया जाय और उसी में हमारा श्रेय है। यही मैं कहता आया हूँ। इसके अतिरिक्त अपने भावी कार्य्य के लिये कहते हैं "मेरे बिचारों का विस्तार पूरा पूरा मैं स्वयं भी नहीं जानता हूँ। जीवन में मेरे सत्य के प्रयोग नित्य नये नये चलते ही रहते हैं। और सत्यनारायण का नया नया दर्शन मैं करता ही जाता हूँ।" इनके इन शब्दों से उनके भूत वर्त्तमान और भविष्य कार्य्य का सूक्ष्म किन्तु स्पष्ट दर्शन हो जाता है।

अवतार का सर्व प्रथम कार्य्य है पतितोद्धार, उसको गाँधी जी ने सहस्रों पतित नर-नारियों का उद्धार करके आज भारत का अगुआ बना दिया है। पतित किसानों मजदूरों, कुलियों का सामूहिक उद्धार करके उन्हें अच्छी परिस्थिति में कर दिया है।

सारे विश्व के पतितों का एक ही उद्योग द्वारा उद्धार करने के लिये विश्व के सर्वश्रेष्ठ साम्राज्यवादी शाहंशाह के विरुद्ध तुमुल युद्ध छेड़ दिया है, जिसके साम, दाम, दण्ड और भेद नीति के तीन भाग को अब तक निरर्थक सिद्ध कर दिया है। भेद नीति का चतुर्थांश शेष रह गया, जो विपक्षी और उसके साथी अपने कलकत्ते तथा नोआखाली और उसके प्रतिक्रिया स्वरूप देश के अन्य भागों में आज के हत्या काण्ड द्वारा पाप करके स्वयं विनाश के पथ पर हैं। दूसरा कार्य्य है विगड़ी बनाना। इसके अन्तर्गत उन्होंने विगड़े हुये हिन्दू, हिन्दी, हिन्दोस्तान को संजीवनी बूटी देकर जीवित कर दिया। भविष्य में उसके उन्नति का रास्ता साफ दिखला दिया। हिन्दी भाषा आज इतनी प्रगतिशील हो गई है कि वर्त्तमान समय में भी वह विश्व के किसी साहित्य से बहुत पीछे नहीं है। केवल कमी है इस बात की यह भाषा अभी स्टेट भाषा स्वीकार नहीं हुई है। जिस दिन ऐसा हो जायगा जिसकी नींव पड़ गई है उसी दिन यह विश्व भाषा हो जायगी। हिन्दोस्तान, यह आजादी के प्रवेश द्वार पर हैं। मंत्रित्व के स्थायीपद तक पहुंचा चुका है। अब सिर्फ नाम मात्र का वैधानिक ताज की कमी रह गई है। हिन्दू जाति के सड़न को नष्ट कर दिया और नव करोड़ अछूतों को जो सदा से इस राष्ट्र के इकाई बनने में बाधक थे हिन्दू राष्ट्र के सूत्र में पिरो कर एक कर दिया। हिन्दू जाति की पाचक शक्ति जो लगभग पाँच हजार बरसों से नष्ट हो चुकी थी, नोआखाली काण्ड के बाद ही ऐसा मंत्र पढ़ा दिया कि पाचन शक्ति एक

दम पूर्वास्था की भाँति तेज हो गई। गाँधी जी ने केवल इतना ही कहा कि हिन्दू जो आपदकाल में जबरदस्ती विधर्मी हो गया हो उसको फिर से हिन्दू बना लेने में कोई भी धर्म अथवा धर्म शास्त्र बाधा उपस्थित नहीं कर सकते। इतना कहते ही सनातन धर्म के खंभा महामना मालवीय जी जो अछूतोद्धार आदि कारणों से कांगरेस से अब तक दूर फटके फिरते थे, और गाँधी जी के विचारों से अधिकांश सहमत नहीं थे सब से पहिले हाँ में हाँ मिलाया, बल्कि इससे भी आगे चले गये और कहा कि विधर्मी हिन्दू बनाया जा सकता है। यह शब्द मालवीय जी के स्वर्गारोहण समय के शब्द हैं जिसमें अब कोई संशोधन और परिवर्त्तन नहीं हो सकता। सनातन धर्म शिरमौर जगद्गुरु शंकराचार्य्य ने मालवीय जी का सर्वाङ्गीण समर्थन किया। काशी के अडिग सनातनी विद्वद् तथा पण्डित मण्डली ने तो जल्दी में, कि वे इस कार्य्य में पिछलगुआ न कहे जाँय, कह डाला कि विधर्मी को हिन्दू बनाने में अब केवल राम नाम का मंत्र ही यथेष्ट है। बंगाल के कट्टर सनातनी पण्डित शिरोमणि तथा आचार विचार के आचार्य्य, दक्षिणी मद्रासी, महाराष्ट्र पण्डितों ने भी खुले शब्दों में समर्थन कर दिया। अब धार्मिक नैतिक सामाजिक अथवा व्यक्ति गत किसी भी दृष्टि से हिन्दू जाति अगर बढ़ती नहीं तो अब घटती भी नहीं, यह ध्रुव निश्चय है।

तीसरी बात है अमरराष्ट्र की कमी को पूरा करना। अमरराष्ट्र में चार गुण—ज्ञान, बल, धन और सेवा होते हैं, तीन गुणों से

युक्त तो वर्त्तमान समय अङ्गरेजी राष्ट्र है ही। इसीलिये गाँधी जी अङ्गरेजी राष्ट्र के न तो विरोधी हैं और न शत्रु। क्योंकि तीन गुणों से युक्त एक जाति में चौथा गुण सेवा आसानी से जोड़ कर पूर्ण कर दिया जा सकता है। वह चाहते हैं कि अङ्गरेज जाति जिनमें ज्ञान, बल, और धन तीन गुण पहिले से मौजूद हैं, अपने तीन गुणों को सेवा से सम्बन्धित कर दें तो काम सरल हो जाय, अर्थात अपने ज्ञान से प्रलाप छोड़ कर सेवा करें, बल से पर पोड़न छोड़ कर विश्व की सेवार्थ उपयोग करें, धन से मद न करके उसे विश्व के लाभार्थ उपयोग करें। बस फिर यही जाति भविष्य का अमर राष्ट्र बन जाय और संसार में रामराज्य हो जाय किन्तु आज तक की इनकी गति प्रगति से यह प्रमाणित होता है कि ये इस गुण को हृदय से कुसंस्कार वश अपना न सकेंगे। इसलिए भारत में सेवा के प्रतीक शूद्र जाति को गाँधी जी सब से आगे बढ़ा रहे हैं।

अवतार का तीसरा कार्य्य है राम राज्य स्थापित करना तथा ऐसे राज्य के संस्थापन में बाधा डालने वालों का दमन करना। राम राज्य का अर्थ है शासन की ओर से प्रजा के लिए नमक, लकड़ी, न्याय, औषधि और शिक्षा का उपयोग मुफ्त होना। गाँधी जी ने सन् १९२० के अपने असहयोग आन्दोलन से ही यह कार्य्य आरम्भ कर दिया था। उसी समय नमक मुफ्त कराने के लिए नमक कानून को भंग किया, लकड़ी मुफ्त करने के लिए जंगलात के कानून को भग किया। न्याय मुफ्त करने के लिए वकालत छुड़वाई, कचेहरी वायकाट कराया, इसके स्थान पर

खानगी पंचायत स्थापित करने की आज्ञा दी जहाँ निशुल्क फैसला होता रहा। औषधि मुफ्त कराने के लिए डाक्टरों को डाक्टरी छोड़ने की आज्ञा दी और उनकी जगह देशी औषधि के प्रयोग का उपाय बताया। विद्यार्थियों को अंग्रेजी स्कूल, कालेजों को त्याग देने की आज्ञा दी और उसकी जगह मुफ्त शिक्षा देने के लिए राष्ट्रीय विद्यालयों तथा विद्यापीठों की स्थापना कराई। राम राज्य संस्थापनार्थ इन्होंने पहिले इसकी बुनियाद डाल दी थी। और आज जब राष्ट्रीय सरकार केन्द्र तथा प्रान्तों में स्थापित हो गई है तो सर्व प्रथम कार्य्य इन पाँचों मदों से सरकारी अधिकार और कर उठा लेने की व्यवहारिक स्कीम बनाई जा रही है। जो निकट भविष्य में पूर्णतः सफल हो जायगी।

राम राज्य संस्थापना के बाधक साम्राज्यवादी हैं। जिन्हें इन्हीं पांचों मुहक्मों से अधिक कर मिलता है। उनका भी दमन गाँधी जी ने पूर्ण रूपेण कर दिया है। उनकी साम नीति, दाम नीति, दण्डनीति को वर्तमान समय में असफल कर दिया। भेद नीति के अन्तिम चरण पर युद्ध हो रहा है। वह भी निकट भविष्य में सफल होगा। भेद नीति के इस अन्तिम चरण के अगुआ मि० चर्चिल और उसके भारतीय एजेन्ट मि० जिन्ना हैं। दोनों व्यक्ति और उनके अनुयायी अनुदार दल तथा मुस्लिम लीगर्स, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक क्षेत्र में निस्तेज अथवा तेजहीन हो गए हैं। उनका आदरयुक्त कोई स्थान उस क्षेत्र में नहीं रह गया है। उन पर चतुर्मुखी फटकार तथा लानत मलामत हो

रही है। इसके अतिरिक्त उनके दल में स्वयं भेद प्रस्फुटित हो गया है। मुस्लिम लीग का पूरा पूरा, निर्भीक मुकाबिला पग पग पर नेशनलिस्ट मुस्लिम स्वयं कर रहे हैं। इतना ही क्यों आज तो स्वयं मि० जिन्ना के खिलाफ बुद्धिमान मुस्लिम लीगर्स हो रहे हैं, बंगाल प्रान्तीय लीग के प्रेसीडेन्ट, मद्रास, मध्य प्रान्त तथा विहार के लीग अध्यक्ष जिन्ना साहेब को फटकार रहे हैं, बल्कि धीरे धीरे लीग से अलग हो रहे हैं। मि० चर्चिल तो जिन्ना साहेब से भी पहिले तेजहीन हो चुके हैं। वे तो ब्रिटेन के मजदूर दल द्वारा पहिले ही पराजित हो चुके हैं। चर्चिल दल के बड़े हाकिम—गवरनर, और इडियन सिविल सर्विस के नौकर जो भारत में रह गये हैं वही उनकी भेद नीति के अन्तिम आधार हैं। जो अब आज कल जिन्ना का नाम आगे रख कर स्वयं हिन्दू मुसलमानों को लड़ा रहे हैं। ताकि भविष्य में बैठने वाली बैधानिक सम्मेलन असफल हो जाय किन्तु गांधी जी द्वारा यह भी चाल असफल सिद्ध होगी।

पुण्य की क्षीणता

जब कंस का उपद्रव ब्रज में असहनीय हो गया, तो वहाँ के निवासियों ने महर्षि नारद से प्रार्थना किया कि महाराज अब कंस का उपद्रव और उद्दण्डता इतनी असहनीय हो गई है कि अगर इसका जल्दी ही नाश नहीं होता तो ब्रजभूमि के निवासी अकुला कर जमुना में डूब मरेंगे। नारद जी ने उत्तर दिया। चाहे वह जितना भी घोर अत्याचार करे, किन्तु उसका सर्वनाश नहीं हो सकता, क्योंकि उसका पुण्य अभी इतना अधिक है कि इतना पाप

उसके सर्वनाश के लिए काफ़ी नहीं है। और यह अभी सौ साल तक ऐसा ही विना विरोध कर सकता है। कर्मानुसार फल देने वाले भगवान भी इसके बाधक नहीं हो सकते। ब्रज निवासी यह सुनकर व्याकुल हो गए और नारद जी से गिड़गिड़ा कर प्रार्थना करने लगे कि महाराज इसका अब जल्दी ही कोई उपाय कीजिए। कोमल हृदय नारद जी ने झट एक उपाय सोचा और दूसरे दिन कंस के दरबार में पधारे, जहाँ उनका बहुत ही आवभगत हुआ। नारद जी ने कंस से कहा कि राजन् मैं आपका सदा से हित-चिन्तक रहा हूँ। किन्तु कल आपकी कुण्डली देखने से यह पता चला कि आपकी मृत्यु अति निकट है। और मृत्यु भी आपकी बहिन देवकी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र से होगा। शत्रु के हृदय में शंका उत्पन्न हो गई। नारद जी की राजनीति सफल रही। कंस ने नारद के जाते ही बन्दीगणों को आज्ञा दिया कि बसुदेव, देवकी (बहिन बहनदोई) तुरन्त कारागार में रखे जाँय और जितने लड़के हों, वे गर्भ में आते ही मुझे सूचित किया जाय। उसकी आज्ञा का अक्षरशः पालन हुआ। सात लड़कों की निर्मम हत्या पत्थर पर पटक कर की गई। बहिन बहनोई के करागार कष्ट का पाप, भ्रूण हत्या, बाल हत्या, और वह भी सगे भाँजे की हत्याओं के घोर पाप ने उसके शेष सब पुण्यों को जल्दी ही क्षीण कर दिया और विष्णु भगवान स्वयं अवतरित होकर उसका नाश किया।

दो सितम्बर १९४६ को साढ़े ग्यारह बजे दिन जब गांधी जी के अडिग भक्त पंडित जवाहिर लाल की अध्यक्षता में अस्थायी सरकार केन्द्र में स्थापित हुई। पूर्व अनुभव के आधार पर इन

दोनों व्यक्तियों को ऐसी सरकार की स्थापना की कोई उम्मीद नहीं थी। किन्तु अन्त में स्थापित होकर ही रही। दोनों महानुभावों ने व्याकुल हो कर हाय मारा। मि० चर्चिल ने यह सोचा कि "हाय सोने की चिड़िया भारत हाथ से निकल गई।" अभी गत मास अक्टूबर में मि० चर्चिल ने अपने ब्लेक पूल वाले स्पीच में कहा है। "हमारी कल की विजय और सेवायें जिसके वगैर मानवीय जाति की आजादी नहीं रह सकती थी लोग भूल गये। और कल हम लोग खुद जान बूझकर उस आश्चर्य्य जनक और विशाल साम्राज्य से अपने आप को महरूम कर लेंगे, जिसको कि हम लोग हिन्दोस्तान में अपने २०० साल के बलिदान और उद्योग से बनाया था। और जिन्ना ने सोचा कि हाय मेरी जगह नेहरू प्रधान मंत्री हुए। दोनों ने इस व्याकुलता में उतावले होकर कलकत्ता और नोआ खाली का 'न भूतो न भविष्यति' का बेमिसाल प्रलय कारी हत्या काण्ड जान बूझ कर करा दिया। १८ नवम्बर सन् १९४६ ई० के अपने प्रार्थना समय के नोआखाली के व्याख्यान में गांधी जी ने कहा कि एक मुसल्मान बहिन जो इस भाग के बड़े बड़े मुसल्मानों, से बराबर मिलती फिरती है (नोआखाली काण्ड के सम्बन्ध में) कहा कि यहाँ के मुसल्मान खुल्लम खुल्ला कहते हैं कि वे लोग जब तक मुसिल्म लीग का हुक्म न मिलेगा तब तक वे हिन्दुओं के मित्र बनने का वादा नहीं कर सकते और न गांधी जी की सभाओं में हाज़िर हो सकते हैं"। जिन्ना ने कराया भी कहाँ ? अपने घर बंगाल में कराया। किससे ? अपने ही दाहिने हाथ से। यह पाप इनके हाथों इतना भीषण हुआ कि अब उसका सारा पुण्य क्षीण हो गया।

जिसके फल स्वरूप वे सोचते कुछ और हैं और हो जाता है कुछ और। करना चाहते हैं कुछ और, किन्तु उसका फल हो जाता है कुछ और। तीन धक्का खाने के बाद लीग अस्थायी सरकार में नेहरू जी की अध्यक्षता में शामिल हुई। जिन्ना साहेब तब भी उसके बाहर हो रह गए। और अब आगे कोई उम्मीद नहीं। अस्थायी सरकार में लीग, मुसल्मानों के लिए पांच सीट चाहती थी, गांधी जी पांच की जगह छ सीट दे रहे थे, न लिया। और अब पांच की जगह चार ही मुसल्मान अस्थायी सरकार में शामिल हुए। पांचवीं सीट की जगह अछूत लेकर गए। जिसका स्वागत गाँधी जी से अधिक कोई कर ही नहीं सकता। क्योंकि अछूत किसी भी मत अथवा सिद्धान्त का या उनका शत्रु ही क्यों न हो, उनके लिए वह जवाहिर से भी अधिक प्रिय है। जिन्ना साहेब की इस कूटनीति से गाँधी जी की इच्छाओं को ही लाभ हुआ। इस प्रकार से गाँधी जी ने भारत को २ सितम्बर सन् १९:६ ई० के मंत्रित्व पद तक पहुँचाया।

गांधी का मौनी राज्य

भारतीय शास्त्रों तथा अन्य कई धार्मिक ग्रन्थों में ऐसी भविष्य वाणी लिखी है कि "तेरह टोपी गोरण्ड राज्य के बाद मौनी राज्य भारत में होगा जो अस्सी साल तक रहेगा।" यह मौनी राज्य गाँधी जी द्वारा स्थापित होगया है जिसका श्री गणेश

दो सितम्बर को हुआ। मौनी राज्य का अर्थ है। जिसके शासक राजकीय आडम्बर, तड़क भड़क, शान शौकत, तख्त गद्दी, बड़ी बड़ी मूँछ तथा पगड़ी वाले नौकरशाही से रहित हों। इस राज्य में पुलिस, न्यायालय, शासन विभाग के अन्य रोब दाब दिखलाने वाले विभाग न हों। किन्तु सब सुखी हों, निरामय हों, सब श्रेय को देखें यही उसका लक्ष्य हो, और व्यवहारिक रूप से प्रजा उसका उपयोग करे। आदि काल में ब्राह्मणों ने राज्य किया, तत्पश्चात क्षत्रियों ने राज्य किया, और आज कल भारत में वैश्य राज्य चल रहा है, जिसका अन्त भी हो रहा है। अब भविष्य में शूद्र राज्य होगा। यही सनातन नियम है। और यही शूद्र राज्य ही मौनी राज्य है। शूद्र का अर्थ है सेवक। अब भविष्य में सेवकों का राज्य होगा। शासन के प्रत्येक विभाग में सब कार्य्य सेवा से होगा। गाँधी जी सेवा के अवतार और शूद्रों के सरदार हैं।

गाँधी जी कहते हैं "जो बात मैं करना चाहता हूँ और जो करके मरना चाहता हूँ वह यह है कि सत्य और अहिंसा को संगठित करूँ। अगर वे सब क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं हैं तो वे झूठ हैं। मैं कहता हूँ कि जीवन की जितनी विभूतियाँ हैं सब में अहिंसा का उपयोग है।"

मौनी राज्य का शासक

इस राज्य का शासक ऐसा ही होगा जिसका नमूना गाँधी जी स्वयं बन कर दिखला रहे हैं। सेवा, न्याय, स्वतंत्रता, भ्रातृभाव और सहकारिता मौनी राज्य के सुदृढ़ स्तम्भ हैं। किन्तु इन सबसे अधिक उसके शासक का बलिदान और त्याग है। गांधी जी राजाओं की भांति ऐशमहल, और पैलेस में नहीं रहते। न कोच गद्दे के सहारे सोते हैं। और न सुख-प्रद भोजन ही करते हैं। उन्होंने तो इन सभों के विरुद्ध संसार की सभी भौतिक पदार्थों पर लात मार दी है। प्रजा को सुखी देखने व बनाने के लिये अपने आप को भिखारी बना लिया। देश का सबसे कठिन कार्य्य करते हैं और उसके फल स्वरूप समाज का एक पाव बकरी का दूध तथा कुछ थोड़ा शन्तरा का रस पीते है। बल्कि दूसरे का कम होते देख अपना भाग भी त्याग देते है। सारा वैभव उनके चरणों पर होते हुये भी सारा मुल्क, सारी भौतिक सामग्री प्रजा के लाभाथ छोड़ दिया है। उनको भंगी टोले की झोंपड़ी ही राजप्रसाद है। कमर में खद्दर का एक टुकड़ा ही उनका राज-चिन्ह है। ईश्वर में रत रहना और सारे संसार के प्राणी मात्र की शुभ कामना ही उनके जीवन की मूल आकांक्षा है। इनके राज्य में भय बिलकुल नहीं है। एक भंगी से लेकर राजा तक उनसे समान रूप से मिल सकता है। वे प्रजा के शासक नहीं सेवक हैं। गाँधी राज्य ही मौनी राज्य है क्योंकि—

(१) वह महीने में चार दिन बिल्कुल मौन रहते हैं। और अन्य दिनों में भी वह उतना ही बोलते हैं जो परमावश्यक है, और वही उनकी आज्ञा है। (२) कांग्रेस संस्था के चार आने के भी मेम्बर नहीं हैं, किन्तु शासक उसके सोलह आने हैं। जिसको भी इशारा कर देते हैं वह उस संस्था का प्रेसीडेन्ट निर्विरोध हो जाता है। और जिसको सेवक नहीं पाते उसे निकाल भी देते हैं, जिसका विरोध कोई नहीं कर सकता। (३) गाँधी जी "कल क्या करेंगे" इसको उनका मूँछ तक नहीं जान पाता, इतर प्राणी की तो कोई गणना ही नहीं, है। राजमुकुट वह दूसरे को पहिनाते हैं, और जिसको जब चाहें पहिना सकते हैं, किन्तु अन्दर से शासन नीति का सूत्र उन्हीं के हाथों में रहता है। आज कल की अस्थायी सरकार इस नीति का ज्वलन्त प्रमाण है।

शासन शक्ति

जो कुछ गाँधी जी धीरे से भी कह देते हैं, वही सब को करना पड़ता है। अभी कल की बात है, नोआखाली जहाँ के प्रलयकारी राक्षसों के उपद्रव को देख कर कोई भी जाने का साहस नहीं करता था, वहाँ वह निर्भीक पहुँच कर पैदल घर घर जाँच कर रहे हैं। और उपद्रव बिना किसी शस्त्र प्रयोग के एक दम बन्द हो गया। नोआखाली के प्रतिक्रिया स्वरूप विहार प्रान्त इतना बिगड़ा हुआ था कि तोप और बन्दूक उसको दबा नहीं सकती थी। किन्तु उपवास की धमकी दिया और सब शान्त हो गया। उन्होंने कहा कि वह हिन्दू जो जबरदस्ती विधर्मी

बनाया गया हो अथवा स्त्री जिसके साथ जबरन बलात्कार किया गया हो, फिर से हिन्दू बना लेने में कोई धर्म अथवा धर्मशास्त्र अड़चन नहीं डाल सकता। यह कहते ही बड़े २ कट्टर सनातन धर्मी, राजा, योगी पण्डित पुजारी सब के सब यही राग अलापने लगे। संक्षेप में यही मौनी राज्य की शासन शक्ति है।

मौनी प्रजा

इस राज्य में धन-वितरण की वर्त्तमान विषमता न होगी। कोई भूखा, नंगा न रहेगा, कोई बेकार न होगा। सब की शक्तियाँ समाज के न्याय पूर्ण उत्थान और हित में लगी होंगी। न्याय, शिक्षा, औषधि नमक और लकड़ी मुफ्त होगी। बहुमत अल्पमत की स्वतंत्रता की अपनी ही स्वतंत्रता की तरह रक्षा करेगा। इसमें समत्व का भाव रहेगा, प्रत्येक समर्थ व्यक्ति के लिये शारीरिक श्रम अनिवार्य होगा। कोई बैठे निठल्ले न खा सकेगा। मनुष्य के आचरण पर राज्य की ओर से कम-से-कम नियंत्रण होगा। मनुष्य की श्रेष्ठ वृत्तियों को उभरने और विकसित होने का मौका दिया जायगा। लोग दण्ड भय से नहीं, दूसरे के हित से अपने हित का सम्बन्ध है, इसे समझते हुए एक दूसरे के प्रति, समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे। देश का ज्ञान, प्रजा की सेवा करेगा, बल, प्रजा की रक्षा करेगा, धन, देश की सेवा में लगेगा। सेवा, चूँकि सर्वाङ्गीण सेवा करेगा, इसीलिये वह देश का शासक होगा। गाँधी द्वारा स्थापित शूद्र राज्य ही शास्त्रों में वर्णित मौनी राज्य है।

अन्तिम कठिनाई

गाँधी जी और साम्राज्यवादी अंग्रेजी राज्य के बीच युद्ध अभी चल ही रहा है। अंग्रेजों की नीतियों का पूरा पूरा निराकरण गाँधी जी ने किया। अंग्रेजों के साम, दाम, और दण्ड नोति को सम्पूर्णतः असफल बना दिया। भेद नीतिं के अन्तर्गत तीन चरण को समाप्त किया। सैयद द्वारा हिन्दुओं के प्रति घृणा का भाव, आगा खाँ द्वारा साम्प्रदायिक निर्वाचन की नीव, हसन निज़ामी द्वारा मस्जिद के सामने बाजा का प्रश्न, जिन्ना द्वारा पाकिस्तान ये सभी आज समाप्त हो गये हैं। नीति छोड़ अंग्रेज़ लोग अब अनीति करने लगे। कलकत्ते और नोआखाली का प्रलयकारी धन, जन, मान मर्य्यादा नाश का ताण्डव नृत्य किया। गांधी जी ने बड़े धैर्य्य से सहन किया। नोआखाली प्रस्थान किया, आज वह हिन्दू मुसल्मानों के साम्प्रदायि झगड़े की जड़ ही समूल नष्ट कर रहे हैं। गाँधी जी ऐसे उपाय कर रहे हैं कि शायद भविष्य में इन दोनों जातियों के बीच ऐसा भीषण हत्या काण्ड न हो सकेगा यों तो जब तक कुरान और पुरान भारत में मौजूद है, टिन्न युन्न होता ही रहेगा। किन्तु इसका लेश मात्र भी असर देश की भावी राजनीति, या नव्य राष्ट्र निर्माण पर नहीं पड़ेगा। गाँधी जी के जाते ही सुहरावर्दी साहेब जिनके द्वारा कलकत्ता और नोआखाली काण्ड कराया गया था, अब उनके राग का अलाप ही उल्टा हो गया है। उन्होंने १९ नवम्बर सन् १९४६ को पूर्वीय बंगाल में राम-गँज के मुस्लिमलीग की मीटिंग में बोलते हुए मुसल्मानों से कहा।

"अब इस क्षेत्र में (नोआखाली) आपसी विश्वास वापस

आ रहा है, किन्तु और अधिक विश्वास के लिये अधिक उपायों की आवश्यकता है। मुसल्मानों को चाहिए कि वे हिन्दू भाइयों को इस बात का विश्वास दिलावें कि हिन्दू लोग जो धर्म भी चाहें मानं। हिन्दुओं को मुसल्मान बनाने का कार्य्य भी घृणित है, जो कि मुसल्मानी धर्म के विरुद्ध है। जहाँ पर स्त्रियों के साथ बला-त्कार किया गया है वहां इसके लिए पूरी पूरी चारा जोई करनी होगी। अगर किसो ने कोई हिन्दू स्त्री को जबरन रोक रखा हो अथवा छिपा रखा हो, सब उसके आदमियों को वापस कर दें। और इसके अतिरिक्त प्रत्येक गांव के मुखिया लोग प्रत्येक हिन्दू की इज्जत और संरक्षण की जिम्मेदारी लें।" अब यह बोली उस व्यक्ति की है जिसके प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष इशारे से यह सब हुआ था । और बंगाल प्रान्त में कॉंग्रेम के साथ मिलकर संयुक्त मंत्रित्व के पक्ष में हो रहे हैं। विहार प्रान्त में जहां मुसल्मानों के प्रति हिन्दुओं ने ऐसा ही किया था वहाँ गाँधी जो की आज्ञा की ऐसी सदभावना फैल गई है कि हिन्दू मुसलमानों के ही रक्षक हो रहे हे। जैसा कि १९ नवम्बर के एक उदाहरण से प्रकट होता है। (लीडर २२ नवम्बर १९४६)

"पश्चिमी यू. पी. में जब, कि मार काट, लूट मार, और आतशजंनी का प्रलयकारी कार्य्य हो रहा था। तो मुसलमान के कई आदमियों की एक गृहस्थी और कुछ मुसल्मानों ने एक हिन्दू घर में पनाह लिया । किन्तु मुसल्मान लोग बराबर भय खाते रहे कि कहीं ये लोग हमें मार न डालें । इस बात पर घर का मालिक दो बन्दूक लाया। एक बन्दूक मुसल्मान को देते

हुए कहा कि "एक तो मेरे इस्तेमाल के लिए है जो तुम्हारी रक्षा के लिए चलाऊँगा। और दूसरा तुम्हारे लिए है कि अगर मेरी नियत खराब हो जाये तो तुम्हें मेरे ऊपर चलानी होगी।" इससे वहाँ बड़ी सदभावना फैल गई है।

अंग्रेज़ी पार्लियामेंन्ट में गिनने के लिए चाहे कितने भी मेम्बर हों किन्तु साम्राज्य के किसी भाग को हाथ से निकलते देखकर सब एक इकाई की भाँति काम करते हैं। भारत अब उनके हाथ से निकल जा चुका है। केवल एक साल की कसर है। अर्थात वैधानिक समिति के समाप्ति तक। मेरे विचार से ऐसी सम्भावना है कि मि० चर्चिल अभी निकट भविष्य में फिर इंगलैंड के प्रधान मंत्री होंगे। जिसका श्रीगणेश १५ नवम्बर से हो गया है। मज़दूर दल के कुछ मेम्बर बिगड़े हुए हैं, हालाँकि एटली साहेब ने बड़ी कड़ाई से अपने दल के फूट को दबा रखा है, किन्तु वह अन्त में दबा न पा सकेंगे और तब भारतके जिन्ना साहेब और चर्चिल साहेब फिर ज़ोर लगाएँगे। राजनैतिक परिस्थिति यह बतलाती है कि जब तक पैलेस्टाइन का युद्ध रूस और अँग्रेज़ों के बीच छिड़ जायगा। जिसके कारण अँग्रेज़ों को भारत स्वतंत्र कर देना पड़ेगा। और शायद उसी समय मृत्युंजय सुभाष बोस प्रकट हो जाँयगे। अगर वह जिन्दा हैं। नेताजी बोस के विषय में फिर लिखूँगा अगर भगवान ने ऐसा ही अवसर प्रदान किया

—२० नवम्बर १९४६